Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132

Supported by:
Ksaan Helpline
+91-7415538151

मध्य भारत कृषक भारती

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com

ISSN-2582-5976

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

वर्ष-19 अंक-08 ग्वालियर, नवम्बर -2024 मूल्य 30 रुपए

कृषि वैज्ञानिकों की देश के किसानों से आग्रह-डीएपी खाद का कम करें उपयोग

एनपीके खाद से खेती में आएगा बदलाव

एनपीके (NPK) उर्वरक में नाईट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम तीनों जरूरी पोषक तत्व होते हैं। यह दानेदार उर्वरक होता है। किसान डीएपी के स्थान पर एनपीके खाद का भी उपयोग कर सकतें हैं। यह मिट्टी में पोषक तत्वों को बढ़ाने में बेहतर काम करती है। आपको बता दें, डीएपी खाद को डाइअमोनियम फॉस्फेट के नाम से जाना जाता है। डीएपी खाद का इस्तेमाल किसान द्वारा किसी फसल के बुवाई के समय किया जाता है, जो खेत के उर्वरक शक्ति को बढ़ाने में काम आता है। इसमें 18% नाईट्रोजन और 46% फास्फोरस होता है, साथ ही इस 18% नाईट्रोजन में 15.5% अमोनियम नाईट्रेट और 46% फास्फोरस में 39.5% फास्फोरस पानी में घुलनशील होता है।

उर्वरकों की कोई कमी नहीं : कृषि मंत्री कंषाना

किसान कल्याण एवं कृषि विकास मंत्री एदल सिंह कंषाना ने कहा कि मध्यप्रदेश में उर्वरकों की कोई कमी नहीं है। राज्य सरकार ने खरीफ में किसानों को आवश्यक मात्रा में उर्वरक उपलब्ध कराया है और रबी में भी इसी प्रकार से किसानों की आवश्यकतानुसार उर्वरक उपलब्ध कराएंगे। किसानों को उर्वरकों की कमी नहीं आने दी जाएगी। कृषि मंत्री कंषाना भोपाल में श्यामला हिल्स स्थित अपने निवास पर मीडिया से बातचीत कर रहे थे। उन्होंने कहा कि फसलों के लिये नाईट्रोजन, फास्फोरस और पोटास की आवश्यकता होती है। डीएपी से नाइट्रोजन एवं फास्फोरस की ही पूर्ति हो पाती है, जबकि एनपीके के उपयोग से नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश तीनों तत्वों की पूर्ति हो जाती है। इसलिये किसानों को कृषि वैज्ञानिकों द्वारा डीएपी के स्थान पर एनपीके के उपयोग की सलाह दी जा रही है।

श्री गणेशाय नमः

श्री सॉवलिया सेठ

किसान कृषि सेवा केन्द्र

Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com

7692967419 9109726855

हमारी सेवाएँ:-

सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौंफ, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर,कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।

कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।

उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।

स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company

कृषि दर्शन®

खेत-खलिहान का राजा

से भारतीय किसानों की सेवा में... 1988

थ्रेशर 35HP हापर मॉडल

हडम्बा कटर थ्रेशर

ऑटोफीडिंग थ्रेशर

मक्का थ्रेशर

मिनी कम्बाईन थ्रेशर

रेज बेड सिड ड्रील

स्प्रे पंप 500 लि. गन बूम मॉडल

मोटर लिफ्टर

सुदर्शन इण्डस्ट्रीज

विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882

वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

नई योजनाओं से किसानों की किस्मत में सुधार की उम्मीद

बढ़ती आबादी के मद्देनजर खाद्य सुरक्षा सरकार के सामने एक बड़ी चुनौती है। जलवायु परिवर्तन का प्रतिकूल प्रभाव सबसे अधिक खेती-किसानी पर देखा जा रहा है। हर वर्ष अन्न उत्पादन बढ़ाने की राह में मुश्किलें बढ़ रही हैं।

ऐसे में कृषि क्षेत्र को प्रोत्साहन की दरकार महसूस की जाती रही है। केंद्रीय मंत्रिमंडल की कृषि क्षेत्र के लिए एक लाख करोड़ रुपए से अधिक की दो नई परियोजनाओं को मंजूरी मिलने से स्वाभाविक ही इस क्षेत्र में कुछ बेहतरी की उम्मीद जगी है। टिकाऊ खेती को बढ़ावा देने के मकसद से सरकार ने प्रधानमंत्री राष्ट्रीय कृषि विकास योजना और कृषोन्नति योजना नामक दो नई योजनाएं शुरू की हैं।

सरकारी दावों के बरक्स जमीनी हकीकत कुछ अलग है। स्थिति यह है कि खेती लंबे समय से घाटे का उद्यम बन चुकी है। बहुत सारे क्षेत्रों में सिंचाई की उचित सुविधा उपलब्ध नहीं है। वहां किसानों की मानसून पर निर्भरता है। फिर, खेती में लागत काफी बढ़ गई है। बीज, उर्वरक और कीटनाशकों आदि की कीमतें बहुत सारे किसानों की पहुंच से बाहर हो चुकी हैं। फसलों के उचित दाम नहीं मिल पाते। लागत और लाभ में काफी अंतर है। कुछ फसलें लागत से भी कम कीमत पर बेचनी पड़ती हैं।

सरकार हर वर्ष न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा तो करती है, मगर उस कीमत पर भी अनाज बाजार में नहीं बिक पाता। बिचौलिए उससे काफी कम कीमत पर फसल खरीदते हैं। नगदी फसल उगाने वाले किसानों को अक्सर अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कभी मौसम की मार से फसलें चौपट हो जाती हैं, तो कभी बाजार में उतार और मांग कम होने के कारण उन्हें औने-पौने दाम पर फसल बेचनी पड़ती है। हर वर्ष किसानों को प्रतिरोध में फसलें सड़कों पर फेंकते देखा जाता है। इस स्थिति से पार पाने में ये योजनाएं कितनी सफल होंगी, यही उनकी कसौटी होगी।

अंतराष्ट्रीय सहकारी वर्ष–2025

सहकारिता की महिमा लिखी है, ऋग्वेद अथर्ववेद में।
इसमें सब कुछ दिखता है, इंन्द्रधनुषी रंगों के भेद में।।
प्रगति की पौ बारह होगी 2025 में, सहकारिता अपनाओं।
विश्व में मनाया जा रहा सहकारी वर्ष, आप भी मनाओ।।
भारत के गांवों में विश्व का सबसे
बड़ा सहकारी नेटवर्क।
जन आंदोलन यह, जो मिटा रहा,
अमीरी गरीबी का फर्क।।
समानता और खुशहाली के लिए,
सहकारिता
अपनाओ।
विश्व में मनाया जा
रहा सहकारी वर्ष,
आप भी मनाओ।।

प्रो. (डॉ.) भागचन्द्र जैन
उपाध्यक्ष, राष्ट्रीय कृषि पत्रकार संघ
(नाज) 20 महावीर नगर, पोस्ट-रविग्राम, रायपुर-492001 (छत्तीसगढ़)

अनेकता में एकता से शोभित है प्यारा हमारा भारत देश।
सब एक के लिए एक सबके लिए, में सहकारिता अपनाओ।।
यत्र-तत्र सर्वत्र विकास के लिए सहकारिता अपनाओ।
विश्व में मनाया जा रहा सहकारी वर्ष, आप भी मनाओ।।
कृषि, दुग्ध, सिंचाई, आवास आदि में इसका सहारा ।
साख से साख यह बढ़ाये, बने बचत का आधारा ।।
विश्व व्यापीकरण के इस दौर में सहकारिता अपनाओ।
विश्व में मनाया जा रहा सहकारी वर्ष, आप भी मनाओ।।
सर्व सम्पन्न हो दुनिया सारी, प्रगति है वरदान सहकारी।
सहकारी पथ पर बढ़ते जाओ, हर क्षेत्र में सफलता पाओ।।
घर में, शहर में गांव - गांव में, आप सहकारिता अपनाओ।
विश्व में मनाया जा रहा सहकारी वर्ष, आप भी मनाओ।।

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063

***

नरसिंहपुर (म.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली (म.प्र.)
भगवानदास चौबे
96854-88453

बलिया (उ.प्र.)
आर.एन. चौबे-94535-77732

पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678

***

हापुड़ (उ.प्र.)
मयंक गौड़: 83848-66823

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 22 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 23 से 28 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है। –संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
94251-01132 0751-4070802
▪ वार्षिक ₹ 500 ▪ द्विवार्षिक ₹ 950
▪ पंचवार्षिक ₹ 2000

▪ वर्ष 19 ▪ अंक 08 ग्वालियर, नवम्बर 2024 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक

राजू गुर्जर (MJC)

94251-01132

94245-22090

❖

प्रसार/मार्केटिंग टीम

डी.के. बरार

91791-85002, 70247-93010

महेश अहिरवार: 94251-48365

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया
कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन
महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
केविके दतिया, राजमाता विजयाराजे
सिंधिया कृषि वि.वि. ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण),
डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले
विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा
उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार
कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि
विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. योगेन्द्र कौशिक (प्रगतिशील कृषक)
ग्राम अजडावदा जिला उज्जैन (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
***
तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और
कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि
और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस
हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542
***
डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन
महाविद्यालय, महू, (म.प्र.)

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- एचआई-1650 ओजस्वी गेहूँ वैरायटी 08
- कृषि में केवल 'उपज' नहीं हो सकता एकमात्र मानक' 12
- सरसों की उन्नत खेती 13
- बछड़े का प्रबंधन 14
- एंथ्रेक्स-पशुओं की एक घातक बीमारी 15
- केला के तना छेदक कीट का परिचय एवं प्रबंधन 16
- मध्य भारत के लिए रबी की फसल: गेहूँ 17
- एंटीबायोटिक प्रतिरोध: एक वैश्विक चिंता 18
- कुत्तों में डिस्टेम्पर रोग: एक गंभीर संक्रामक बीमारी 19
- केंचुआ खाद का महत्व... 20
- प्राकृतिक खेती: कम लागत, बिना कर्ज, बिना जहर 21

उत्तर प्रदेश

- अनानास के कीट, रोग, शारीरिक विकार और खरपतवार प्रबंधन 22
- सूचना प्रौद्योगिकी और कृषि विस्तार:... 23
- पराली प्रबंधन में 'बेलर' की उपयोगिता 24
- पर्यावरण के अनुकूल एवं पौष्टिक गुणों से भरपूर 'दालें' 25
- फसल अवशेष प्रबन्धन क्यों और कैसे? 26
- न्यूट्रीगार्डन: पोषण और स्वास्थ्य के लिए कदम 27
- सुरक्षित अनाजों का भंडारण एवं सावधानियां 28
- परंपरा भी, जरूरत भी प्राकृतिक खेती... 29
- कार्बन खेती: ... 30

राजस्थान

- भारतीय दर्शन में वृक्ष का महत्व 31
- बैंगन भारत में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण फसल 32
- पानी के अधिकार और सिंचाई कानून:... 33
- सहजन है एक औषधीय पेड़ 34
- तिलहन की फसलों में सरसों का महत्व 35

उत्तराखण्ड

- हिमाचल प्रदेश की पहाड़ियों में प्राकृतिक खेती:... 36

हरियाणा

- कीटनाशकों का घरेलू पशुओं पर हानिकारक प्रभाव,.. 37
- आर्थिक दृष्टिकोण से हरियाणा में वर्मी कंपोस्ट के लाभ 38
- 'पशु क्लोनिंग: भविष्य की कृषि और पशुपालन की दिशा' 39
- एग्रोनोमिक्स से खेती में नवाचार:... 40
- बेर फ्रूट कैंडी: स्वास्थ्य और स्वाद का अनोखा मेल 41

हिमाचल प्रदेश

- केल: पोषण और स्वास्थ्य लाभ 42
- सब्जियों के उत्पादन पर जलवायु के प्रभाव 43

महाराष्ट्र

- संदूर संवेदन प्रौद्योगिकी का कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान 44

बिहार

- बिहार के वन: जैव विविधता... 45
- गर्भवती गायों और भैंसों का वैज्ञानिक आहार 46
- खेत में कुशलता से काम करने के लिए बेलर की देखभाल.. 47
- बछड़ों में हाइपोमैग्नेसिमिया 48
- हे: दुधारू पशुओं के लिए वर्ष भर हरे चारे का उत्तम विकल्प 49

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

राष्ट्रीय जैविक स्ट्रैस प्रबंधन संस्थान ने 13वां स्थापना दिवस मनाया

रायपुर। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के रायपुर स्थित राष्ट्रीय जैविक स्ट्रैस प्रबंधन संस्थान ने अपना 13वां स्थापना दिवस मनाया । इस अवसर पर मुख्य अतिथि डॉ गिरीश चंदेल, कुलपति, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर ने अपने व्याख्यान भविष्य की कृषि पर बोलते हुए बाजार की जरूरत के मुताबिक कृषि अनुसंधान की आवश्यकता एवं उद्योगों की आवश्यकता के अनुसार कृषि शिक्षा को बढ़ावा देने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि हरित क्रांति के समय में फसलों की उपज बढ़ाने पर जोर दिया गया, परंतु अब फसलों में गुणवत्ता एवं पोषण पर अनुसंधान किया जा रहा है और इसी का परिणाम है कि जैव संवर्धित किस्मों का विकास हुआ है। उन्होंने धान की फसल में जिंक एवं प्रोटीन से संपन्न विश्वविद्यालय की विकसित किस्मों के बारे में बताया। डॉ चंदेल ने कृषि में एआई के उपयोग एवं इलेक्ट्रॉनिक डाटा अधिकृत करने के के बारे में भी जानकारी दी। कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि डॉ आरआरबी सिंह कुलपति, कामधेनु विश्वविद्यालय दुर्ग ने संस्थान में किये जा रहे अनुसंधानों की प्रशंसा की एवं भविष्य में संस्थान के साथ मिलकर नई परियोजनाओं पर कार्य करने का सुझाव दिया। डॉ सिंह ने विद्यार्थियों को अधिक से अधिक शिक्षा एवं अनुसंधान का लाभ लेने पर जोर दिया । कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि भारतीय तिलहन अनुसंधान संस्थान हैदराबाद के निदेशक डॉ रवि कुमार माथुर ने स्थापना दिवस पर बधाई देते हुए भविष्य में विभिन्न संस्थाओं से अनुसंधान समझौता कर मूलभूत अनुसंधान को आगे बढ़ाने की आवश्यकता बताई। संस्थान के निदेशक डॉ प्रोबीर कुमार घोष ने विगत वर्ष में किया गए विभिन्न कार्यों एवं उपलब्धियां की जानकारी दी एवं किसानों के लिए विभिन्न परियोजनाओं में किये जा रहे कार्यों एवं

उनके प्रभाव को विस्तार से बताया। इस अवसर पर संस्थान के वैज्ञानिकों एवं अधिकारियों को सराहनीय कार्य के लिए पुरस्कृत किया गया एवं संस्थान के तीन प्रकाशनों का भी विमोचन किया गया। साथ ही कृषक महिला श्रीमती ममता रात्रे एवं सप्तऋषि राय को प्रगतिशील कृषक के रूप में सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में कृषक वैज्ञानिक संवाद का आयोजन भी किया गया जिसमे किसानों को इस समय धान में आ रहे कीट व रोग प्रबंधन की जानकारी दी गयी। कार्यक्रम का संचालन संयुक्त निदेशक डॉ. पंकज शर्मा ने किया । कार्यक्रम में बीएसएनएल के महाप्रबंधक, कृषि विश्वविधालय के अनुसंधान निदेशक, संस्थान प्रबंधन समिति के द्वारकेश पाण्डेय सहित लगभग 250 किसानो व अन्य लोगों ने भाग लिया।

निकरा परियोजना अंतर्गत बीज वितरण एवं प्रशिक्षण

रतलाम। कृषि विज्ञान केंद्र जावरा रतलाम अंतर्गत संचालित जलवायु समुत्थान कृषि में राष्ट्रीय नवप्रवर्तन (निकरा परियोजना) अंतर्गत किसानों को रबी फसलों का बीज चना, गेहूं, अलसी और सरसों आदि वितरित किया गया। इस प्रशिक्षण और वितरण कार्यक्रम का उद्घाटन कृषि विज्ञान केन्द्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख डॉ. सर्वेश त्रिपाठी के द्वारा किया गया।

साथ ही उन्होंने किसानों को रबी फसलों की बुवाई से पहले प्रमुख सावधानियों के बारे में जानकारी प्रदान करते हुए बताया कि किसान भाई कैसे बीज बोने से पहले बीजों का उपचार करें जिससे उनमें लगने वाली मृदा जनित बीमारियों से बचाव हो सकें और कम पानी में भी किसान अच्छी पैदावार ले सकें। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान एस.सी.-एस.पी. प्लान के तहत अनुसूचित जाति के कृषको को गेहूँ और चना के साथ सब्जी की किट का भी वितरण किया गया। इस कार्यक्रम के दौरान 58 कृषक/महिला कृषक की भागीदारी रहीं। प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान को.-पी.आई. डॉ. सुशील कुमार, डॉ. ज्ञानेन्द्र प्रताप तिवारी एवं यंग प्रोफेशनल-1 आदित्य प्रताप राठौर उपस्थित रहे।

आम के संकलन पुस्तिका का दीक्षांत समारोह में विमोचन

रीवा। कृषि महाविद्यालय रीवा के अखिल भारतीय समन्वित फल अनुसंधान परियोजना, फल अनुसंधान केन्द्र रीवा के वैज्ञानिकों डॉ टीके सिंह, डॉ. अखिलेश कुमार, सुधीर कुमार सिंह एवं डॉ. एसके त्रिपाठी द्वारा लिखित पुस्तिका में आम की विभिन्न प्रजातियों का सचित्र वर्णन किया गया है जिसमें प्रमुख रूप से रीवा में लगाई जाने वाली आम की फसलें हैं जिसका विमोचन जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर के 17वें दीक्षांत समारोह में किया गया। इस आम की संकलित पुस्तिका का विमोचन लखन सिंह पटेल, राज्य मंत्री, कुलपति डॉ. प्रमोद कुमार मिश्रा, संकाय प्रमुख कृषि डॉ. डी.के. खरे, संकाय प्रमुख उद्यान डॉ एसके पांडेय द्वारा किया गया। इस अवसर पर अधिष्ठाता रीवा डॉ एसके त्रिपाठी, डॉ. टी.के. सिंह उपस्थित थे।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

केले की खेती का रीवा में संभावना : डॉ. राजेश

रीवा। कृषि महाविद्यालय रीवा के अधिष्ठाता डॉ. एसके त्रिपाठी के मार्गदर्शन एवं डॉ. एके पांडेय प्रमुख कृषि विज्ञान केन्द्र रीवा के निर्देशन में ग्राम खजुआ में केन्द्र के उद्यान वैज्ञानिक डॉ. राजेश सिंह एवं पौध सरंक्षण वैज्ञानिक डॉ. अखिलेश कुमार ने कृषक रमेश पटेल द्वारा केले की गई खेती का अवलोकन किया गया। पिछले कई वर्षों से श्री पटेल द्वारा केले की खेती की जा रही है जिससे उन्हें एक एकड़ में लगभग साढ़े तीन लाख का फायदा हो रहा है। केन्द्र के वैज्ञानिक डॉ. राजेश सिंह के मार्गदर्शन में केले की खेती की जा रही है जिन्होंने बताया कि रीवा जिले केले को 15 जुलाई से लेकर 15 अगस्त तक लगाना चाहिए जिसका कुल पेड़ एक एकड़ में 1135 लगाया जाता है। साथ ही जल निकासी का उचित प्रबंधन करना चाहिए। जैविक पदार्थों का अधिक प्रयोग करने से केले की गुणवत्ता बढ़ती है। डॉ. कुमार ने पौध सरंक्षण पर जानकारी दी। गांव के अन्य प्रगति शील किसान दुर्गा शंकर मिश्रा एवं रामशरण पटेल उपस्थित रहे।

महिलाओं एवं किशोरी बालिकाओं का हीमोग्लोबिन परीक्षण शिविर

मुरैना। कृषि विज्ञान केन्द्र, मुरैना द्वारा न्यूट्री स्मार्ट विलेज के अन्तर्गत अंगीकृत ग्राम रपट का पुरा में महिलाओं एवं किशोरी बालिकाओं का हीमोग्लोबिन परीक्षण शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में उप स्वास्थ्य केन्द्र सिरमिती से ANM श्रीमती ओमवती सेमिल और MPW संजीव श्रीवास्तव एवं आंगनवाडी कार्यकर्ता उपस्थित रहे। कृषि विज्ञान केन्द्र, मुरैना के वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख डॉ. प्रशांत कुमार गुप्ता, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी श्रीमती अर्चना खरे मुख्य रूप से उपस्थित थे। कार्यक्रम में ग्राम रपट का पुरा की 30-40 महिलाओं एवं किशोरी बालिकाओं के हीमोग्लोबिन का परीक्षण किया गया। कार्यक्रम के दौरान डॉ. गुप्ता ने बताया कि हरे पत्तेदार सब्जियों को अपने भोजन में शामिल करके हम अपने हीमोग्लोबिन को बढा सकते हैं और एनिमिया जैसी बीमारी से बचा जा सकता है। कार्यक्रम प्रभारी श्रीमती अर्चना खरे ने बताया कि अपने घर, अपने घर के आसपास खाली जगह पर गृह वाटिका या पोषण वाटिका लगाकर जैविक (बिना रासायनिक) हरी सब्जियों प्राप्त कर सकते हैं। हरी सब्जियों के सेवन से परिवार के सभी सदस्य स्वस्थ्य रह सकते हैं।

कृषि छात्रों ने किया सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन एवं दिए तकनीकी सुझाव

शिवपुरी। राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय के कृषि महाविद्यालय ग्वालियर से ग्रामीण कृषि कार्य अनुभव के लिए छः माह के लिए आये 18 रावे छात्रों ने कृषि विज्ञान केन्द्र, शिवपुरी के समन्वय में ग्राम रातोर विकासखण्ड शिवपुरी में 14 अक्टूबर के सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन तकनीक से स्थानीय कृषकों एवं जनसामान्य की सहभागिता से ग्राम की स्थितियों का मूल्यांकन कर संसाधनों की पहचान कर मानचित्र पर उकेरा गया। इस तकनीक को पीआरए कहा जाता है जिसमें स्थानीय स्थिति में बदलाव लाने के लिए अपनी स्वयं की जीवन स्थितियों, समस्याओं और संभावनाओं का विश्लेषण करते हुए सक्रिय भूमिका निभाने के लिए सशक्त बनाने पर जोर दिया गया। इसी के साथ कृषकों को रबी फसलों की वर्षा संचय जल के आधार पर बुवाई विशेषकर सरसों के लिए उन्नत किस्मों, बीजोपचार के साथ-साथ उर्वरक प्रबंधन के लिए डी.ए.पी. के विकल्प के तौर पर एन.पी.के. या एन.पी.के.एस. मिश्रित उर्वरकों की जानकारी से अवगत कराया गया। रावे छात्रों को कृषि के साथ-साथ कृषि उद्यमिता की जानकारी से जुड़ने तथा ग्रामीण उद्यमिता विकास के लिए भी प्रेरित किया गया। कृषि विज्ञान केन्द्र, शिवपुरी के वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख डॉ. पुनीत कुमार के निर्देशन में वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. एम. के. भार्गव रावे प्रभारी एवं सह रावे प्रभारी डॉ. नीरज कुमार कुशवाहा के साथ सहायक संचालक कृषि एस.एस. घुरैया एवं वरिष्ठ कृषि विकास अधिकारी एस. एस. जाटव भी उपस्थित रहे।

कृषकों को फसलों में समसामियिकी सलाह

शहडोल। कृषि विज्ञान केंद्र एवं किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग शहडोल के संयुक्त तत्वाधान में ग्राम झिकबिजुरी, खम्हरिया एवं खरतोरा में भ्रमण करके कृषकों को फसलों में समसामियिकी सलाह देकर जागरूक किया। केन्द्र के वैज्ञानिक डॉ. ब्रजकिशोर प्रजापति ने कृषकों को सलाह दी कि गेहूं की विलम्ब से बुवाई होने के कारण मार्च एवं अप्रैल की गर्मी में गेहूं की फसल को नुकसान होता है। कृषक हैप्पी सीडर या सुपर सीडर मशीन के माध्यम से गेहूँ एवं चने की बुवाई करें जिसमें कृषक को खेत तैयार करने की आवश्यकता नहीं होती है। साथ ही किसान बिना पराली जलाए सीधे गेहूँ की बुआई कर सकते हैं। सुपर सीटर मशीन पराली को खेत में मिलाते हुए बुवाई करती है। दूसरी ओर हैप्पी सीडर मशीन पराली के बीच में बुवाई करती है। इन मशीनों से गेहूँ एवं चने की कटाई के उपरांत ग्रीष्मकालीन मूंग एवं उड़द की बुवाई भी की जा सकती है।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885
मै. माँ उर्वरक केन्द्र
रसायनिक एवं
जैविक खाद बीज
एवं दवाई के विक्रेता

अमित राय

पता: भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

किसानों को गिनाए सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के फायदे

शहडोल। कृषि विज्ञान केंद्र शहडोल के प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रमुख डॉ. मृगेन्द्र सिंह के मार्गदर्शन में ग्राम मझगवां एवं सलियाटोला में कृषक खेत भ्रमण किया गया। केन्द्र के वैज्ञानिक डॉ. ब्रजकिशोर प्रजापति द्वारा किसानों को जानकारी दी गई कि हमारे देश में 142 मिलियन हे. कृषि योग्य भूमि है जिसमें से केवल 52% भूमि में ही संस्थागत सिंचाई के साधन उपलब्ध है बाकी बची जमीन सिंचाई के लिए बरसात पर निर्भर है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली सामान्य रूप से बागवानी फसलों में उर्वरक व पानी देने की सर्वोत्तम एवं आधुनिक विधि मानी जाती है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली में कम पानी से अधिक क्षेत्र की सिंचाई की जाती है। इससे पानी की बर्बादी को तो रोका ही जाता है, साथ ही यह जल उपयोग दक्षता बढ़ाने में भी सहायक है। इस प्रणाली से सिंचाई करने पर फसलों की गुणवत्ता और उत्पादकता में भी सुधार होता है। हमारे देश में अधिकांशतः खेतों में सिंचाई के लिये कच्ची नालियों द्वारा पानी लाया जाता है, जिससे तकरीबन 30-40 फीसदी पानी रिसाव की वजह से बेकार चला जाता है। ऐसे में सूक्ष्म सिंचाई पद्धति का इस्तेमाल करने में फायदा-ही-फायदा है। इसके अतिरिक्त डॉ. प्रजापति ने कृषकों को बताया कि सब्जियाँ जल की कमी के प्रति काफी सहिष्णु होती है, क्योंकि अधिकांश सब्जियों की जड़े उथली होती है एवं पौधे की वृद्धि एवं विकास कम समय में ही पूरा करती है। थोड़े अंतराल के लिए भी पानी की कमी, उत्पादन के साथ-साथ सब्जियों की गुणवत्ता पर भी विपरीत प्रभाव डालती है।

10/2023-24

बायो एजेंट-आओ सीखे कम लागत में कीट प्रबंधन

गोविंदनगर/नर्मदापुरम्। कृषि विज्ञान केंद्र गोविन्दनगर में मध्य प्रदेश विज्ञान और प्रौद्योगिकी परिषद् भोपाल द्वारा वित्त पोषित परियोजना के अंतर्गत आन फार्म प्रोडक्शन आफ बायो एजेंट, बायो फ़र्टिलाइज़र एवं अनुप्रयोग पर पांच दिवसीय प्रशिक्षण का आयोजन किया गया जिसमे चयनित 25 किसानो को जैविक एवं प्राकृतिक खेती के लिए महत्वपूर्ण अवयव विभिन्न बायो एजेंट जैसे ट्राईकोग्रामा, रेडुविड बग, ग्रीन लेस विंग, ई. पी. एन., ट्राईकोडर्मा, माईकोराईजा, एजोला आदि के उत्पादन तकनीक को किसानो को व्यवहारिक व् प्रायोगिक रूप से किसानो को सिखाया गया है जिससे वो स्वयं इनका उत्पादन कर इनका प्रयोग अपनी फसलो पर कीट प्रबंधन के लिये कर सके। प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्घाटन में केन्द्र के अध्यक्ष अनिल अग्रवाल, न्यास के नव नियुक्त प्रबन्धक धर्मेन्द्र गुर्जर एवं केन्द्र के प्रभारी डॉ. संजीव कुमार गर्ग द्वारा किया गया एवं किसानों को मार्गदर्शन मिला। मध्यप्रदेश विज्ञान और प्रौद्योगिकी परिषद् भोपाल द्वारा वित्त पोषित इस प्रशिक्षण कार्यक्रम को परियोजना के प्रधान अन्वेशक वैज्ञानिक ब्रजेश कुमार नामदेव द्वारा संचालित किया गया जिसमे उन्होंने किसानो को विभिन्न बायोएजेंट जैसे-ट्राईकोग्रामा, रेडुविड बग, ट्राईकोडर्मा, माईकोराईज़ा, एजोला, बी.जी.ए. आदि जैव उर्वरक के उत्पादन व अनुप्रयोग के बारे में प्रायोगिक रूप से सिखाया इस प्रशिक्षण में डॉ राजेंद्र पटेल डॉ संजीव कुमार गर्ग विकास का भी मार्गदर्शन मिला।

केविके बड़गांव के प्रक्षेत्र में किसानों ने किया भ्रमण : डॉ. अमूले

बालाघाट। कृषि विज्ञान केन्द्र, बड़गांव, बालाघाट में किरनापुर एवं लांजी के कृषकों द्वारा केन्द्र के प्रक्षेत्र का भ्रमण किया गया इस दौरान केन्द्र के वैज्ञानिक एवं प्रक्षेत्र प्रभारी डॉ. रमेश अमूले द्वारा कृषकों को प्रक्षेत्र में प्रजनक बीज उत्पादन हेतु लगी धान की फसल जे.आर. 81, जे.आर. 10, जे.आर. 206 एवं स्वर्णा सब-1 की किस्मों के बारे में बताया। जे.आर. 81, जे.आर. 10, जे.आर. 206 (पकने की अवधि 120-122 दिन, दाना मध्यम मोटा, सूखा सहनशील किस्म, औसत उत्पादन 55-60 क्विंटल/हेक्टेयर, कीड़े एवं बीमारियों के प्रति मध्यम सहनशील, एम.टी.यू. 1010 की अपेक्षा 15% अधिक उत्पादन क्षमता) एवं स्वर्णा सब-1 (उत्पादकता क्षमता 22-25 क्विंटल प्रति एकड़ हैं। पकने की अवधि 140-145 दिन, दाना मध्यम लंबा, मध्यम बौनी किस्म, बाड़ प्रभावित क्षेत्रों हेतु उपयुक्त किस्म (लगभग 14 दिनों तक), औसत उत्पादन 55-60 क्विंटल/हेक्टेयर, कीड़े एवं बीमारियों के प्रति सहनशील किस्म) के बारे में बताया।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

एचआई-1650 ओजस्वी गेहूँ वैरायटी

प्रदीप खडीकर 9301606161
वसुन्धरा सीड्स, उज्जैन (म.प्र.)

वसुन्धरा सीड्स द्वारा गेहूँ, चना, सोयाबीन, मूंग, उड़द, अरहर, प्याज आदि फसलों के उन्नत बीज अनुसंधान केन्द्र (रिसर्च स्टेशन) व कृषि विश्वविद्यालयों से सम्पर्क कर प्राप्त किए तथा क्षेत्र के किसानों से सम्पर्क कर प्राप्त बीज से क्षेत्र के श्रेष्ठ किसानों के यहां अनुशंसा एवं आदर्श कृषि कार्यमाला एवं खेती के आधुनिक तरीकों/तकनीकों से उनकी पैदावार लेकर उनके आंकड़े एकत्रित किए तथा प्राप्त निष्कर्षों के अनुसार क्षेत्र के किसानों के लिए श्रेष्ठ किस्मों का चुनाव कर उन्हें किसानों को उपलब्ध कराया जा रहा है। वैज्ञानिकों एवं किसानों के यहां तकनीकी एवं व्यवहारिक दृष्टि से परखी गई श्रेष्ठ किस्म एवं जातियों का विवरण निम्नानुसार है-

1. गेहूँ एच.आई.-1650 (पूसा ओजस्वी)

गेहूँ किस्म एच.आई. 1544 (पूर्णा) के बाद किसान एक ऐसी चमत्कारी, असाधारण खाने वाली गेहूँ किस्म का इंतजार कर रहे थे जो कि पूर्णा या अन्य परंपरागत चपाती वाली किस्मों से अधिक उत्पादन, ज्यादा बाजार भाव, अच्छा सुडोल आकर्षक दाना, कम ऊंचाई व कम बीज दर व जल्दी व कम सिंचाई में भी आने वाली, बीमारियों के प्रति प्रतिरोधकता वाली ऐसे सभी गुणों से सम्पन्न आल इन वन किस्म जिसका डंका पूरे भारत में बजे ऐसी किसानों की अपेक्षा के अनुरूप गेहूँ अनुसंधान केन्द्र (IARI) द्वारा जो कि पूसा नई दिल्ली का एक सहयोगी संस्थान है। वर्षों के गहन अनुसंधान के 7 पश्चात गेहूँ की बॉयो फोर्टीफाईड किस्म एच.आई. - 1650 (पूसा ओजस्वी) देश के मध्यक्षेत्र, मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात, बुंदेलखंड क्षेत्र हेतु समय पर बोनी हेतु चपाती, ब्रेड, बिस्किट के लिये उपयुक्त हाल ही में जारी की है। गेहूँ की यह नवीनतम, एडवांस किस्म किसानों की सभी आवश्यकताओं एवं देश में बढ़ती ब्रेड, बिस्किट एवं चपाती वाले गेहूँ की मांग को पूरा करने में एक मील का पत्थर साबित होगी।

इस किस्म का गजट नोटिफिकेशन क्रमांक एस. ओ. 1056 (E) दिनांक 06.03.2023 है। गेहूँ की यह अतिविशिष्ट नई जनरेशन कि किस्म पर पूसा नई दिल्ली के द्वारा कई वर्षों के गहन रिसर्च एवं वैज्ञानिकों की टीम द्वारा भारी खर्च वाले अनुसंधान कार्य के

पश्चात् इस किस्म को जारी किया गया जिसके कारण इस किस्म का प्रजनक (ब्रीडर) बीज जो कि सीमित मात्रा में था उसका पूरा व सही लाभ किसानों को मिले। इस हेतु एक विशेष अनुबंध (MOU) के तहत कुछ निर्धारित शर्तों पर कुछ चुनी हुई बीज उत्पादक कम्पनियों को इसका प्रजनक बीज, प्रगुणन (उत्पादन) एवं विक्रय के लिए दिया गया जिसके प्रथम क्विंटल की लागत पंजीयन/लायसेंस व रायल्टी सहित रूपये 1,25,000 थी। इसलिए किसान भाई गेहूँ अनुसंधान केन्द्र (IARI) द्वारा अधिकृत बीज उत्पादक कम्पनियों से ही बीज लेवें क्योंकि इस किस्म की भारी माँग होने से कई लोग इस किस्म से मिलती-जुलती किस्मों को पूसा ओजस्वी या 1650 के नाम से थोड़े कम दाम में बेचकर किसानों के साथ धोका कर रहे हैं। इससे किसान सावधान रहे। केवल पूसा, नई दिल्ली द्वारा अधिकृत कम्पनियों से ही बीज लेवें इसकी पुष्टि एवं सूचना आप गेहूँ अनुसंधान केन्द्र इंदौर से भी कर सकते हैं उनके द्वारा इसकी सूची यूट्यूब पर भी वीडियों के रूप में डाली गई है।

किसान भाई इस बात को भी समझें कि मूल प्रजनक बीज की लागत बहुत अधिक होने से बीज थोड़ा महंगा हो सकता है। किंतु अधिकृत उत्पादक कंपनी से बीज लेने पर ओरिजनल होने की ग्यारंटी रहेगी। साथ ही जहाँ तक लागत का प्रश्न है किसान भाईयों को यदि इस किस्म का आधार बीज एफ-1 बीज मिल रहा है तो उसका उपयोग वे 2-3 वर्ष तक कर सकते हैं। किसान भाई 1 वर्ष का बीज नहीं लें रहें है वे 2-3 वर्ष में इस लागत का आंकलन करेंगे तो उन्हें यह बीज बिलकुल महंगा नहीं लगेगा। साथ ही इस किस्म की बीज दर प्रति एकड़ 40 किलो जो कि अन्य किस्मों की तुलना में बहुत ही कम है। उदाहरण के लिए इस किस्म की बीज दर रूपये 12,500/- प्रति क्विंटल रहती है तो मात्र 5000/- रुपए एकड़ में गेहूँ की बीजाई हो जाएगी जो कि लगभग अन्य गेहूँ की किस्म की लागत के बराबर ही है। क्योंकि उनका बीज थोड़ा सस्ता हो सकता है किन्तु बीज दर या मात्रा अधिक लगने से उसकी लागत भी लगभग इतनी ही आएगी किन्तु बीज के रूप में गेहूँ-1650 की मांग अगले वर्ष भी बहुत अच्छी रहेगी जिससे किसान को इस किस्म के गेहूँ का जो भाव मिलेगा वह अन्य किस्मों के गेहूँ में कभी नहीं मिल सकता है। अतः किसान इस किस्म के भाव के बजाय इस किस्म से होने वाले लाभ पर ही ध्यान देवें। इसके अतिरिक्त किसानों को इस किस्म के बीज की जो अतिरिक्त लागत लग रही है। वह तो इस किस्म के फसल कटने पर निकलने वाले भूसे से ही निकल जावेगी । इस किस्म का बीज सिर्फ सीधे बीज उत्पादक कम्पनियों को ही विक्रय के लिये दिया गया है। किसी भी किसान या व्यक्ति को यह बीज उत्पादन या विक्रय के लिए नहीं दिया गया है। इसका विशेष ध्यान रखें। अधिकृत बीज कम्पनियों से ही बिल के साथ इस बीज का क्रय करें।

इस किस्म का दाना सुडोल, चमकदार, आकर्षक, लम्बाकार रंग अम्बर (सुनहरा), 1000 दानो का वजन लगभग 50 ग्राम, बाली में दाने खिरने की समस्या नहीं, बॉयो फोर्टिफाईड किस्म होने से इसमें जिंक (42.7), आयरन (39. 5) पी. पी. एम. एवं प्रोटीन (11.4%) होने के कारण इस किस्म में पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में है जो कि देश में कुपोषण की समस्या को दूर करने में भी यह किस्म एक महत्वपूर्ण योगदान देगी। इस किस्म की रोटी सफेद, मुलायम, स्वादिष्ट, ब्रेड, बिस्किट एवं अन्य बेकरी आयटम के लिये अत्यंत उपयुक्त किस्म है। क्योंकि इस किस्म की चपाती क्वालिटी एवं बिस्किट क्वालिटी इन्डेक्स लगभग 7.9 है तथा इस किस्म की सेडीमेटेशन वल्यू (39.00ML) है जो कि इस किस्म को चपाती, ब्रेड, बिस्किट हेतु एक सर्वोत्तम किस्म होने के दावे की तकनीकी रूप से भी पुष्टि करती है।

इस किस्म की बाली सफेद, पत्तियां चौड़ी, सतह मोमी, मजबूत पर्ण झुके हुए तथा पौधा मध्यम ऊंचाई का लगभग 90-92 सेंमी. पौधा कम ऊंचाई का होने से आड़ा (लाजिंग) पड़ने की समस्या नहीं जिससे अप्रत्यक्ष रूप से उत्पादन में बढ़ोतरी इस किस्म का पौधा भरा हुआ पत्तियां चौड़ी व टिलरिंग अधिक होने से किसानों को अधिक भूसा भी प्राप्त होगा जो कि किसानों को एक अतिरिक्ति आय का लाभ भी निश्चित रूप से देगा। इस किस्म की बीज दर 100 किलो हेक्टेयर या 40 किलो एकड़, लाईन से लाईन की दूरी 20 से.मी. 1 नवम्बर से 25 नवम्बर तक समय पर बोनी करने पर तथा संतुलित मात्रा में उर्वरक एन.पी.के. 120:60:40 तथा अनुशंसित मात्रा में जिंक तथा समय-समय पर 4-5 सिंचाई देने पर आदर्श परिणाम। इस किस्म का अधिकतम उत्पादन आदर्श परिस्थिति में लगभग 73 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है पर व्यवहारिक रूप से कुछ किसानों द्वारा इस किस्म का चमत्कारी उत्पादन 17 क्विंटल बीघा तक भी लिया गया है। किसानी आंकड़ों व जानकारी ने अनुसार यह एक अर्ली किस्म अवधि लगभग 115

से 120 दिन होने से 2-3 सिंचाई में भी अच्छे मजबूत जड़ तंत्र होने के कारण इस किस्म ने अच्छा उत्पादन दिया है।

यह किस्म लगभग 23 सभी मुख्य स्टेम रस्ट एवं लीफ रस्ट के लिये प्रतिरोधक किस्म है तथा पाला अवरोधक किस्म होने पाला व बीमारियों से नुकसान की संभावना भी कम रहती है।

यह किस्म कम बीज दर, कम सिंचाई व कम दिवस में आने के कारण कम लागत पर अधिकतम उत्पादन व अच्छे बाजार भाव जिससे किसान को अधिकतम आय ऐसी हरफनमौला किस्म आज हर किसान की आवश्यकता है व बढ़ते जीवन स्तर के कारण अच्छी क्वालिटी के गेहूँ की चपाती, बिस्किट, ब्रेड मार्केट में बड़ी माँग के कारण इसके उत्पादन की असीम संभावनाएं हैं, इन सब असाधारण गुणों के कारण यह किस्म हर किसान की पहली पसंद बनकर पूरे क्षेत्र में शीघ्र ही अच्छादित हो जावेगी ।

2. गेहूँ-एच. आई. 1655 (पूसा हर्षा)

विगत कई वर्षों से शरबती किस्म अमृता, हर्षिता के बाद क्षेत्र के किसान इस बात का इंतजार रहे है कि उन्हें इन परम्परागत किस्मों से भी अधिक उत्पादन देने वाली, बेहतर, उच्च गुणवत्ता वाली, पानी की उपलब्धता के अनुसार कम से अधिक सिंचाई में आने वाली अर्ली एवं बिमारियों के प्रति प्रतिरोधकता वाली, जिसकी ऊँचाई थोड़ी कम रहे व उसकी काड़ी कड़क रहें जिससे आड़ा पड़ने (लाजिंग) की समस्या कम हो ऐसी बहुगुणी विशेषता वाली किस्म जो उन्हें अधिकतम उत्पादन के साथ-साथ ज्यादा बाजार भाव भी दिला सके, इस संबंध में किसानों का इंतजार खत्म हुआ। पूसा के सहयोगी संस्थान गेहूँ अनुसंधान केन्द्र (IARI) इंदौर द्वारा हाल ही में सुखा निरोधक, चमत्कारी गेहूँ किस्म एच. आई. 1655 (पूसा हर्षा) देश के मध्यक्षेत्र हेतु समय पर बोनी के लिये, चपाती, ब्रेड एवं बिस्किट हेतु सर्वश्रेष्ठ जारी की है, जिसका गजट नोटिफिकेशन क्र. 1056 (E) दिनांक 6.3.2023 है। यह एक उत्कृष्ट जल उपयोग वाली कुशल जीनो टाईप व बॉयो फोर्टिफाईड किस्म है ।

शरबती गेहूँ की यह किस्म अभी तक जारी सभी शरबती किस्मों की तुलना में एक चमत्कारी किस्म तथा अलग गुणों एवं विशेषताओं वाली किस्म होने से यह अन्य परम्परागत शरबती किस्मों से थोड़ी अलग है शरबती किस्मों जैसे सुजाता या अन्य में बीज दर, पानी/खाद आदि के असंतुलन के कारण अधिक ऊँचाई बढ़ने, आड़ा पड़ने व इसके कारण उत्पादन में कमी की समस्या आम है किंतु इस चमत्कारी किस्म हर्षा (एच.आई. 1655) एक मध्यम ऊँचाई कि लगभग 90-95 से.मी. जो कि लगभग लोक-1 के बराबर है। इस कारण कम ऊंचाई व इसकी काड़ी कड़क होने से हवा चलने या वर्षा की स्थिति में इसके गिरने (लाजिंग) की संभावना कम रहती है, जिसके कारण कृषकों को उत्पादन व गुणवत्ता खराब होने के

कारण होने वाले नुकसान की आशंका शरबती किस्म होने के बाद भी इसमें कम रहती है। पाला अवरोधी किस्म होने से अधिक ठंड या पाले की स्थिति में भी इस किस्में में नुकसान की संभावना बहुत कम रहती है। स्टेम एवं लीफ रस्ट के लिये यह किस्म प्रतिरोधी है। इस किस्म के अविश्वसनीय किन्तु सत्य गुणों के कारण शरबती किस्मों की खेती को एक नई परम्परा, एक नया आत्मविश्वास व एक नई दिशा मिलेगी।

इस किस्म के दानें सुडोल, चमकदार, आकर्षक, लम्बाकार, रंग अम्बर (सुनहरी), 1000 दानों का वजन लगभग 47 ग्राम, प्रोटीन (11.4%), जिंक (39.7), लोह तत्व (37.3) पी.पी.एम. है, इस किस्म की रोटी, ब्रेड एकदम सफेद, नरम, स्वादिष्ट तथा आवश्यक पोषक तत्वों से भरपूर है। इस किस्म का चपाती इंडेक्स (8.4) तथा सेडीमेंटेशन वेल्यू (42.6 ML) है जो कि तकनीकी दृष्टि से चपाती व इस किस्म की क्वालिटी की उच्चता की पुष्टि करती है।

इस किस्म कि पत्तियां चौड़ी, थोड़ी झुकी हुई बालियों का रंग सफेद, बाली पर रोए नहीं, इस किस्म की अंकुरण क्षमता अत्याधिक होने, सुडोल दानों से भरपूर बालियों वाला खेत कल्ले (टिलरिंग) का एक साथ बहुत अधिक फुटाव, सुंदर आकर्षक फसल बिना देखे अविश्वसनीय भी है। ऐसा इस किस्म को लगाने वाले किसानों का अभिन्न मत है सघन पौधा, अधिक चौड़ी पत्तियों की छत्र-छाया (अच्छादन) होने से यह भूमि के जल वाष्पीकरण को कम कर देती है व इसकी जड़ें गहरी होने से जमीन के नीचे के स्तर की नमी एवं तत्वों को खिंचकर पौधे को दे देती है जिससे पौधा कम सिंचाई में या सुखे की स्थिति में भी हरित अवस्था में बना रहता है जो कि इस किस्म की उच्च उत्पादन क्षमता का मूल रहस्य है। अच्छी वर्षा या सिंचाई पर्याप्त उपलब्ध होने पर किसान इस किस्म में 3 से 4 सिंचाई लगाकर भी अधिक उत्पादन भी प्राप्त कर सकते हैं।

इस किस्म की अवधि सुजाता या अन्य शरबती किस्मों से कम है यानि यह मात्र लगभग 115 से 120 दिवस है जबकि इसकी अधिकतम उत्पादन क्षमता लगभग 60 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा व्यवहारिक परिस्थितियों में कुछ किसानों द्वारा इस किस्म का सर्वाधिक उत्पादन लगभग 13-14 क्विंटल बीघा लिया गया है जो कि अविश्वसनीय किंतु सत्य है तथा यह शरबती किस्मों में सर्वाधिक है व शरबती किस्मों में इसे प्रथम स्थान पर पहुचाने हेतु पर्याप्त है। इस किस्म के दाने सुडोल चमकदार होने तथा रोटी, ब्रेड, बिस्किट, बेकरी आयटम के लिए उत्तम होने से इसकी स्थानीय माँग काफी अच्छी रहेगी जिसके कारण किसानों को अधिकतम उत्पादन के साथ अधिक बाजार भाव ऐसे दोहरा लाभ प्राप्त होगा। इस किस्म का पौधा फैलावदार, सघन, कुचे वाला होने से इस किस्म में भूसे की मात्रा किसान को अधिक मिलेगी जो कि किसान को एक अतिरिक्ति आय देगी।

इस किस्म की बीज दर 108 किलो हेक्टेयर या लगभग 40 किलो एकड़ लाईन से लाईन की दूरी 20 से.मी. 20 अक्टूबर से 10 नवम्बर तक समय पर बोनी करने संतुलित खाद एन. पी. के. एवं जिंक 80:40:50 सही समय पर देने पर आदर्श परिणाम। गेहूँ की यह शरबती किस्म हर्षा अपने असाधारण गुणों के कारण अपना एक उच्च स्थान बहुत जल्दी बना लेगी तथा चपाती वाले गेहूँ के बाजार व बेकरी इंडस्टी की एक बड़ी आवश्कयता बन जाएगी । यह किस्म की पूसा नई दिल्ली व गेहूँ अनुसंधान के (IARI) द्वारा विशेष अनुबंध (MOU) के तहत सीमित मात्रा में कुछ कम्पनियों को ही लगभग 1,25,000 /- क्विंटल की लागत पर दी गई है। अतः किसान केवल अधिकृत कम्पनियों से ही इसे खरीदे ताकि किसानों के साथ कोई धोखा न हो ।

3. गेहूँ-एच.आई. 8830 (पूसा कीर्ति)

पूसा के सहयोगी संस्थान, गेहूँ अनुसंधान केन्द्र, इंदौर द्वारा देश के मध्यक्षेत्र म.प्र. दक्षिण राजस्थान, बुंदेलखंड, गुजरात, छत्तीसगढ़ के लिए समय पर बोनी हेतु थुली, रवा, पास्ता हेतु अनुशंसित गेहूँ की यह नवीनतम बॉयो फोर्टिफाईड किस्म हाल ही में जारी की है, इसका गजट नोटिफिकेशन क्रमांक एस.ओ. 1056 (E) 6.3.2023 है। पूसा तेजस, पोषण व पूसा मंगल आदि कठिया किस्मों के बाद किसान इनसे भी उन्नत एक ऐसी ड्यूरम किस्म का इंतजार कर रहे थे, जिसमें कम अवधि में कम सिंचाई व कम बीज दर पर अधिकतम उत्पादन प्राप्त हो सके किसानों की इसी अपेक्षा को पूर्ण करने हेतु, पूसा नई दिल्ली के संस्थान व इंदौर क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र (IARI) द्वारा वर्षों के गहन रिसर्च के पश्चात् यह नई कठिया किस्म एच.आई. 8830 (पूसा कीर्ति) जारी की है। अति विशिष्ट श्रेणी की यह ड्यूरम किस्म का प्रजनक बीज एच. आई. 1650 की तरह ही एक विशेष अनुबंध (MOU) के तहत बहुत ही सीमित बीज होने से कुछ चुनी हुई बीज उत्पादक कम्पनियों को ही बीज प्रगुणन/उत्पादन व विक्रय के लिये दिया गया है जिसकी वास्तविक लागत प्रथम क्विंटल पर 1,25,000/- ली गई है। अतः किसान अधिकृत लायसेंस प्राप्त कम्पनियों से ही बीज लेवें ताकि उनके साथ किसी प्रकार का धोखा न हो ।

इस किस्म का दाना आकर्षक, चमकदार, बोल्ड,

रंग अम्बर (सुनहरा), थोड़ा कड़क, आकार दीर्घ वृत्ताकार (इलेप्टीकल), 1000 दानों का वजन लगभग 50 ग्राम बालियों में आरेकल ठोस (काम्पेक्ट) होने से खिरने की समस्या नहीं व परिपक्वता अवधि में थोड़ी वर्षा होने पर भी दाने का रंग खराब नहीं होता जिससे बाजार भाव अच्छे मिलते हैं। बॉयो फोर्टिफाईड किस्म होने से इसमें पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में जैसे जिंक (37.9) लोह तत्व (37.6) पी.पी.एम. तथा इसकी सेडीमेटेशन वेल्यू (33.8 ML) होने से यह इसकी उच्चतम गुणवत्ता एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर की क्वालिटी होने का एक तकनीकी प्रमाण है ।

हमारे यहाँ प्रकृति ने कठिया (ड्यूरम) गेहूँ के उत्पादन हेतु अत्यंत आदर्श वातावरण एवं पस्थितियाँ प्राकृतिक रूप से प्रदान की है जिसके कारण कठिया गेहूँ की इस किस्म की क्वालिटी अंतर्राष्ट्रीय स्तर की व उत्पादन अधिकतम प्राप्त होता है जिससे इस किस्म की बड़ी स्थानीय माँग एवं निर्यात की असीम संभावनाएँ बनी हुई है ।

इस किस्म का पौधा मध्यम ऊँचाई का ऊँचाई लगभग 90 सेंमी. पत्तियाँ चौड़ी, पर्ण कोण, सीधी सतह मोमी, मजबूत बालियाँ सफेद, बालियों पर रूए नहीं, काड़ी कड़क, ऊँचाई अधिक नहीं व जबरदस्त टिलरिंग होने के कारण इसके आड़ा पड़ने (लाजिंग) की समस्या नहीं। पौधा घना, फैलावदार व अधिक कुचे वाले होने के कारण किसानों को भूसा भी अधिक प्राप्त होता है, भूसे के भाव भी बहुत अच्छे मिलने के कारण किसान को लगने वाली गेहूँ की लागत का अधिकतम हिस्सा भूसे की आय में निकल जाता है । इस किस्म का अंकुरण बहुत अच्छा होने से व टिलरिंग (कल्ले) अधिक होने से बीज दर भी कम लगती है तथा फसल की अवधि लगभग 120 दिन होने से कम सिंचाई में भी अधिकतम उत्पादन देने में यह किस्म सक्षम है।

बीमारियों के प्रति प्रतिरोधकता व पाले / ठंड के प्रति सहनशीलता के सभी गुण इस किस्म में अन्य उन्नत ड्यूरम किस्मों की तरह स्वाभाविक रूप से देखे गए है।

इस किस्म की बीज दर 113 किलो हेक्टेयर या लगभग 45 किलो एकड़ तथा लाईन से लाईन की दूरी 20 से.मी. रखने व 20 अक्टूबर से 25 नवंबर से पूर्व समय पर बोनी करने व अनुशंसित संतुलित उर्वरक एन.पी.के. व जिंक की मात्रा समय पर 100:50:25 उपयोग करने पर आदर्श परिणाम ।

इस किस्म में एक यह अच्छी बात है कि सीमित सिंचाई 1 से 2 देने पर भी यह किस्म अच्छा उत्पादन देने की क्षमता रखती है । इस किस्म में किसानों द्वारा 3 से 4 सिंचाई में भी व्यवाहरिक रूप गतवर्ष कि विपरित मौसम एवं अधिक तापमान की परिस्थिति में भी लगभग 17 क्विंटल बीघा का उत्पादन लिया गया है जो कि आश्चर्यजनक किंतु सत्य है । इस किस्म में

किसान भाई दाने में दूध भरने (जीव पड़ने) की अवस्था लगभग 85 से 90 दिन के बाद सिंचाई रोक देगें तो फसल के आड़ा पड़ने व दाने के पोट्या (धान्या) होने की संभावना नहीं के बराबर रहेगी जिससे किसानों को अधिकतम उत्पादन के साथ अच्छे बाजार भाव दोनों का लाभ मिलेगा।

गेहूँ की यह अत्यंत उन्नत एडवांस जनरेशन की यह ड्यूरम किस्म एच.आई. 8830 (पूसा कीर्ति) अपने बहु आयामी गुणों के कारण अतिशीघ्र अपना एक विशिष्ट उच्च स्थान अतिशीघ्र बना लेगी तथा किसानों के लिये कठिया गेहूँ की खेती की एक नई परम्परा बनाते हुए उनके लिये वरदान सिद्ध होगी।

4. गेहूँ एच. डी. 3385

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान एवं (IARI) नई दिल्ली द्वारा यह विशिष्ट श्रेणी की अत्युतम गेहूँ की किस्म एक विशेष प्रक्रिया (PPVFRA) प्लॉट प्रोटेक्शन ऑफ वैरायटीज एण्ड फारमर्स राईट अथोरिटी के माध्यम से पंजीकृत किस्म है। इस किस्म की यह एक सबसे बड़ी विशेषता या कहे कि गुण यह है कि इस किस्म में बड़े हुए तापमान के प्रति असाधारण प्रतिरोधकता देखी गई है जो आज तक जारी समस्त किस्मों में सर्वाधिक है अर्थात् बढ़े हुए तापमान में भी यह किस्म अपनी उत्पादन क्षमता एवं गुणवत्ता दोनों को बनाये रखती है एवं बार-बार मौसम में होने वाले बदलाव तथा मौसमी तनाव (स्टेस) के प्रति सामान्य उत्पादन देने की क्षमता ने इस किस्म को आज की अनिश्चितता वाली मौसम एवं परिस्थितियों को देखते हुए सबसे सफल एवं व्यवाहरिक किस्म होने का श्रेय प्राप्त है ।

इस किस्म की बोनी अक्टूबर माह में भी की जा सकती है क्योंकि अक्टूबर माह में अक्टूबर हिट याने बहुत गर्म वातावरण होता है चूंकि यह गर्मी के वातावरण को सहन कर लेती है व लम्बी अवधि की किस्म होने के बाद भी जल्दी बोवनी के कारण समय पर इसकी कटाई करना भी आसान है। इस किस्म की ऊँचाई 98 से.मी. है इसकी टिलरिंग काफी अधिक होने, काड़ी कड़क होने से इस किस्म में आड़ा पड़ने (लाजिंग) की समस्या नहीं के बराबर है जिससे उत्पादन स्वभाविक रूप से अधिक प्राप्त होता है ।

इस किस्म का दाना काफी आकर्षक, चमकदार एवं बहुत बोल्ड होने से बाजार की पहली पसंद बनने की इस किस्म में पूरी- पूरी क्षमता एवं अधिकतम बाजार भाव मिलने की पूर्ण संभावना, पीले, ब्राउन एवं ब्लेक रस्ट के प्रति उच्च प्रतिरोधी क्षमता। इस किस्म की सबसे बड़ी खासियत यह है कि इसमें कुंचे निकले अर्थात् टिलरिंग इतना अधिक है जो कि किसी अन्य किस्म में नहीं देखा गया है। जिसके कारण बीज दर लगभग 35-40 प्रतिशत कम जिससे लागत में कमी इस किस्म की उत्पादन क्षमता चपाती वाले गेहूँ में सर्वाधिक देखी गई है जो कि अधिकतम लगभग 74 क्विंटल प्रति हेक्टेयर किंतु व्यवहारिक रूप से किसानों के द्वारा 80 क्विंटल हेक्टेयर से भी अधिक उत्पादन लिया गया। इस किस्म में जबरदस्त टिलरिंग बहुत अच्छी अंकुरण क्षमता के कारण बीज दर मात्र 20-25 किलो एकड़ या लगभग 80 किलो हेक्टेयर गर्मी सहन करने की असाधारण क्षमता के कारण खेत में बारिश की नमी का भी उपयोग करते हुए 5 अक्टूबर से नवम्बर तक अर्ली बोनी हेतु उपयुक्त सिंचाई 4-5 देने व एन.पी.के. 100:50:25 व अनुशंसित मात्रा में जिंक देने पर आदर्श परिणाम जल्दी बोनी की क्षमता के कारण मार्च माह में ही अन्य किस्मों की तरह कटाई के कारण सुविधाजनक। गेहूँ की यह एच.डी. 3385 किस्म अपने चमत्कारी गुणों के कारण किसानों की गेहूँ की परम्परागत खेती के बारे में सोच को ही बदल कर रख देगी व एक ऐसा उच्च स्थान प्राप्त करेगी जो आज तक किसी किस्म को प्राप्त नहीं हुआ। अंत में यह गेहूँ खेती करने वाले किसानों के लिए एक वरदान सिद्ध होगी।

5. गेहूँ-सी- 306

गेहूँ की यह शरबती किस्म एक काफी पुरानी किस्म है जिसका नोटिफिकेशन 24.09.1969 को हुआ। ओल्ड इज गोल्ड की उक्ति को चरितार्थ करते हुए आज भी बाजार की शरबती किस्मों में अपने आकर्षक दाने, चमक व स्वाद के कारण शरबती किस्म में यह किस्म सिरमौर है। सूखा निरोधक किस्म होने के कारण यह कम से कम पानी/सिंचाई की स्थिति में भी अच्छा उत्पादन देने की क्षमता रखती है। इसकी उत्पादकता 25-30 क्विंटल हेम्टेयर है। इसके 1000 दानों का वजन 45-48 ग्राम लगभग होता है। पकने की अवधि 140-145 दिन होने से व गर्मी हेतु सहनशील किस्म होने से इसकी बोनी अक्टूबर से ही प्रारंभ हो जाती है, इसकी उँचाई 120-130 सेंमी. है। बीजदर लगभग 100 किलो हेक्टेअर व 1 से 2 सिंचाई पर अच्छे परिणाम, बाजार में चपाती में आज भी सी-306 गेहूँ सबसे लोकप्रिय व सबसे महंगा बिकने वाला गेहूँ है, इस किस्म में कृषकों का उत्पादन कम होते हुए भी बाजार भाव अधिक मिलने के कारण व सिंचाई खर्च कम होने से इस गेहूँ किस्म की खेती काफी लाभदायक है ।

6. गेहूँ-एच. आई.-1605 (पूसा उजाला)

गेहूँ अनुसंधान केन्द्र द्वारा वर्ष 2017 में जारी चन्दोसी/शरबती किस्म पूसा उजाला का दाना आकर्षक, चमकदार, खाने में चपाती हेतु अत्यन्त उत्तम एवं स्वादिष्ट होने से तथा इसकी रोटी सफेद एवं नरम होने से तथा इसकी अवधि सुजाता गेहूँ से कम होने के कारण तथा सूखे की स्थिति में मात्र एक से दो सिंचाई देने पर भी उच्चतम उत्पादन देने की क्षमता। काड़ी कड़क होने के कारण आड़ा पड़ने की समस्या नहीं होने के गुणों के कारण यह किस्म पहली बार किसान के द्वारा बोनी के पश्चात प्राप्त होने वाले परिणाम देखकर किसानों को इस किस्म को बार बार लगाने के लिये मजबूर कर देगी। जिन कृषकों ने इस शरबती किस्म को गतवर्ष लगाया था वे इसकी उत्पादन क्षमता को देखकर आज भी अचम्भित है, कि एक शरबती किस्म 55 क्वि. प्रति हेक्टेयर से अधिक उत्पादन कैसे दे सकती है। यह एक आश्चर्यजनक किंतु सत्य है जो कि आप स्वयं इस किस्म को लगाकर आदर्श परिस्थितियों में प्राप्त कर सकते हैं। इस किस्म में दाने थोड़े कड़क, चमकदार, अण्डाकार आकार के होते हैं, 1000 दानों का वजन लगभग 45 ग्राम, पौधे की ऊँचाई लगभग 90 से.मी. अवधि लगभग 120 दिवस, पत्ती की चौड़ाई मध्यम थोड़ी सीधी, आवरण मजबूत - चिकनी बाली पर रोएं नहीं, बाली का रंग सफेद। इस किस्म में लाईन से लाईन की दूरी लगभग 10" (इंच) रखने, बीच दर 45 किलो एकड़ या 100 किलो हेक्टेयर रखने फर्टिलाईजर अनुशंसा N80P40 K40 किलो प्रति हेक्टेयर रखने तथा 1-2 सिंचाई देने पर आदर्श परिणाम व्यावहारिक रूप से 3 सिंचाई देने पर भी अधिक उत्पादन प्राप्त हुआ है। गतवर्ष रिकॉर्ड उत्पादन देने वाली यह चन्दोसी किस्म अपने विशिष्ट गुणों के कारण शीघ्र ही गेहूँ की चन्दोसी किस्मों की एक आदर्श पर्याय किस्म बना जावेगी ।

7. गेहूँ एच.आई.-1544 (पूर्णा)

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (ICAR) के वैज्ञानिकों द्वारा गहन अनुसंधान के पश्चात म.प्र. छत्तीसगढ़, राजस्थान, गुजरात के किसानों के उत्थान हेतु कम से कम समय 110/115 दिवस में कम सिंचाई से अधिकतम उत्पादन देने वाली किस्म विकसित की है जो कि खाने में अत्यन्त स्वादिष्ट एवं पौष्टिकता की दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की है, दाना काफी चमकदार, आकर्षक एवं शरबती किस्मों जैसा गोलाकार दिखने के कारण बाजार भाव भी अधिकतम मिलते है। गेहूँ की यह पूर्णा किस्म अपने नाम के अनुरूप सर्व गुण सम्पन्न होने के कारण क्षेत्र के किसानों का आर्थिक विकास कर उनकी तकदीर बदल देने की भी पूर्ण क्षमता रखती हैं। इसकी ऊँचाई 85-90 से.मी.। 1000 दानों का वजन 40-50 ग्राम बीज पर 40-45 किलो एकड़। सिंचाई 2-5 बुवाई की अवधि नवम्बर से 15 दिसम्बर तक। इस किस्म का उत्पादन कृषकों द्वारा व्यवहारिक रूप से अधिकतम 60 क्विंटल प्रति हेक्टेयर से अधिक लिया गया है। गेहूँ की यह किस्म किसानों के लिये वरदान सिद्ध होगी।

8. गेहूँ - राज - 4037

पठारी क्षेत्र हेतु अनुशंसित गेहूँ की यह किस्म राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय द्वारा जारी की गई है। लगभग 105 दिवस में आने वाली यह किस्म खाने में अत्यन्त स्वादिष्ट एवं दाना शरबती गेहूँ जैसा सुन्दर, चमकदार होने से अधिकतम बाजार भाव समय पर बुआई हेतु उपयुक्त किस्म । पौधे की ऊँचाई लगभग 74 से.मी. पौधे की ऊँचाई कम होने से तथा काड़ी कड़क होने से यह गेहूँ आड़ा (लाजिंग) पड़ने की समस्या नहीं, बालियों में दाने खिरने (शेटरिंग) की समस्या नहीं। इसकी पत्तियाँ मध्यम चौड़ी, हरी, मोमयुक्त होती है। बालियाँ मध्यम लम्बी तथा सूखने पर धुंधली सफेद दाने अर्ध कठोर अम्बर रंग के होते हैं। रस्ट की बीमारी हेतु अच्छी प्रतिरोधक किस्म। लगभग 120 किलो प्रति हेक्टेयर बीजदर व लाईन से लाईन की दूरी 9-10 इन्च रखने पर तथा 3-4 सिंचाई अनुशंसित समय पर देने पर फर्टिलाईजर अनुशंसा N 80-150P 40-60K 40 किला प्रति हेक्टेयर देने से श्रेष्ठ परिणाम।

9. गेहूँ-जी. डब्ल्यू.- 322

गेहूँ अनुसंधान केन्द्र (SDAU) वीजापुर (गुजरात) से जारी गेहूँ की यह एक आदर्श किस्म है। जो कि गेहूँ डब्ल्यू. एच. 147 का स्थान अपने आड़ा न पड़ने (लॉजिंग) व बाली में न खिरने (शेटरिंग) उच्च उत्पादन क्षमता के गुण के कारण तथा आकर्षक दाने व चपाती हेतु एक सर्वश्रेष्ठ किस्म होने के कारण ले सकती है। इसकी लम्बाई लगभग 90 से.मी.। 1000 दोनों का वजन 45 ग्राम, बोनी 9 इंच, 4-5 सिंचाई, व बीज दर 125 किलो हेक्टेअर रखने पर आदर्श परिणाम। अधिकतम उत्पादन क्षमता आदर्श स्थितियों में 72 क्विंटल हेक्टेअर तक अधिकतम उत्पादन क्षमता, दाना आकर्षक व स्वादिष्ट होने से किसानों को बाजार भाव अधिक मिलते हैं। बीमारियों एवं रस्ट के विरुद्ध इस किस्म में प्रतिरोधकता होने से उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है। इसके आरेकल (कुस्सी) का रंग हल्का गुलाबी, टापडेन्स अर्थात पौध सघनता वाली यह किस्म अपने गुणों के कारण किसानों के बहुत बड़े क्षेत्र पर अपना अधिकार कायम कर लेगी।

10. गेहूँ-लोक-1

भारत में सर्वाधिक क्षेत्र में व सर्वाधिक लोकप्रिय गेहूँ की किस्म है लोक-1, यह किस्म किसी प्रकार के परिचय की मोहताज नहीं है। सोनालिका व वी.जी.- 33। मेक्सिकनकिस्मों के क्रॉस ब्रिडिंग से जो कि नोबल पुरस्कार विजेता नॉर्मन बोरलाग के द्वारा प्रदान की गई थी। लोक भारती इंस्टीट्यूट गुजरात के द्वारा 12 वर्षों तक गहन प्रयोग व सतत् अनुसंधान के पश्चात 14-1-1982 में इसे मध्य क्षेत्र में बोनी हेतु इसे भारत सरकार द्वारा इसे प्रसारित किया गया। इसकी उत्पादकता 30-40 क्विंटल हेक्टेयर है। व्यावहारिक परिस्थितियों में इस किस्म में 70-75 क्विंटल हेक्टेअर तक भी अविश्वसनीय किंतु सत्य उत्पादन दिया है। पौधे की ऊँचाई 90 से 100 से.मी. इसकी अवधि लगभग 115-120 दिवस है। 1000 दानों का वजन 55-60 ग्राम, 4 से 5 सिंचाई व 100 से 125 किलो हेक्टेयर बीज दर व 9 इंच लाईन से लाईन की दूरी रखने पर आदर्श परिणाम। जल्दी व देरी से बोनी हेतु कम या अधिक सिंचाई व्यवस्थाओं में, किसी भी परिस्थिति में किसानों के लिये गेहूँ की लोक-1 किस्म सर्वाधिक सुविधाजनक, समायोजन वाली, बाजार में आसानीसे विक्रय योग्य, अच्छे बाजार भाव व्यापारियों व मिल वालों की पहली पसंद होनेसे यह किस्म आज भी बाजार की सबसे लोकप्रिय किस्म है तथा भारत में सर्वाधिक प्रांतों व सर्वाधिक क्षेत्र पर इस किस्म ने अपना अधिकार जमा रखा है। किसानों को इस किस्म का ब्रीडर या शुद्ध आधार बीज ही बोना चाहिए। इसमें दूसरी गेहूँ की किस्मों के मिक्स बीज होने पर इससे कई प्रकार की बीमारियाँ आने की संभावना रहती है जिसके परिणाम स्वरूप यह एक अच्छी किस्म होते हुए भी लोक-1 किस्म आलोचना का शिकार हो रही है। किसान भाई इस बात का विशेष ध्यान रखें व अनुशंसित बीज दर से अधिक बीज न डालें व बीजोपचार अवश्य करें। 2-3 कम सिंचाई रखने पर आदर्श परिणाम एवं आदर्श गुणवत्ता ।

डॉ. पूर्वी तिवारी (सीनियर रिसर्च फेलो, एएमडी) भाकृअनुप - केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल (म.प्र.)

कृषि में केवल 'उपज' नहीं हो सकता एकमात्र मानक'

भारत, अधिकांश देशों की तरह, कृषि को 'उपज' के सुनहरे मापदंड के माध्यम से समझता है– यानी प्रति इकाई भूमि से उत्पन्न उत्पादन, जिसे आमतौर पर किलोग्राम प्रति हेक्टेयर के रूप में गिना जाता है। लेकिन यह दृष्टिकोण बदलने की जरूरत है। स्वतंत्र भारत में, उपज पर ध्यान केंद्रित करने से एक बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की गई। ऐतिहासिक रूप से, उपज पर जोर इसलिए था क्योंकि कृषि के लिए आवश्यक सभी संसाधनों में भूमि को सबसे दुर्लभ माना जाता था। अब, अन्य संसाधन जैसे पानी, पौध पोषण, और श्रम भी कम होते जा रहे हैं।

इसके अलावा, केवल उपज को अधिकतम करने से कई बार उत्पादकों और उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य और आर्थिक कल्याण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है – वे परिणाम, जिन्हें उपज अधिकतम करने से सुधारना चाहिए था।

उपज पर अत्यधिक जोर देने से उत्पादन की मात्रा बढ़ाने पर एकतरफा ध्यान केंद्रित हो गया है, जबकि उगाए जा रहे खाद्य पदार्थों के पोषण प्रोफाइल पर बहुत कम ध्यान दिया गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) द्वारा हाल ही में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि उच्च उपज वाली किस्मों की खोज ने सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा को कम कर दिया है। चावल में जिंक का स्तर 33% और गेहूं में 30% कम हो गया है, जबकि चावल में आयरन 27% और गेहूं में 19% कम हो गया है। नई अनाज किस्मों को विकसित करने वाले पौध प्रजनकों के लिए पोषण प्रोफाइल को प्रकाशित करना अनिवार्य नहीं है।

भारतीय खाद्य पदार्थों में पोषण की इस कमी के कारण सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती है। नवीनतम राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) की रिपोर्ट के अनुसार, पांच साल से कम उम्र के एक तिहाई भारतीय बच्चे अविकसित हैं और दो-तिहाई एनीमिक हैं। पारंपरिक सोच यह है कि उपज को अधिकतम करने से किसानों की शुद्ध आय अधिकतम हो जाती है। लेकिन यह हमेशा सही नहीं होता। अतिरिक्त उपज किस हद तक लागत बढ़ाती है, यह महत्वपूर्ण है। 1970 के दशक से उर्वरकों की प्रतिक्रिया फसलों में 80% से अधिक कम हो गई है, और किसान अब समान उपज प्राप्त करने के लिए अधिक उर्वरक डाल रहे हैं। इसके अलावा, केवल उपज को अधिकतम करने पर ध्यान केंद्रित करना मौसमी उत्पादन में मदद कर सकता है, लेकिन यह पूरे वर्ष भर का उत्पादन अधिकतम नहीं कर सकता। कृषि वैज्ञानिक बीज की किस्मों को डिजाइन करते समय फसलों के बीच और विभिन्न मौसमों में खेतों पर होने वाले सहजीवी संबंधों पर कम ध्यान देते हैं। अक्सर, एक मौसम में फसलों का संयोजन उस मौसम की उपज को अधिकतम नहीं कर सकता, लेकिन यह पूरे वर्ष (विभिन्न मौसमों में) कुल पोषण उत्पादन और मुनाफे को अधिकतम कर सकता है। आंध्र प्रदेश से एक अध्ययन में दिखाया गया है कि गन्ने के साथ मिर्च, बैंगन, टमाटर और धनिया की मिश्रित खेती से सालभर किसानों की आय स्थिर रहती है और लाभप्रदता भी बढ़ती है।

इसके अलावा, उपज को अधिकतम करने पर एकतरफा ध्यान केंद्रित करना संरचनात्मक रूप से कुछ ही उच्च उपज वाली बीज किस्मों को हर जगह बढ़ावा देता है, जिससे जैव विविधता का नुकसान होता है। उदाहरण के लिए, भारत ने हरित क्रांति के बाद से लगभग 1,04,000 चावल की किस्मों को खो दिया है। इससे कृषि की प्रतिरोधक क्षमता कमजोर हो गई है, खासकर जलवायु परिवर्तन के कारण बाढ़, सूखा, और हीटवेव जैसी चरम परिस्थितियों के बीच। कई स्थानीय किस्में ऐसी चरम स्थितियों के प्रति अधिक प्रतिरोधी साबित हुई हैं। उच्च उपज वाली फसलों की दौड़ ने प्रतिरोधी और पौष्टिक फसलों के गिरावट को भी जन्म दिया है। उदाहरण के लिए, 1950 के दशक से ज्वार, बाजरा जैसे मोटे अनाजों के तहत बोए गए क्षेत्र में 1 करोड़ हेक्टेयर की कमी आई है, जबकि चावल और गेहूं का क्षेत्र क्रमशः 1.3 करोड़ हेक्टेयर और 2.1 करोड़ हेक्टेयर बढ़ गया है। इस उत्पादन में विविधता की कमी से एक सामान्य भारतीय थाली में भी विविधता कम हो गई है।

बेहतर संकेतकों की ओर देखना

कुछ सिद्धांत हमें भारत के कृषि तंत्र के लिए बेहतर संकेतक निर्धारित करने में मदद कर सकते हैं।

1. हमारा खाद्य तंत्र हमारे राष्ट्र के स्वास्थ्य को प्रभावित करता है और महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर है। इसलिए, कृषि संकेतकों का निर्धारण केवल कृषि मंत्रालय या उससे संबद्ध भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) संस्थानों द्वारा नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि स्वास्थ्य, कृषि, जल, और पर्यावरण मंत्रालयों द्वारा सामूहिक रूप से किया जाना चाहिए।
2. संकेतकों को सीधे परिणामों को संबोधित करना चाहिए। अगर पोषण सुरक्षा लक्ष्य है, तो संकेतक प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष (और साल दर साल) पोषण उत्पादन हो सकता है।
3. मृदा जैविक गतिविधि, जल उपयोग दक्षता और कृषि जैव विविधता जैसे मेट्रिक्स को मुख्यधारा में लाना चाहिए। उदाहरण के लिए, मृदा स्वास्थ्य कार्डों में मृदा कार्बनिक कार्बन को शामिल करना एक अच्छा कदम है। इसी तरह, तेलंगाना के खम्मम जिले में ृद्ध-संचालित 'सागू बागू' पायलट प्रोजेक्ट किसानों को वास्तविक समय के डेटा और अनुशंसाओं के माध्यम से जल उपयोग दक्षता और कृषि जैव विविधता में सुधार करने पर केंद्रित है, जो इष्टतम सिंचाई और फसल प्रबंधन प्रथाओं में मदद करता है।
4. हमें न केवल खेत स्तर पर फसल विविधता को मापना चाहिए, बल्कि 'लैंडस्केप डाइवर्सिटी स्कोर' (क्षेत्रीय फसलों की विविधता का आकलन) और आय विविधीकरण की डिग्री (इंटरक्रॉपिंग और पशुपालन जैसी कई आय धाराओं के माध्यम से आर्थिक प्रतिरोधक क्षमता को ट्रैक करना) भी मापना चाहिए। उदाहरण हेतु, एक ऐसा क्षेत्र जहां केवल एक प्रमुख फसल होती है, वह मूल्य झटकों और कीट हमलों के प्रति अधिक संवेदनशील होता है।

एकल संकेतक कृषि तंत्र के कई परिणामों के साथ न्याय नहीं कर सकता, जिनकी सेवा करने की अपेक्षा की जाती है। उपज का पीछा करने से भारत को विनाशकारी अकाल से बाहर निकाला गया है, लेकिन बढ़ते जलवायु खतरों और घटते प्राकृतिक संसाधनों के साथ, यह आगे बढ़ने का एकमात्र लक्ष्य नहीं हो सकता। अब समय आ गया है कि एक नए प्रतिमान को अपनाया जाए, जिसमें कृषि की सफलता का मूल्यांकन इस बात से किया जाए कि वह लोगों का पोषण करने, आजीविका को बनाए रखने, और भविष्य की पीढ़ियों के लिए हमारे ग्रह की रक्षा करने में कितनी सक्षम है।

शिवहरे किसान सेवा केन्द्र डबरा
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाईयों के खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है

प्रो. ओमप्रकाश शिवहरे
82248-44542
78282-60543
पंजाब नेशनल बैंक के सामने, भितरवार रोड, डबरा
10/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

सरसों की उन्नत खेती

डॉ. पंकज कुमार बागरी (गेस्ट फैकल्टी)
सस्य विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय पन्ना (म.प्र.)
डॉ. विजय कुमार यादव (अधिष्ठाता) पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
डॉ. वासुदेव द्विवेदी (प्राध्यापक) सस्य विज्ञान विभाग, ए.के.एस. विश्वविद्यालय सतना (म.प्र.)

सरसों की खेती मुख्य रूप से भारत के सभी क्षेत्रों पर की जाती है। सरसों की खेती हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र की एक प्रमुख फसल है। यह प्रमुख तिलहन फसल है। सरसों की खेती खास बात है की यह सिंचित और बारानी, दोनों ही अवस्थाओं में उगाई जा सकती है। विश्व में यह सोयाबीन और पाम के तेल के बाद तीसरी सब से ज्यादा महत्तवपूर्ण फसल है। सरसों के बीज और इसका तेल मुख्य तौर पर रसोई घर में काम आता है। सरसों के पत्ते सब्जी बनाने के काम आते हैं। सरसों की खल भी बनती है जो कि दुधारू पशुओं को खिलाने के काम आती है। इसका उत्पादन भारत में आदिकाल से किया जा रहा है। इसकी खेती भारत में लगभग 66.34 लाख हेक्टेयर भूमि में की जाती है, जिससे लगभग 75 से 80 लाख उत्पादन मिलता है। सरसों की यदि वैज्ञानिक तकनीक से खेती की जाए, तो उत्पादक इसकी फसल से अधिकतम उपज प्राप्त कर सकते है।

बुवाई का समय

सरसों की बुवाई का सही समय सितंबर से अक्टूबर है।

फासला

सरसों की बिजाई के लिए पंक्ति से पंक्ति का फासला 30 सैं.मी. और पौधे से पौधे का फासला 10 से 15 सैं.मी. रखें। सरसों की बिजाई के लिए पंक्तियों का फासला 45 सैं.मी. और पौधे से पौधे का फासला 10 सैं.मी. रखें।

बीज की गहराई

बीज 4-5 सैं.मी. गहरे बीजने चाहिए।

बुवाई का तरीका

बुवाई के लिए बुवाई वाली मशीन का ही प्रयोग करें।

बीज की मात्रा

बीज की मात्रा 1.5 किलोग्राम प्रति एकड़ की जरूरत होती है। बिजाई के 3 सप्ताह बाद कमज़ोर पौधों को नष्ट कर दें और सेहतमंद पौधों को खेत में रहने दें।

बीज का उपचार

बीज को मिट्टी के अंदरूनी कीटों और बीमारियों से बचाने के लिए बीजों को 3 ग्राम थीरम से प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचार करें।

खाद एवं उर्वरक

सरसों की खेती के लिए खेत की तैयारी के समय अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद 7-12 टन/एकड़ की दर से मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। खादों के सही प्रयोग के लिए मिट्टी की जांच करवायें। सरसों में 40 किलो नाइट्रोजन (90 किलो यूरिया), 12 किलो फासफोरस (75 किलो सिंगल सुपर फासफेट) और 6 किलो पोटाश्यिम (10 किलो म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ डालें। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सारी खाद बिजाई से पहले डालें। सरसों के लिए खाद की आधी मात्रा बिजाई से पहले और आधी मात्रा पहला पानी लगाते समय डालें। ध्यान रहे रासायनिक उर्वरक मिट्टी परिक्षण के आधार पर ही प्रयोग करें।

खरपतवार नियंत्रण

सरसों की खेती में खरपतवार की रोकथाम के लिए 15 दिनों के फ़ासलो में 2-3 निराई-गुड़ाई करें।

सिंचाई

फसल की बुवाई सिंचाई के बाद करें। अच्छी फसल लेने के लिए बुवाई के बाद तीन हफ्तों के फासले पर तीन सिंचाइयों की जरूरत होती है। ज़मीन में नमी को बचाने हेतु जैविक खादों का अधिक प्रयोग करें।

कटाई एवं गहाई

फसल अधिक पकने पर फलियों के चटकने की आशंका बढ़ जाती है। अतः पौधों के पीले पड़ने एवं फलियां भूरी होने पर फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। फसल को सूखाकर थ्रेसर या डंडों से पीटकर दाने को अलग कर लिया जाता है। बीजों को सुखाने के बाद बोरियों में या ढोल में डालें। और नमी रहित स्थान पर भण्डारित करें।

उत्पादन

सरसों की उपरोक्त उन्नत तकनीक द्वारा खेती करने पर असिंचित क्षेत्रो में 15 से 20 क्विंटल तथा सिंचित क्षेत्रो में 20 से 30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर दाने की उपज प्राप्त हो जाती है।

मुख्य रोग, लक्षण एवं प्रबंधन ब्लाइट

रोगज़नक़ संक्रमित बीज के माध्यम से या पानी और कीट आंदोलन को फैलाकर फैलता है; रोग की उत्पत्ति गर्म और आर्द्र स्थितियों से होती है। रोगज़नक़ संक्रमित पौधे के अवशेषों में मिट्टी और बीज में जीवित रहता है। रोगज़नक़ मिट्टी और सिंचाई के पानी से फैलता है।

प्रबंधन

दूध आधारित उपचार (मट्ठा और कच्चा दूध) ने भी काले सड़न की गंभीरता को कम कर सकते है। 10 दिनों के अंतराल पर बोर्डो मिश्रण (0.8% = 4:4:50) या मनकोजेब (0.25%) या रिडोमिल एमजेड-72 (0.1%) के साथ फसल का छिड़काव करें। फॉसेटिल-अल (एलीट) जैसे हाल के फफूंदनाशकों का उपयोग करें।

श्वेत किट

रोगज़नक़ प्रभावित मेजबान ऊतकों और मिट्टी में ओस्पोर्स के माध्यम से जीवित रहता है। माध्यमिक संक्रमण को स्पोरैंगिया और ज़ोस्पोरेस द्वारा किया जाता है जो नए संक्रमण का उत्पादन करते हैं। नम (70% से अधिक सापेक्ष आर्द्रता गर्म मौसम (12-25 डिग्री सेल्सियस) और आंतरायिक बारिश के साथ मिलकर रोग के विकास का पक्षधर है।

प्रबंधन

15 अक्टूबर तक सरसों की फसल की बुवाई, यूकेलिप्टस नीम, लहसुन के दो पौधों में से किसी भी एक बीओन (0.02%) के पौधे के अर्क के तीन पर्ण स्प्रे (1%) यदि रोग एक समस्या बन जाए तो उचित फफूंदनाशक दवाई लगायें मैन्कोज़ेब (इंडोफ़िल एम-45 के रूप में) 0.125%+थायोफनेट-मिथाइल 0.025% पर, थायोफनेट-मिथाइल 0.025%+कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (ब्लिटॉक्स-50 के रूप में) 0.10% पर 0.05% और उसके बाद 0.05% थायोफनेट-मिथाइल।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

बछड़े का प्रबंधन

डॉ. सुष्मिता तिवारी (पीएचडी स्कॉलर)
डॉ. स्निग्धा, डॉ. नम्रता, डॉ. सुम्त कु.
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालक महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

बछड़े फ़ार्म के भविष्य के भंडार हैं। युवा बछड़ों विशेषकर मादा बछड़ों का सफल पालन-पोषण एक सफल डेयरी उद्यम की कुंजी है। इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि शीघ्र परिपक्वता सुनिश्चित करने के लिए उनका आर्थिक रूप से पालन-पोषण किया जाए। डेयरी परियोजना की सफलता प्रजनन योग्य आयु तक तेजी से पालन-पोषण और न्यूनतम मृत्यु दर पर भी निर्भर करती है। उचित प्रबंधन प्रथाओं द्वारा विशेष रूप से पहले महीने में बछड़ों की मृत्यु दर को 5त्न से कम रखा जाना चाहिए। किसी डेयरी परियोजना की उच्च लाभप्रदता के लिए उच्च विकास दर और कम मृत्यु दर वाले स्वस्थ बछड़े आवश्यक हैं। बड़े बढ़ते स्टॉक या दूध देने वाली गायों के प्रबंधन में, प्रबंधन की चूक विकास दर या दूध उत्पादन को कम कर सकती है, लेकिन बहुत छोटे बछड़े के साथ छोटी गलतियाँ भी बछड़े की मृत्यु और कम लाभप्रदता का कारण बन सकती हैं।

कोलोस्ट्रम पिलाने का महत्व: मवेशियों में एंटीबॉडी (गामा ग्लोब्युलिन) कोलोस्ट्रम के माध्यम से मां से बछड़े में स्थानांतरित हो जाते हैं। ये गामा ग्लोब्युलिन बछड़े द्वारा अवशोषित किए जाएंगे और उसके सिस्टम में प्रवेश करेंगे, जिससे बछड़े के लिए उन सभी रोग पैदा करने वाले एजेंटों और अन्य एंटीजन के खिलाफ एक रेडीमेड एंटीबॉडी प्रतिरोध प्रणाली बनेगी, जिसका मां ने अपने जीवनकाल के दौरान सामना किया था। यह बछड़े को प्रारंभिक चरण में बीमारियों से बचाएगा, जब तक कि उनकी अपनी %एंटीबॉडी निर्माण प्रणाली काम नहीं कर लेती। इस प्रकार, यदि कोलोस्ट्रम नहीं खिलाया जाता है, तो बछड़े एंटीबॉडी कवर से वंचित हो जाते हैं और इसलिए, कई बीमारियों के प्रति संवेदनशील बने रहेंगे।

बछड़ा प्रबंधन के लिए प्रथाओं का पैकेज: युवा बछड़ों का सफल पालन-पोषण डेयरी फार्मिंग उद्यम की सफलता की कुंजी है। बछड़े गाय और बैल के लिए भविष्य के प्रतिस्थापन स्टॉक हैं। इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि शीघ्र परिपक्वता सुनिश्चित करने के लिए उनका पालन-पोषण आर्थिक रूप से और अच्छे तरीके से किया जाए। युवा बछड़ों में उच्च वृद्धि और कम मृत्यु दर/रुग्णता सुनिश्चित करने के लिए बछड़ा प्रबंधन के निम्नलिखित सिद्धांतों का पालन किया जाना चाहिए।

• जन्म के तुरंत बाद नाक के चारों ओर से सभी बलगम या भ्रूण की झिल्लियों को पोंछ लें और सुनिश्चित करें कि बछड़ा सामान्य रूप से सांस ले रहा है। यदि नहीं तो श्वास प्रक्रिया को शीघ्रता से पुनर्जीवित करने के लिए आवश्यक सहायता प्रदान करें। • बछड़े को एक अच्छी तरह से संरक्षित, साफ बिस्तर वाले और सूखे क्षेत्र में ले जाएं। • अगर बांध नहीं छोड़ा गया तो जन्म के तुरंत बाद बछड़ा चाटकर साफ हो जाएगा। अन्यथा बछड़े को साफ सूखे कपड़े या गेहूं/धान के भूसे से पोंछकर सुखा लें। • नाभि को डंठल से एक से दो इंच छोड़कर काटें, उसकी सामग्री को निचोड़ें, स्थानीय संक्रमण को रोकने के लिए नाभि को टिंचर आयोडीन लेगेट में साफ धागे का उपयोग करके डुबोएं। तरल पदार्थ को निचोड़ने के बाद नाभि नाल को 7% टिंचर आयोडीन के घोल में डुबोएं। टिंचर आयोडीन में भिगोया हुआ रुई का फाहा डालें और नाल को बांधें। नाभि क्षेत्र में किसी भी चोट पर ध्यान दें और यदि चोट हो तो उचित ड्रेसिंग करें। यह प्रक्रिया नाभि-रोग की रोकथाम के लिए महत्वपूर्ण है और नाभि को जल्दी ठीक करने में मदद करती है। • सुनिश्चित करें कि बछड़े को जन्म के बाद 1/2-1 घंटे के भीतर उसके बांध से पर्याप्त मात्रा में (लगभग 1 लीटर) पहला कोलोस्ट्रम मिले। जन्म के समय बछड़ों को निष्क्रिय प्रतिरक्षा प्राप्त करने में मदद करने के लिए उन्हें कोलोस्ट्रम मिलना चाहिए। इसके बाद सुनिश्चित करें कि बछड़ों को पहले 4-5 दिनों तक हर 6-8 घंटे में कोलोस्ट्रम मिले। 24 घंटे के दौरान खिलाई गई कुल मात्रा उसके शरीर के वजन का लगभग 1/10 वां हिस्सा होनी चाहिए। • यदि हाथ से खाना खिलाया जाता है तो सुनिश्चित करें कि हाथ में रखी बाल्टी, बाल्टी ठीक से साफ हो। बोतलें बेहतर होती हैं क्योंकि वे सेवन की धीमी दर सुनिश्चित करती हैं और प्रारंभिक जीवन के दौरान पाचन समस्याओं को रोकती हैं। प्रत्येक फीडिंग के बाद उपयुक्त सैनिटाइजर का उपयोग करके उपकरण को साफ करें। • छोटे बछड़ों को साफ और आरामदायक बाड़े में रखें जो गर्म और ठंडे ड्राफ्ट से अच्छी तरह सुरक्षित हों। प्रति बछड़े के लिए पर्याप्त बिस्तर क्षेत्र सुनिश्चित करें। यह भी सुनिश्चित करें कि वह स्थान साफ और सूखा रहे। दस्त की रोकथाम के लिए समूहों की तुलना में ऊंचे चबूतरे पर व्यक्तिगत आवास अधिक प्रभावी है। • छोटे बछड़ों को नियमित रूप से कृमि मुक्त करें और कृमि मुक्ति कार्यक्रम का धार्मिक रूप से पालन करें। डायरिया/बछड़ा स्कोर के खिलाफ पर्याप्त निवारक उपाय करें, जो युवा बछड़ों की एक प्रमुख हत्यारा है। बीमार बछड़ों को अलग करें और उनका अलग से इलाज करें। • बछड़ा बाड़ों में व्यक्तियों/बाहरी लोगों की अनावश्यक आवाजाही को प्रतिबंधित करें। • रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए जन्म के तुरंत बाद मौखिक रूप से या इंजेक्शन द्वारा आयरन और विटामिन ए, डी और ई प्रदान करें। यह कमजोर/एनीमिक बछड़ों में विशेष रूप से उपयोगी है।

दूध छुड़ाना 1. बछड़े को अलग करना और भोजन के लिए उसे अपनी मां से स्वतंत्र करना दूध छुड़ाना कहलाता है। 2. आजकल, बेहतर प्रबंधन के लिए जल्दी दूध छुड़ाने की सलाह दी जाती है। 3. प्रारंभिक दूध छुड़ाने की प्रणाली के तहत, दूध छुड़ाए गए बछड़ों को अलग रखा जाता है और वैज्ञानिक आहार कार्यक्रम और प्रबंधन प्रथाओं का पालन किया जाता है। 4. इस विधि में गाय को कोलोस्ट्रम खिलाने के बाद उसे अपने बछड़े से दूध पीने की अनुमति नहीं होती है। 5. इसके बजाय, गाय का पूरा दूध निकाला जाता है और बछड़े को आवश्यक मात्रा में पूरा दूध या मलाई रहित दूध पिलाया जाता है। 6. दूध छुड़ाए हुए बछड़ों को बाल्टी/निपल बाल्टी से दूध पीने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ताकि दूध पिलाने का प्रबंधन आसान हो। 7. दूध छुड़ाए गए बछड़ों का हर सप्ताह वजन किया जाना चाहिए और खिलाए जाने वाले दूध की मात्रा की गणना उसी के अनुसार की जानी चाहिए।

कली हटाना (Disbudding) 1. कम उम्र में, जब सींग की जड़ कली अवस्था में होती है, सींग की वृद्धि को रोकना डिस्बडिंग कहलाता है। 2. यह मुख्य रूप से विदेशी और संकर नस्ल के मवेशियों में किया जाता है। 3. सींग वाले मवेशी एक-दूसरे को चोट पहुंचाते हैं जिससे भारी आर्थिक नुकसान हो सकता है। 4. सींग वाले जानवर संचालक के लिए खतरा होते हैं और बिना सींग के इन्हें संभालना आसान हो जाता है। 5. शेडों में जानवरों के लिए जगह कम करने के लिए डिसबडिंग भी जरूरी है। 6. बछड़े का 15-20 दिन की उम्र में ही परित्याग कर देना चाहिए। 7. यह गर्म लोहे और रसायनों का उपयोग करके किया जाता है। 8. बिजली गर्म लोहा रक्तहीन विधि है इसका प्रयोग किसी भी मौसम में किया जा सकता है। 9. बिजली से गर्म की गई लोहे की छड़ में स्वचालित नियंत्रण होता है जो तापमान को लगभग 10000 F पर बनाए रखता है, इसे सींग की कली पर 10 सेकंड के लिए लगाना सींग के ऊतकों को नष्ट करने के लिए पर्याप्त है। 10. कास्टिक पोटाश या कास्टिक सोडा उबटन के लिए प्रयोग किया जाने वाला सामान्य रसायन है। 11. ये पेस्ट या घोल के रूप में उपलब्ध हैं। 12. आंखों को रसायनों से बचाने के लिए सींग की कलियों और आसपास के बालों को क्लिप करें, आंखों को वैसलीन की एक अंगूठी से बांधें। 13. रक्तस्राव होने तक कलियों पर रसायन रगड़ें।

कान टैगिंग (Ear tagging) 1. यह कृषि पशुओं की पहचान का सबसे लोकप्रिय तरीका है। 2. यह आसान पर्यवेक्षण, प्रबंधन और सटीक रिकॉर्ड रखरखाव की सुविधा प्रदान करता है। 3. इसमें टैगिंग संदेश और टैग की आवश्यकता होती है 4. टैग में संख्याएँ जानवर की त्वचा के रंग के आधार पर विपरीत और स्पष्ट शैली की होनी चाहिए। 5. टैगिंग के लिए कान में टैग का स्थान आधार और कान के सिरे के बीच का आधा होना चाहिए। 6. एप्लिकेटर से कान को छेदकर कान में ईयर टैग लगाया जाता है।

बधिया करना (Castration)

1. पशु को विनम्र बनाने, अंधाधुंध प्रजनन को नियंत्रित करने और कुछ जननांग रोगों को रोकने के लिए बधियाकरण किया जाता है। 2. यह शरीर के वजन को तेजी से बढ़ाने और मांस की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए भी किया जाता है। 3. बधियाकरण से गर्दन भी पतली हो जाती है जिससे विशेष रूप से काम करने वाले मवेशियों में जूए की सही फिटनेस में मदद मिलती है। 4. इसे युवा पशुओं में 2-3 महीने के भीतर शल्य चिकित्सा विधि और इलास्ट्रेटर विधि के माध्यम से किया जाता है। 5. एक वर्ष की आयु के भीतर वयस्क पशुओं में बर्डिज़ो कैस्ट्रेटर का उपयोग करके बंद विधि के माध्यम से बधियाकरण किया जाता है। 6. बर्डिज़ो कैस्ट्रेटर शुक्राणु कॉर्ड को कुचल देता है और इस प्रकार वृषण में रक्त को रोक देता है और इसके परिणामस्वरूप वृषण शोष हो जाता है और शुक्राणु उत्पादन बंद हो जाता है। 7. बधियाकरण ठंड के मौसम में किया जाना चाहिए और मक्खी की समस्या के डर से बरसात के मौसम से सख्ती से बचना चाहिए। 8. बधिया किये गये पशुओं को कुछ दिनों तक स्वच्छ एवं आरामदायक बाड़े में आराम देना चाहिए। 9. बर्डिज़ो कैस्ट्रेटर विधि सुरक्षित, त्वरित और संक्रमण होने की कम संभावना है। 10. इलास्ट्रेटर के छल्ले जानवर के लिए बहुत दर्दनाक होते हैं और इसलिए आमतौर पर इसकी अनुशंसा नहीं की जाती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

एंथ्रेक्स-पशुओं की एक घातक बीमारी

डॉ रवि सिकरोडिया, दलजीत छाबड़ा
जोयसी जोगी, राखी गागिंल
राकेश शारदा एवं अंकित जैन पशु
चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय महू (म.प्र.)

इस बीमारी को गिल्टी रोग के नाम से भी जाना जाता है यह एक जीवाणु जनित रोग है इस बीमारी में पशु की अचानक मृत्यु हो जाती है यह रोग मुख्य रूप से बरसात के दिनों में या बरसात के बाद देखने को मिलता है यह रोग मुख्य रूप से गाय एवं भेंसों को प्रभावित करता है परन्तु भेड़ बकरी एवं घोड़ों आदि में भी यह रोग हो सकता है मनुष्य भी इस बीमारी के लिए संवेदनशील होते है रोगी पशुओं, खाल या बालों से भी मनुष्यों में हो सकती है यह एक नोटीफाईबिल बीमारी है ! इस बीमारी के जीवाणु को जैविक हथियार के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है

रोग का कारण

यह बीमारी बेसीलस ऐन्थ्रैसिस नामक ग्राम पॉजिटिव जीवाणु के द्वारा होती है जो की स्पोर बनाने वाला, कैप्सूल बनाने वाला, नॉन मोटाईल जीवाणु होता है इस बीमारी का जीवाणु हवा या ओक्सीजन की उपस्तिथि में स्पोर बनाते है जो की बहुत अधिक रजिसटेंट होते है एवं प्रतिकूल परिस्तिथि में जीवाणु की रक्षा करते है जीवाणु के स्पोर एक स्थान से दुसरे स्थान पर बाढ़ के द्वारा, अन्य मांस खाने वाले जानवरों द्वारा, फैलाये जाते है केंचुए भी जमीन के अन्दर से स्पोर को ऊपर लाने में मदद करते है

रोग के लक्षण

इस बीमारी के मुख्य रूप से दो प्रकार देखने को मिलते है

1. अति तीव्र प्रकार

इस प्रकार की एंथ्रेक्स बीमारी में पशु की अचानक मृत्यु हो जाती है पशु के मुह नाक गुदा से झाग्युक्त काला रक्त निकलता हुवा मिलता है पशु का पेट फूल जाता है तथा शव शिथिल हो जाता है अकड़ता नहीं है यह प्रकार मुख्या रूप से भेड़ में देखने को मिलता है प्रभावित पशु में कभी कभी मांसपेशिओं में कम्पन, दांतों का किटकिटाना, चक्कर आना आदि।

2. तीव्र प्रकार

इस प्रकार की बिमारी का इन्क्यूबेशन पीरियड 1-3 दिन का होता है इस प्रकार में अधिक बुखार 105-107 ए फा तक आता है साथ ही पशु पूर्ण रूप से सुस्तहो जाता है है मांसपेशियों में कम्पन, नाड़ी का तेज चलना. तेज सांस चलना, धुध देना बहुत कम कर देना, कब्ज तथा दस्त भी देखने को मिलता है कभी कभी इन पशुओं में जहरबाद भी देखने को मिलता है। गाय एवं भेसों में यह रोग अधिक तीव्रता में देखने को मिलता है एवं इन्क्यूबेशन पख्रिओद भी कम होता है पशु बहुत तेज से रंभाते है तथा खाना पीना एक दम कम कर देते है जुगाली करना भी बंद कर देते है शारीर के विभिन्न भागों में जैसे गर्दन, वक्ष, फ्लेंक में सुजन आ जाती है पशुओं में दस्त एवं दस्त में खून आना भी देखने को मिलता है

घोड़ों में तीव्र पेट में दर्द देखने को मिलता है शरीर पर सुजन, सांस लेने में परेशानी, अत्यधिक तीव्र बुखार भी देखने को मिलता है

सूअर में तीव्र ज्वर एवं गले में सुजन देखने को मिलती है सांस लेने में परेशानी मुख्या रूप से देखने को मिलती है

3. कम तीव्रता वाला रोग: कुछ पशुओं में यह बीमारी कम तीव्रता के रूप में देखने को मिलती है इस प्रकार के पशु मुख्या रूप से रोग को फैलाने में सहायक होते है

रोग की डायग्नोसिस

पशु की अचानक म्रत्यु होना तथा नाक एवं मुह से काले रंग के रक्त का निकलना, पेट का फुला हुआ होना, शव का ना अकड़ना भी पशु के एंथ्रेक्स बिमारी से मृत्यु की ओर ध्यान आकर्षित करता है ऐसे में पशु के शव का पोस्ट मोरटम नहीं करना चाहिए ! पोस्ट मोरटम करने से बीमारी के जीवाणु का वातावरण में फैलने का खतरा बना रहता है ऐसे में मृत पशु के रक्त की स्लाइड बनाकर लैब में परिक्षण के लिए भेजना चाहिए ! लैब में ग्राम स्टेनिंग करके देखा जाता है की जीवाणु इस बीमारी के है कि नहीं। इसके आलावा विशेष तरीकों से भी बीमारी का पता लगाया जाता है जिनमे की अस्कोलिस टेस्ट, मैकफैडीन रिएक्शन प्रमुख है

उपचार

जैसा की हम जानते है की टीकाकरण किसी रोग से बचने सबसे उपयुत तरीका है अतः समय पर इस बीमारी का टीका सभी संवेदनशील पशुओं को लगवाना चाहिए इसके लिए एंथ्रेक्स स्पोर वैक्सीन आती है जो की मध्य प्रदेश में सभी पशु चिकित्सालय पर उपलब्ध होती है परन्तु अगर इस बीमारी के लक्षण दिखने पर पशु को तुरंत पशु चिकित्षक द्वारा उचित इलाज करवाया जाना चाहिए ! पेनेसिलिन, टेरामायसिन नमक एंटीबायोटिक्स भी इलाज के लिए अनुकूल है साथ बुखार की दावा भी देना चाहिए!

बचाव एवं रोकथाम

1. बचाव के लिए पशुओं में समय पर टीकाकरण करना चाहिए
2. संक्रमित पशु को स्वस्थ्य पशु से अलग रखना चाहिए एवं उसके खाने एवं पीने का अलग से प्रबंध करना चाहिए
3. एंथ्रेक्स से अन्देषित मृत हुवे पशु का पोस्ट मोरटम नहीं करना चाहिए एवं सैंपल लेकर लैब में जांच के लिए तुरंत भेजना चाहिए
4. चूँकि यह बीमारी पशु से मनुष्य में भी हो सकती है अतः पशु की देखभाल करते समय विशेष ध्यान रखना चाहिए एवं सभी तरह के प्रीकोसन लेना चाहिए एवं जल्द से जल्द डॉक्टर से संपर्क करना चाहिए

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

केला के तना छेदक कीट का परिचय एवं प्रबंधन

डॉ. द्वारका पीएच.डी., कीटशास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर

निशा चढ़ार एम.एससी.(बॉटनी), महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, टीकमगढ़

वैज्ञानिक नाम : ओडोइपोरस लॉन्गिकोलिस (स्फेनोफोरस ग्लोब्रिडिस्कस/ स्फेनोपोरस प्लैनिपेनिस/स्फेनोफोरस ग्लैब्रिकोलिस/राइनकोफोरस गेज/ओडोइपोरस लॉन्गिकोलिस, परिवारः कुरकुलियोनिडी, गणः कोलियोप्टेरा

परिचय

घुन मुख्य रूप से निशाचर होते हैं, हालांकि बादल भरे दिनों और ठंडे महीनों के दौरान वे दिन के समय उड़ सकते हैं। ये अक्सर खुद को स्यूडोस्टेम के भीतर और कटे हुए स्यूडोस्टेम के सड़ने वाले ऊतकों में सीमित कर लेते हैं। घुन के सभी जीवन चरण पूरे वर्ष संक्रमित पौधे में मौजूद रहते हैं। वयस्क मजबूत उड़ने वाले होते हैं और इस तरह एक पौधे से दूसरे पौधे पर जाते हैं। ओविपोजिशन केवल पत्ती के आवरण में होता है। बड़े पैमाने पर सुरंग बनाकर रसीला म्यान के ऊतकों पर लार्वा फीड करता है और तने तक पहुंच सकता है। यदि पौधे के उन्नत पूर्व-पुष्पन चरण के दौरान लार्वा निकलता है, तो आरोही फूल की कली और स्यूडोस्टेम के अंदर के पेडुंकल को खाया जा सकता है और क्षतिग्रस्त किया जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप फूल की कली का उद्भव नहीं होता है जो छद्म तने के अंदर सड़ जाता है। 20 प्रतिशत पौधों में इसी कारण से फूल नहीं लगते हैं। लार्वा द्वारा बनाई गई सुरंगों की गहराई 8 से 10 सेमी के बीच होती है। सुरंगें व्यापक हैं और फलों के डंठल के रूप में या प्रकंद के पास सबसे निचले कॉलर क्षेत्र तक जा सकती हैं। लार्वा पांच इंस्टार से गुजरता है। पाँचवा इंस्टार लार्वा एक गैर-भक्षण पूर्व-पुतली चरण में प्रवेश करता है और अपने शरीर के चारों ओर म्यान की रेशेदार सामग्री के छोटे टुकड़ों को घुमाकर एक कोकून का निर्माण करता है। विकासात्मक दर अत्यधिक जलवायु कारकों पर निर्भर करती है, जिसके जीवन काल की अवधि गर्मियों की तुलना में सर्दियों के मौसम में अधिक होती है। वयस्क केला छेदक केले के पौधों द्वारा छोड़े गए वाष्पशील पदार्थों से आकर्षित होते हैं। घुन का संक्रमण सामान्य रूप से 5 और महीने पुराने पौधों में शुरू होता है। संक्रमण के शुरुआती लक्षण तने पर छोटे पिनहेड और आकार के छिद्रों की उपस्थिति होते हैं, पत्ती के डंठल के आधार से रेशेदार उत्सर्जन, वयस्क घुन और स्यूडोस्टेम पर छिद्रों से एक चिपचिपा पदार्थ का उत्सर्जन संक्रमण के उन्नत चरणों के दौरान, तना, जब विभाजित खुला होता है, लीफ शीथ और वास्तविक तने दोनों में गहन टनलिंग को रोकता है। जब वास्तविक तना और पेडनकल को बाद में सुरंग बनाया जाता है फूल, फल ठीक से विकसित नहीं होते है। लार्वा टनलिंग द्वारा तने के कमजोर होने के परिणामस्वरूप हवा से टूटना या परिपक्व गुच्छे का वजन सहन करने में असमर्थता हो सकती है। यह अनुमान लगाया गया है कि फसल के विकास चरण के आधार पर तना घुन 10 से 90 प्रतिशत उपज हानि का कारण बनता है।

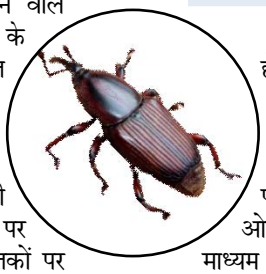

जीवन चक्र

केले के तने के घुन का जीवनकाल लंबा होता है और कई वयस्क एक वर्ष तक जीवित रहते हैं। एक संभोग के बाद मादा द्वारा रखे गए अंडों की औसत संख्या प्रति दिन एक अंडे की दर से नौ अंडे होती है। ग्रेवीड मादा पीले सफेद, अण्डाकार अंडे देती है, ओवीपोजीटर्स को ऑविपोजल स्लिट्स के माध्यम से रोस्ट्रम द्वारा काटकर स्यूडोस्टेम के लीफ शीथ की बाहरी एपिडर्मल परत पर हवा के कक्षों में डालती है। अंडे रोस्ट्रम द्वारा बनाए गए ओवीपोजीशन स्लिट के माध्यम से पत्ती के आवरण में एक अंडे/वायु कक्ष की दर से वायु कक्ष के भीतर धकेले जाते हैं। अंडे जमीनी स्तर से लगभग 1 से 1.5 मीटर ऊपर पेडोस्टेम में दिए जाते हैं। अंडे की अवधि 4 से 8 दिन होती है। ग्रब अपोडस, ग्रब अवधि पांच लार्वा इंस्टार के साथ 30 से 65 दिन होती है। ग्रब रेशेदार आवरण सामग्री के टुकड़ों से बने कोकून में परिधि की ओर सुरंग में पुतले बनाते हैं। प्यूपल अवधि 24 से 44 दिन होती है। वयस्क की आयु दो वर्ष होती है।

क्षति के लक्षण

केले के तना छेदक कीट का प्रकोप 4 से 5 माह पुराने पौधो में होता है। शुरूआत में पत्तियाँ पीली पडती है, तत्पश्चात तना से गोंद जैसा पदार्थ निकालना शुरू हो जाता है। वयस्क कीट तना के के आधार पर दिखाई देते है। तने मे लंबी सुरंग बन जाती है तत्पश्चात जल एवं खाद्य नली को ब्लाक कर देता है, जो बाद मे सड़कर दुर्गन्ध पैदा करता है।

कीट प्रबंधन के तरीके

प्रभावित एव सूखी पत्तियों को काटकर खेत से बाहर जला देना चाहिए, खेत की साफ सफाई पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। समय- समय पर ट्राइकोग्रामा कार्ड पचास हजार प्रति हेक्टेयर की दर से स्थापित करना चाहिए। नए सकर्स/पौधे की महीन जड़ को समय - समय पर निकालते रहना चाहिए। घैर काटने के बाद पौधो को जमीन की सतह से काट कर उनके उपर कीटनाशक जहर जैसे- इमिडाक्लोप्रिड (1 मिली/लिटर पानी) के घोल का छिडकाव कर अण्डो एवं वयस्क कीटो को नष्ट करे। पौध लगाने के पाचवे महीने में प्रोफेनोफॉस (1 प्रतिशत) का तने पर लेप करके कीड़ो का नियंत्रण किया जा सकता है। खेत में प्रति हेक्टेयर 6 से 8 की संख्या में गंध प्रपंच/फेरोमोन ट्रैप स्थापित करना चाहिए।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

मध्य भारत के लिए रबी की फसल: गेहूँ

दिलीप कुमार वर्मा (प्रधान वैज्ञानिक)
उपेन्द्र सिंह चौधरी (मुख्य तकनीकी अधिकारी)
रविन्द्र पंवार (वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता भा.कृ.अ. प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्था, क्षेत्रीय केंद्र इन्दौर (म.प्र.)

गेहूँ भारतीय अन्नपूर्णता का स्तम्भ, एक महत्वपूर्ण अनाज है जो देश के अर्थनीति में अहम भूमिका निभाता है। गेहूँ का उत्पादन और इस पर आधारित उद्योग भारतीय कृषि एवं अर्थव्यवस्था के लिए क्रियाशील रूप से योजना बनाने में मदद कर रहे हैं। गेहूँ का प्रयोग मनुष्य अपने जीवन यापन हेतु मुख्यत रोटी के रूप में प्रयोग करते हैं,जिसमे प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाई जाती है भारत में मध्यप्रदेश, पंजाब, हरियाणा एवं उत्तरप्रदेश मुख्य फसल उत्पादक क्षेत्र है।

उपयुक्त जलवायु: गेहूँ की खेती के लिए समशीतोषण जलवायु की आवश्यकता होती है, इसकी खेती के लिए अनुकूल तापमान बुवाई के समय 20-25 डिग्री सेंटीग्रेट उपयुक्त माना जाता है, गेहूँ की खेती मुख्यत सिंचाई पर आधारित होती है गेहूँ की खेती के लिए दोमट भूमि सर्वोत्तम मानी जाती है, लेकिन इसकी खेती बलुई दोमट,भारी दोमट, मटियार तथा मार एवं कावर भूमि में की जा सकती है। साधनों की उपलब्धता के आधार पर हर तरह की भूमि में गेहूँ की खेती की जा सकती है।

खेत की तैयारी: गेहूँ की बुवाई अधिकतर धान, सोयाबीन की फसल के बाद ही की जाती है, पहली जुताई मिटटी पलटने वाले हल से तथा बाद में डिस्क हैरो या कल्टीवेटर से 2-3 जुताईयां करके खेत को समतल करते हुए भुरभुरा बना लेना चाहिए, डिस्क हैरो से धान के ठूंठे कट कर छोटे छोटे टुकड़ों में हो जाते हैं इन्हे शीघ्र सड़ाने हेतु 20-25 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर की दर से पहली जुताई में अवश्य दे देनी चाहिए। इससे ठूंठे, जड़ें सड़ जाती हैं ट्रैक्टर चालित रोटावेटर से एक ही जुताई द्वारा खेत पूर्ण रूप से तैयार हो जाता है।

बीज बुवाई: गेहूँ कि बीजदर लाइन से बुवाई करने पर 100 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर तथा मोटा दाना 125 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर कि दर से प्रयोग करते हैं, बुवाई के पहले बीजशोधन अवश्य करना चाहिए बीजशोधन हेतु बाविस्टिन, कार्बेन्डाजिम कि 2 ग्राम मात्रा प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज शोधित करके ही बीज की बुवाई करनी चाहिए।

गेहूँ की बुवाई समय से एवं सूखे में बुवाई करनी चाहिए। इसी प्रकार जैसे-जैसे बुवाई में बिलम्ब होता है। वैसे-वैसे पैदावार में गिरावट आती जाती है। गेहूँ की बुवाई सीड ड्रिल से करनी चाहिए तथा गेहूँ की बुवाई हमेशा लाइन में करें कम पानी चाहने वाली प्रजातियों की बुवाई 10 अक्टूबर से 25 अक्टूबर तक कर देनी चाहिए, अब आता है सिंचित दशा इसमे की 4-5 पानी देने वाली है। समय से अर्थात 10-25 नवम्बर, और सिंचित दशा में जो देर से बुवाई करने वाली प्रजातियां हैं वो 15-25 दिसम्बर तक उचित नमी में बुवाई करनी चाहिए, उसरीली भूमि में जिन प्रजातियों की बुवाई की जाती है वे 15 अक्टूबर के आसपास उचित नमी में बुवाई अवश्य कर देना चाहिए। गेहूँ की बुवाई देशी हल के पीछे लाइनों में करनी चाहिए या फर्टीसीड्रिल से भूमि में उचित नमी पर करना लाभदायक है, पंतनगर सीड्रिल बीज व खाद सीड्रिल से बुवाई करना अत्यंत लाभदायक है।

जल प्रबंधन: सामान्यतः गेहूँ की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 4-6 सिचाईयां की आवश्यकता पड़ती है। ये निम्न अवस्थाओं में करनी चाहिए, पहली क्राउन रूट या ताजमूल अवस्था में बुवाई के 20-25 दिन बाद, दूसरी टिलरिंग या कल्ले निकलते समय बुवाई के 40-45 दिन बाद, तीसरी सिंचाई दीर्घ संघ या गांठे बनते समय बुवाई के 60-65 दिन बाद, तथा चौथी सिंचाई फ्लावरिंग स्टेज या पुष्पावस्था बुवाई के 80-85 दिन बाद एवं पाचवी सिंचाई मिल्किंग स्टेज या दुग्धावस्था बुवाई के 100-105 दिन बाद, आखिरी सिंचाई यानि छठी दाना भरते समय बुवाई के 115-120 दिन बाद सिंचाई करनी चाहिए।

पोषण प्रबंधन: किसान भाइयों उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए, गेहूँ की अच्छी उपज के लिए खरीफ की फसल के बाद भूमि में 120 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस, तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर तथा देर से बुवाई करने पर 80 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस, तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश, अच्छी उपज के लिए 60 क्विं. प्रति है. सड़ी गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिए। गोबर की खाद एवं आधी नत्रजन की मात्रा तथा पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय आखिरी जुताई में या बुवाई के समय खाद का प्रयोग करना चाहिए, शेष नत्रजन की आधी मात्रा पहली सिंचाई पर तथा बची शेष मात्रा दूसरी सिंचाई पर प्रयोग करनी चाहिए।

खरपतवार प्रबंधन: गेहूँ की फसल में रबी के सभी खरपतवार जैसे बथुआ, प्याजी, खरतुआ, हिरनखुरी, चटरी, मटरी, सैंजी, अंकरा, कृष्णनील, गेहुंसा, तथा जंगली जई,आदि खरपतवार लगते हैंढ़ इनकी रोकथाम निराई- गुड़ाई करके की जा सकती है लेकिन कुछ रसायनों का प्रयोग करके रोकथाम किया जा सकता है जो की निम्न है जैसे की पेंडामेथेलिन 30 ईसी 3.3 लीटर की मात्रा 800-1000 लीटर पानी में मिलकर फ़्लैटफैन नोजिल से प्रति हैक्टर की दर से छिडकाव बुवाई के बाद 1-2 दिन तक करना चाहिए जिससे की जमाव खरपतवारों का न हो सके, चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारो को नष्ट करने के लिए बुवाई के 30-35 दिन बाद एवं पहली सिंचाई के एक सप्ताह बाद 2,4,डी सोडियम साल्ट 80% डब्लू. पी. की मात्रा 625 ग्राम 600-800 लीटर पानी में मिलकर 35-40 दिन बाद बुवाई के फ़्लैटफैन नोजिल से छिड़काव करना चाहिए। इसके बाद जहां पर चौड़ी एवं संकरी पत्ती दोनों ही खरपतवार हों वहां पर सल्फोसल्फ्युरान 75% 32 एम.एल. प्रति है. इसके साथ ही मेटासल्फ्युरान मिथाइल 5 ग्राम डब्लू.जी. 40 ग्राम प्रति है. बुवाई के 30-35 दिन बाद छिड़काव करना चाहिए, इससे खरपतवार नहीं उगते है या उगते हैं तो नष्ट हो जाते हैं।

रोग प्रबंधन: खड़ी फसल में बहुत से रोग लगते हैं, जैसे अल्टरनेरिया, गेरुई या रतुआ एवं ब्लाइट का प्रकोप होता है जिससे भारी नुकसान हो जाता है इसमे निम्न प्रकार के रोग और लगते हैं जैसे काली गेरुई, भूरी गेरुई, पीली गेरुई, सेंहू, कण्डुआ, स्टाम्प ब्लाच, करनालबंट इसमे मुख्य रूप से झुलसा रोग लगता है पत्तियों पर कुछ पीले भूरे रंग के लिए हुए धब्बे दिखाई देते हैं, ये बाद में किनारे पर कत्थई भूरे रंग के तथा बीच में हल्के भूरे रंग के हो जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए मैन्कोजेब 2 किग्रा. प्रति हैक्टर की दर से या प्राफिकोनाजोल 25% ईसी की आधा लीटर मात्रा 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए, इसमे गेरुई या रतुआ मुख्य रूप से लगता है,गेरुई भूरे पीले या काले रंग के, काली गेरुई पत्ती तथा तना दोनों में लगती है इसकी रोकथाम के लिए मैन्कोजेब 2 किग्रा. या जिनेब 25% ई. सी. आधा लीटर, 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करना चाहिए। यदि झुलसा, रतुआ, करनालबंट तीनो रोगों की संका हो तो प्रोपिकोनाजोल का छिड़काव करना अति आवश्यक है।

कीट प्रबंधन: गेहूँ की फसल में कौन कौन से कीट लगते हैं, और उनका नियंत्रण वो किस प्रकार करें?

गेहूँ की फसल में शुरू में दीमक कीट बहुत ही नुकसान पहुंचता है इसकी रोकथाम के लिए दीमक प्रकोपित क्षेत्र में नीम की खली 10 कुंतल प्रति हैक्टर की दर से खेत की तैयारी के समय प्रयोग करना चाहिए तथा पूर्व में बोई गई फसल के अवशेष को नष्ट करना अति आवश्यक है, इसके साथ ही माहू भी गेहूँ की फसल में लगती है, ये पत्तियों तथा बालियों का रस चूसते हैं, ये पंखहीन तथा पंखयुक्त हरे रंग के होते हैं, सैनिक कीट भी लगता है पूर्ण विकसित सुंडी लगभग 40 मि.मी. लंबी बादामी रंग की होती है। यह पत्तियों को खाकर हानि पहुंचाती है, इसके साथ साथ गुलाबी तना बेधक कीट लगता है ये अण्डो से निकलने वाली सुंडी भूरे गुलाबी रंग की लगभग 5 मिली मीटर की लम्बी होती है, इसके काटने से फल की वानस्पतिक बढ़वार रुक जाती है। इन सभी कीटों की रोकथाम हेतु कीटनाशी जैसे क्यूनालफास 25 ई.सी. की 1.5-2.0 लीटर मात्रा 700-800 ली. पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए या सैपरमेथ्रिन 750 मी.ली. या फेंवेलेरेट 1 लीटर 700-800 ली. पानी में घोलकर प्रति है. की दर से छिड़काव करना चाहिए। कीटों के साथ साथ चूहे भी लगते हैं, ये खड़ी फसल में नुकसान पहुंचाते हैं। चूहों के लिए जिंक फास्फाइट या बेरियम कार्बोनेट के बने जहरीले चारे का प्रयोग करना चाहिए, इसमें जहरीला चारा बनाने हेतु 1 भाग दवा 1 भाग सरसों का तेल तथा 48 भाग दाना मिलाकर बनाया जाता है जो कि खेत में रखकर प्रयोग करतें हैं।

फसल कटाई: फसल पकते ही बिना प्रतीक्षा किये हुए कटाई करके तुरंत ही मड़ाई कर दाना निकाल लेना चाहिए, और भूसा व दाना यथा स्थान पर रखना चाहिए, अत्यधिक क्षेत्रो वाली फसल कि कटाई कम्बाईन से करनी चाहिए इसमें कटाई व मड़ाई एक साथ हो जाती है जब कम्बाईन से कटाई कि जाती है

उपज और भण्डारण : मौसम का बिना इंतजार किये हुए उपज को बखारी या बोरो में भर कर साफ सुथरे स्थान पर सुरक्षित कर सूखी नीम कि पत्ती का बिछावन डालकर करना चहिए या रसायन का भी प्रयोग करना चाहिए। असिंचित दशा में 35-40 क्विं. प्रति है. होती है, सिंचित दशा में समय से बुवाई करने पर 55-60 क्विं. प्रति है. पैदावार मिलती है, तथा सिंचित देर से बुवाई करने पर 40-45 क्विंटल प्रति हैक्टर तथा उसरीली भूमि में 30-40 क्विं. प्रति हैक्टर पैदावार प्राप्त होती है।

प्रजातियां: मध्य भारत के लिए गेहूँ की प्रजातियों का चुनाव भूमि एवं साधनों की दशा एवं स्थित के अनुसार किया जाता है, मुख्यत: तीन प्रकार की प्रजातिया होती है जिसमे आगेती बुवाई, समय से एवं पछेती बुवाई वाली प्रजातियाँ निम्न हैं-

बुवाई अवस्था	बुवाई का समय	सिंचाई	चन्दौसी / शरबती	कठिया / मालवी
अगेती	20 अक्टूबर से 10 नवम्बर	1–2 सिंचाई	एच.आई. 1531(हर्षिता)एच.डी. 2987(पूसा बहार), एच.आई. 1605 (पूसा उजाला) ,जे.डब्ल्यू. 3020, जे.डब्ल्यू. 3173,जे.डब्ल्यू. 3211, जे.डब्ल्यू. 3269, एम.पी. 3288, डी.बी.डब्ल्यू. 110एच.आई. 1655 (पूसा हर्षा)	एच.आई. 8777 (पूसा गेहूँ 8777), एच.आई. 8802 (पूसा गेहूँ 8802),एच. आई. 8805 (पूसा गेहूँ 8805),एच.आई. 8823 (पूसा प्रभात),डी. डी. डब्ल्यू.47 एच.आई. 8830 (पूसा कीर्ति)
समय से	10 से 25 नवम्बर	4–5 सिंचाई	जे.डब्ल्यू. 1201, जी.डब्ल्यू. 273,जी.डब्ल्यू. 322, जी.डब्ल्यू. 366,जी.डब्ल्यू. 513, एच.आई.1544 (पूर्णा),एच.आई.1636 (पूसा वकुला) एच.आई 1650 (पूसा ओजस्वी)	एम.पी.ओ.1255,एच.आई. 8663 (पोषण), एच.आई. 8713 (पूसा मंगल) ,एच.आई. 8737 (पूसा अनमोल),एच.आई. 8759 (पूसा तेजस) एच.आई. 8826 (पूसा पोष्टिक)
पछेती	दिसम्बर–जनवरी	4–5 सिंचाई	जे.डब्ल्यू.1202, जे.डब्ल्यू.1203,एम.पी. 3336, राज. 4238,एच. डी. 2932 (पूसा111),एच.आई.1634 (पूसा अहिल्या)	—

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

एंटीबायोटिक प्रतिरोध: एक वैश्विक चिंता

आशा, पूनीत गोयल नानाजी देशमुख पशु चिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

पूजा पंडित दीनदयाल उपाध्याय पशु चिकित्सा विज्ञान वि.वि. एवं गो अनुसंधान संस्थान दुवासु , मथुरा

रवि डबास, भूपेन्द्र भाकृअनुप-भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान इज्जतनगर, बरेली (उ.प्र.)

सारांश

एंटीबायोटिक्स ने चिकित्सा जगत में क्रांतिकारी बदलाव लाए हैं, लेकिन इनके अत्यधिक और गलत उपयोग से बैक्टीरिया में प्रतिरोध विकसित हो रहा है, जिससे इलाज चुनौतीपूर्ण हो गया है। एंटीबायोटिक प्रतिरोध का प्रमुख कारण अनावश्यक उपयोग, अधूरी खुराक, और खेती एवं पशुपालन में एंटीबायोटिक्स का अत्यधिक प्रयोग है। इसका परिणाम अप्रभावी इलाज, लंबी अस्पताल में भर्ती, और उच्च मृत्यु दर के रूप में सामने आ रहा है। विशेष रूप से विकासशील देशों में यह समस्या और गंभीर है, जहां एंटीबायोटिक्स की आसानी से उपलब्धता और गैर-जिम्मेदाराना उपयोग इसका कारण है। एंटीबायोटिक प्रतिरोध से निपटने के लिए सही और संयमित उपयोग, नए एंटीबायोटिक्स का विकास, स्वच्छता, और टीकाकरण पर जोर देना जरूरी है। भविष्य में फेज थेरेपी, नए एंटीबायोटिक्स, और निष्क्रिय टीकाकरण जैसे उपाय प्रतिरोध को नियंत्रित करने में सहायक हो सकते हैं। वैश्विक संगठनों ने इसे गंभीर स्वास्थ्य संकट बताया है, और इसके समाधान के लिए सभी का सहयोग आवश्यक है। निष्कर्षतः, जागरूकता, उचित खुराक, और एक ठोस रणनीति के बिना एंटीबायोटिक प्रतिरोध को नियंत्रित करना मुश्किल होगा, जो भविष्य में गंभीर स्वास्थ्य संकट का कारण बन सकता है।

परिचय

एंटीबायोटिक्स ने चिकित्सा और समाज में अहम भूमिका निभाई है, लाखों लोगों की जान बचाई है। 1950-1970 का समय नए एंटीबायोटिक्स की खोज का स्वर्ण युग था जिसकी शुरुआत अलेक्जेंडर फ्लेमिंग और पॉल एर्लिच के कार्यों से हुई। फ्लेमिंग ने चेताया था कि एंटीबायोटिक्स की पूरी खुराक न लेने पर प्रतिरोध विकसित हो सकता है। आज, एंटीबायोटिक्स के गलत उपयोग से बैक्टीरिया में प्रतिरोध बढ़ गया है, जिससे कई बीमारियों का इलाज मुश्किल हो रहा है। यह लेख एंटीबायोटिक प्रतिरोध के कारण, इसके परिणाम और इससे निपटने के तरीकों पर ध्यान केंद्रित करता है।

एंटीबायोटिक प्रतिरोध कैसे विकसित होता है?

एंटीबायोटिक प्रतिरोध तब होता है जब बैक्टीरिया एंटीबायोटिक दवाओं के खिलाफ बचाव की क्षमता विकसित कर लेते हैं। इसके कई मुख्य कारण होते हैं:

1.अत्यधिक उपयोग: जब एंटीबायोटिक्स का अत्यधिक या अनावश्यक उपयोग होता है, तो बैक्टीरिया में प्रतिरोध विकसित होने की संभावना बढ़ जाती है।

2.अधूरी खुराक: कई बार लोग एंटीबायोटिक की पूरी खुराक नहीं लेते हैं, जिससे जीवाणु पूरी तरह से नष्ट नहीं हो पाते और जीवित बचे बैक्टीरिया प्रतिरोधी बन जाते हैं।

3.खेतों और पशुपालन में एंटीबायोटिक का उपयोग: खेती और पशुपालन में एंटीबायोटिक का अत्यधिक प्रयोग भी प्रतिरोध के विकास का कारण बनता है।

प्रभाव

एंटीबायोटिक प्रतिरोध सिर्फ प्रयोगशाला में ही चिंता का विषय नहीं है, बल्कि यह ऐसे खतरनाक संक्रमणों का कारण बनता है जो जीवन के लिए खतरा बन सकते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने चेतावनी दी है कि अगर एंटीबायोटिक प्रतिरोध को नियंत्रित करने के लिए कदम नहीं उठाए गए, तो हम एक ऐसे युग में प्रवेश कर सकते हैं जहां एंटीबायोटिक्स से होने वाले संक्रमणों का इलाज नहीं हो सकेगा, जिससे लोगों की मौत हो सकती है। इस समस्या को नजरअंदाज करना संभव नहीं है। विकासशील देश इस खतरे के प्रति सबसे अधिक संवेदनशील हैं, जहां एंटीबायोटिक्स की सस्ती कीमत, आसानी से उपलब्धता और इनके गैर-जिम्मेदाराना उपयोग के कारण प्रतिरोध तेजी से बढ़ रहा है। इन देशों में एंटीबायोटिक प्रतिरोध न केवल स्वास्थ्य पर, बल्कि आर्थिक स्थिति और जीवन की गुणवत्ता पर भी बुरा असर डाल रहा है। दवाओं के गलत और अत्यधिक उपयोग को रोकना अब एक बड़ी चुनौती बन गया है।

एंटीबायोटिक प्रतिरोध के बढ़ने से गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं, जैसे:

अप्रभावी इलाज: सामान्य संक्रमणों का इलाज मुश्किल हो जाता है।

लंबे अस्पताल में भर्ती: मरीजों को अधिक समय तक अस्पताल में रहना पड़ सकता है।

उच्च मृत्यु दर: कई संक्रमणों के इलाज में देरी या विफलता से मृत्यु दर बढ़ सकती है।

समाधान

1.एंटीबायोटिक का सही और संयमित उपयोग: डॉक्टर की सलाह के बिना एंटीबायोटिक न लें और पूरी खुराक का पालन करें।

2.नए एंटीबायोटिक का विकास: वैज्ञानिक और दवा कंपनियाँ नए एंटीबायोटिक विकसित करने पर ध्यान दें।

3.स्वच्छता और टीकाकरण: संक्रमण को रोकने हेतु स्वच्छता और टीकाकरण पर जोर देना जरूरी है।

एंटीबायोटिक प्रतिरोध एक वैश्विक समस्या है, और इसका समाधान सभी के सहयोग से ही संभव है। डॉक्टर, वैज्ञानिक, सरकारें और आम जनता सभी को मिलकर इस समस्या का सामना करना होगा ताकि भविष्य में गंभीर स्वास्थ्य संकटों से बचा जा सके।

भविष्य के हस्तक्षेप

रोग नियंत्रण एवं रोकथाम केंद्र (CDC), संक्रामक रोग सोसायटी ऑफ अमेरिका, विश्व आर्थिक मंच और विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) जैसे बड़े संगठनों ने एंटीबायोटिक प्रतिरोध को "वैश्विक सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा" घोषित किया है। जीवाणु संक्रमणों का इलाज कठिन होता जा रहा है, और एंटीबायोटिक तथा बहु-दवा प्रतिरोध के कारण कई बार इलाज असफल हो जाता है। इस समय नए और प्रभावी एंटीबायोटिक्स की बहुत आवश्यकता है। इसके साथ ही, बैक्टीरिया संक्रमणों को रोकने के लिए निष्क्रिय टीकाकरण को भी प्रभावी माना गया है। एक अन्य महत्वपूर्ण उपाय है फेज थेरेपी, जिसमें बैक्टीरिया को खत्म करने के लिए बैक्टीरियोफेज (वायरस) का उपयोग किया जाता है। एंटीबायोटिक प्रतिरोध से निपटने के लिए कई नई दवाएँ भी क्लिनिकल परीक्षण में हैं। ये नई रणनीतियां न केवल सीधे बैक्टीरिया पर, बल्कि उनके जैविक नेटवर्क पर भी हमला करती हैं ताकि नए जीवाणुरोधी उपचार विकसित किए जा सकें। अंग प्रत्यारोपण, जटिल सर्जरी और कैंसर का इलाज एंटीबायोटिक्स के बिना संभव नहीं होता। अगर एंटीबायोटिक प्रतिरोध से निपटने के लिए जल्द ही प्रभावी वैश्विक योजनाएँ लागू नहीं की गई, तो हमें गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

निष्कर्ष

एंटीबायोटिक प्रतिरोध बहुत तेजी से विकसित होता है, इसलिए यह एक गंभीर चिंता का विषय है। प्रौद्योगिकी के विकास के साथ, अब अधिक लोग एंटीबायोटिक प्रतिरोध के नकारात्मक प्रभावों के बारे में जागरूक हो रहे हैं। विकासशील देशों में, लगभग सभी एंटीबायोटिक्स आसानी से बिना डॉक्टर की पर्ची के भी खरीदी जा सकती हैं।

एंटीबायोटिक प्रतिरोध एक जटिल समस्या है, जिसका वैश्विक स्तर पर गंभीर असर पड़ता है। इसे समझने के लिए कई प्रयास किए गए हैं, लेकिन अभी भी एक संगठित और समन्वित दृष्टिकोण की कमी है। यदि एंटीबायोटिक प्रतिरोध पर नियंत्रण पाना है, तो इसके लिए लोगों को जागरूक करना, एंटीबायोटिक्स की पूरी खुराक लेना, इन दवाओं का सही और जिम्मेदार उपयोग करना, और एंटीबायोटिक प्रतिरोध से निपटने के लिए एक ठोस और समन्वित रणनीति अपनाना जरूरी है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

कुत्तों में डिस्टेम्पर रोग: एक गंभीर संक्रामक बीमारी

डॉ. गयाप्रसाद जाटव, डॉ. अनिल वित्तल
डॉ. सुप्रिया शुक्ला, डॉ. रश्मि चौधरी
(पशु विकृति विज्ञान विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन विज्ञान विश्वविद्यालय, महू (म.प्र.)

डॉ. ए.के. जयराव, डॉ. विवेक अग्रवाल

डॉ. मुकेश शाक्य (पशु परजीवी विज्ञान विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन विज्ञान विश्वविद्यालय, महू (म.प्र.)

परिचय

डिस्टेम्पर एक अत्यंत संक्रामक और जानलेवा वायरल रोग है जो मुख्य रूप से कुत्तों को प्रभावित करता है। यह बीमारी कैनाइन डिस्टेम्पर वायरस (CDV) के कारण होती है और कुत्तों के स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डाल सकती है। इस लेख में हम डिस्टेम्पर के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से चर्चा करेंगे, जिसमें इसके कारण, लक्षण, निदान, उपचार और रोकथाम के तरीके शामिल हैं।

कारण और संचरण

कैनाइन डिस्टेम्पर वायरस, जो पैरैमिक्सोवायरिडे परिवार का एक ऋह वायरस है, डिस्टेम्पर रोग का मुख्य कारक है। यह वायरस अत्यधिक संक्रामक है और विभिन्न माध्यमों से फैल सकता है। संक्रमित जानवरों के शारीरिक स्रावों (जैसे लार, मूत्र, मल) के प्रत्यक्ष संपर्क में आने से, हवा में मौजूद सूक्ष्म कणों के माध्यम से, या संक्रमित मां से गर्भस्थ शिशु में यह वायरस फैल सकता है। इसके अलावा, दूषित भोजन या पानी के सेवन से भी संक्रमण हो सकता है। यह वायरस न केवल कुत्तों को, बल्कि अन्य जानवरों जैसे लोमड़ियों, भेड़ियों, रैकून और कुछ समुद्री स्तनधारियों को भी संक्रमित कर सकता है।

लक्षण और प्रभाव

डिस्टेम्पर के लक्षण विभिन्न अंग प्रणालियों को प्रभावित कर सकते हैं और समय के साथ बदल सकते हैं। प्रारंभिक चरण में, संक्रमित कुत्ते में बुखार, नाक और आंखों से स्राव, खांसी, उल्टी, दस्त, भूख न लगना और थकान जैसे लक्षण दिखाई दे सकते हैं। जैसे-जैसे रोग बढ़ता है, अधिक गंभीर लक्षण सामने आ सकते हैं। इनमें निमोनिया, त्वचा पर दाने, दांतों का क्षय, और तंत्रिका तंत्र संबंधी समस्याएं जैसे दौरे, पक्षाघात, या व्यवहार में परिवर्तन शामिल हैं। कुछ मामलों में, संक्रमित कुत्तों में दृष्टि हानि भी हो सकती है। यह रोग कुत्ते के शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को कमजोर कर देता है, जिससे अन्य संक्रमणों का खतरा बढ़ जाता है।

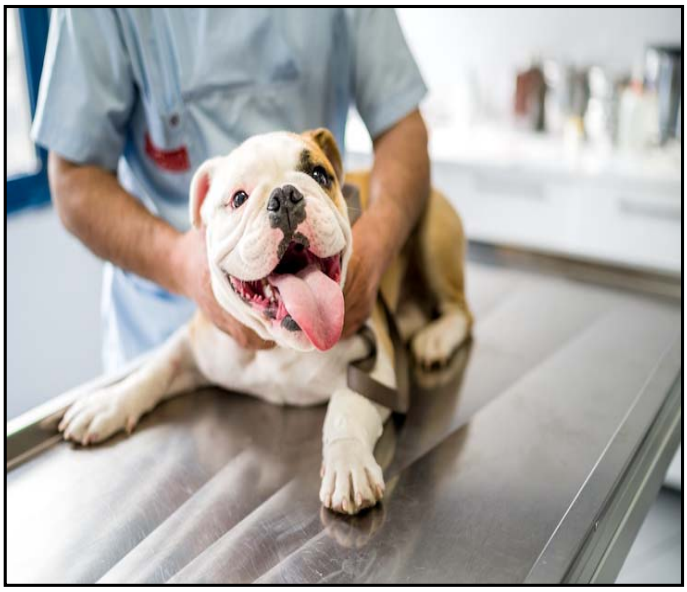

निदान और उपचार

डिस्टेम्पर का सटीक निदान करने के लिए पशु चिकित्सक विभिन्न परीक्षणों का उपयोग करते हैं। इनमें रक्त परीक्षण, मूत्र परीक्षण, सीएसएफ (सेरेब्रोस्पाइनल फ्लूइड) परीक्षण, और पीसीआर (पॉलीमरेज चेन रिएक्शन) परीक्षण शामिल हैं। दुर्भाग्य से, डिस्टेम्पर के लिए कोई विशिष्ट इलाज नहीं है। उपचार मुख्य रूप से सहायक देखभाल और लक्षणों को कम करने पर केंद्रित होता है। इसमें तरल पदार्थ चिकित्सा, एंटीबायोटिक दवाएं (द्वितीयक संक्रमणों को रोकने के लिए), बुखार कम करने वाली दवाएं, दौरे रोकने वाली दवाएं, पोषण संबंधी सहायता, और गंभीर मामलों में ऑक्सीजन थेरेपी शामिल हो सकती है। उपचार की सफलता बहुत हद तक रोग के चरण, कुत्ते की उम्र और समग्र स्वास्थ्य स्थिति पर निर्भर करती है।

रोकथाम और टीकाकरण

डिस्टेम्पर की रोकथाम के लिए टीकाकरण सबसे प्रभावी और महत्वपूर्ण उपाय है। कुत्तों को नियमित रूप से डिस्टेम्पर के टीके लगवाने चाहिए। पिल्लों को 6-8 सप्ताह की उम्र से शुरू करके हर 3-4 सप्ताह में टीका लगाना चाहिए, जब तक वे 16 सप्ताह के न हो जाएं। उसके बाद, वयस्क कुत्तों को हर 1-3 साल में बूस्टर खुराक दी जानी चाहिए। टीकाकरण के अलावा, स्वच्छता और संक्रमण नियंत्रण उपायों का पालन करना भी महत्वपूर्ण है। इसमें संक्रमित जानवरों को अलग रखना, उपकरण और वातावरण को कीटाणुरहित करना, और अज्ञात या संक्रमित जानवरों के संपर्क से बचना शामिल है। इन उपायों का पालन करके, मालिक अपने प्यारे पालतू जानवरों को इस खतरनाक बीमारी से बचा सकते हैं।

निष्कर्ष

डिस्टेम्पर एक गंभीर और जानलेवा बीमारी है जो कुत्तों के स्वास्थ्य और जीवन के लिए बड़ा खतरा पैदा करती है। हालांकि इसका कोई निश्चित इलाज नहीं है, नियमित टीकाकरण और उचित देखभाल के माध्यम से इसे प्रभावी ढंग से रोका जा सकता है। कुत्ते के मालिकों को अपने पालतू जानवरों के स्वास्थ्य की नियमित जांच करवानी चाहिए और किसी भी असामान्य लक्षण के लिए सतर्क रहना चाहिए। यदि डिस्टेम्पर के लक्षण दिखाई देते हैं, तो तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करना चाहिए। समय पर निदान और उपचार कुत्ते के जीवन को बचाने में मदद कर सकता है। याद रखें, स्वस्थ कुत्ता एक खुशहाल कुत्ता होता है, और नियमित टीकाकरण तथा चिकित्सा देखभाल आपके प्यारे पालतू जानवर को स्वस्थ और सुरक्षित रखने की कुंजी है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

'केंचुआ खाद का महत्व एवं कृषि के टिकाऊपन में केंचुओं का योगदान'

अमित विक्रम गंगेले (शोध छात्र)
डॉ. शिव शंकर सिंह (सहायक प्राध्यापक)
उमेश पटले (अतिथि व्याख्याता शस्य विज्ञान)
अग्निवेश शांडिल्य (शोध छात्र), फसल विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट जिला सतना (म.प्र.)

"जैविक खादों से मिट्टी का सुन्दर रूप श्रंगार करें, स्वास्थ्य सुधारें धरती माँ का उत्तम पैदावार करें। गौ , गोबर, गौमूत्र ,मठा (छाछ) से कीटों का संहार करें, पर्यावरण प्रदूषित न हो जीवों पर उपकार करें।।"

जैविक खाद के प्रयोग से मिट्टी के आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति के साथ-साथ उसके भौतिक एवं जैविक गुणों में वृद्धि होती है। अतः यह आवश्यक है कि अधिक कृषि उत्पादन प्राप्त करने हेतु मिट्टी परिक्षण के साथ-साथ फसलों की आवश्यकतानुसार रसायनिक खाद के बदले जैविक खाद के प्रयोग को बढ़ावा दिया जाए।

उद्धानिकी फसलों में केंचुआ खाद (वर्मी कम्पोस्ट) का बहुत महत्व है। यहाँ कुछ मुख्य बिंदु दिए गए हैं जो इसके महत्व को दर्शाते हैं:

1.उर्वरक गुण: केंचुआ खाद में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम एवं अन्य आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व होते हैं, जो फसलों की वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक होते है एवं केंचुआ खाद में ये समस्त तत्व पाए जाते जो पौधों की वृद्धि एवं विकास में मदद करते हैं।

2.भूमि की उर्वरता: मृदा में कार्बनिक यौगिकों को मिलाने से इसकी संरचना में सुधार होता है, जिससे जल धारण क्षमता बढ़ती है और मिट्टी में वायु का संचलन बेहतर होता है जो मृदा की उर्वरता को बढ़ते है

3.जैव विविधता: केंचुआ खाद मिट्टी में सूक्ष्म जीवों की संख्या को बढ़ाता है एवं जैविक कृषि खादों में मृदा कार्बनिक कार्बन होता है, जो पोषक तत्वों के विघटन और चक्रण के लिए जिम्मेदार लाभदायक बैक्टीरिया का समर्थन करता है। जो पौधों के लिए लाभकारी होते हैं।

4.रोग प्रतिरोध: इसके उपयोग से फसलों में रोगों और कीटों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है जिससे रोग एवं कीट नाशियों का प्रयोग भी कम हो जाता है।

5.पोषक तत्वों का संतुलन: केंचुआ खाद में पोषक तत्व धीरे-धीरे उपलब्ध होते हैं, जिससे पौधों को जरूरत के अनुसार पोषण मिलता है।

6.पर्यावरणीय लाभ: यह एक जैविक खाद है, जो रासायनिक खादों के उपयोग को कम करने में मदद करती है, जिससे पर्यावरण को संरक्षण मिलता है।

इस तरह, केंचुआ खाद सब्जी वाली फसलों की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने और मिट्टी की सेहत को सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

केंचुए की कुछ महत्वपूर्ण प्रजातियों की विशेषताएं

भारतीय उपमहाद्वीप में केंचुआ खाद बनाने हेतु केचुए की कुछ महत्वपूर्ण प्रजातियाँ निम्नवत् हैं:

1. आइसीनिया फोटिडा (Eisenia foetida)

- आइसीनिया फोटिडा प्रजाति के केंचुओं का केंचुआ खाद बनाने में वृहद रुप से प्रयोग हो रहा है। इन्हें इनके रुप रंग के आधार पर लाल केंचुआ, गुलाबी बैंगनी केंचुआ, टाइगर वर्म तथा बैंडिग वर्म के नाम से भी जाना जाता है।
- जीवित केंचुए लाल, भूरे या बैंगनी रंग के होते हैं। ध्यानपूर्वक देखने पर इनके पृष्ठ भाग पर रंगीन धारियों दिखायी देती हैं प्रतिपृष्ठ भाग पर इस केंचुए का शरीर पीले रंग का होता है।

Eisenia foetida

• यह केंचुए 3.5 से 13.0 सेंमी. लम्बे तथा इनका व्यास लगभग 3.0 से 5.0 मि.मी. तक का होता है। • यह केंचुए सतह पर रहने वाले (एपीजेइक) स्वभाव के होते हैं तथा अत्यल्प मिट्टी खाते हैं। • यह जुझारु प्रवृत्ति के हैं तथा तापमान एवं आर्द्रता की सुग्राहयता, नए वातावरण के अनुकूल जल्दी ढल जाने की क्षमता के कारण इनका उत्पादन व रखरखाव आसान होता है

यह शीघ्र वृद्धि करने की क्षमता रखते हैं तथा एक परिपक्व केंचुआ के शरीर का वजन 1.5 ग्राम तक हो जाता है तथा यह कोकून से निकलने के लगभग 50-55 दिन बाद प्रजनन क्षमता हासिल कर लेता है।

- एक वयस्क केंचुआ औसतन तीसरे दिन एक कोकून बनाता है। तथा प्रत्येक कोकून से हैचिंग के बाद (23 दिन में) 1-3 केंचुए उत्पन्न होते हैं।

2. आईसीनिया एंड्राई (Eisenia andrie)

यह केंचुआ समान रूप से लाल रंग का होता है जो इसे आईसीनिया फोटीडा से अलग पहचान करने में मददगार है शेष गुण आईसीनिया फोटीडा की तरह ही होते है

Eisenia andrie

3. पेरियोनिक्स एक्सकैवेटस (Parionyx excavatus)

• विश्व के अनेक भागों में इसका उपयोग केंचुआ खाद बनाने के लिए किया जाता है। • इसके शरीर का ऊपरी भाग गहरे बैंगनी से लालिमायुक्त भूरा तथा प्रतिपृष्ठतल (निचला भाग) पीले रंग का होता है। • इस केंचुए की लम्बाई 2.3-12.0 सेमी तक तथा व्यास 2.5 मि.मी. होता है। • इसका जीवन चक्र लगभग 46 दिन तथा वृद्धि दर 3.5 मि.ग्रा./दिन होता है। इसके शरीर का अधिकतम वजन 600 मि.ग्रा. होता है। • केंचुआ 21-22 दिनों में व्यस्क होकर 24वें दिन से कोकून बनाना आरम्भ कर देता है।

Parionyx excavatus

4. यूड्रिलस यूजिनी (Eudrilus eugeniae)

इसे रात्रि में रेंगने वाले केंचुए के नाम से भी जाना जाता है। यह केंचुआ खाद बनाने के लिए प्रयोग किये जाने बाले केंचुओं में सबसे षीध वृद्धिद वृद्धि करने वाला है तथा केंचुआ खाद बनाने में आइसीनिया फोटिडा के बाद राबसे अधिक प्रयोग में लाया जाता है। इसका प्रयोग मुख्यतः दक्षिण भारत के इलाकों में केंचुआ खाद बनाने के लिए सर्वाधिक किया जा रहा है।

• इसका रंग भूरा तथा लालिमायुक्त गहरे बैंगनी, पशु के मांस की तरह का होता है। • इसकी लंबाई लगभग 3.2-14.0 सेमी तथा व्यास 5.0-8.0 मि.मी. तक होता है। • यह अन्य प्रजातियों की तुलना में शीघ्र वृद्धि करता है तथा पाचन एवं कार्बनिक पदार्थों के अपघटन की तीव्र क्षमता रखता हैं। इसकी औसत वृद्धि दर 4.3 से 120 मि.ग्रा./दिन तक संभव है।

5. लैम्पिटो मोरिटि (Lampito mauritii)

इस केंचुए का शरीर गहरे पीले रंग का तथा शरीर का अग्रभाग बैंगनी रंग युक्त होता है। इसकी लम्बाई 8.0-21.0 सेमी तथा व्यास 3.5-5.0 मि.मी. तक होता है।

6. लुम्ब्रिकस रुबेल्लस (Lumbricus rubellus) • यह अत्यधिक नमी तथा कार्बनिक पदार्थों वाले स्थानों में पाया जाता है इसीलिए इसे 'रेड मार्स वर्म' भी कहते हैं। • इसके शरीर का पृष्ठभाग लालिमायुक्त बैंगनी तथा प्रतिपृष्ठ भाग पीले रंग का होता है। • यह केंचुआ सतह पर रहने वाले (एपीजेइक) केंचुओं जैसा है तथा युग्मन तथा उत्सर्जन क्रियायें गहराई में करता है। • इसका जीवन काल 1-2 वर्ष होता है तथा एक वयस्क केंचुआ 79-106 कोकून प्रतिवर्ष बनाता है।

कृषि के टिकाऊपन में केंचुओं का योगदान: यद्यपि केंचुआ लंबे समय से किसान का अभिन्न मित्र हलवाहा (Ploughman) के रूप में जाना जाता रहा है। सामान्यतः केंचुए की महत्ता भूमि को खाकर उलट-पुलट कर देने के रूप में जानी जाती है जिससे कृषि भूमि । की उर्वरता बनी रहती है। यह छोटे एवं मझोले किसानों तथा भारतीय कृषि के योगदान में अहम् भूमिका अदा करता है। केचुआ कृषि योग्य भूमि में प्रतिवर्ष 1 से 5 मि.मी. मोटी सतह का निर्माण करते हैं। इसके अतिरिक्त केंचुआ भूमि में निम्न ढंग से उपयोगी एवं लाभकारी है।

1. भूमि की भौतिक गुणवत्ता में सुधार: केंचुए भूमि में उपलब्ध फसल अवशेषों को भूमि के अंदर तक ले जाते हैं ओर सुरंग में इन अवशेषों को खाकर खाद के रूप में परिवर्तित कर देते हैं तथा अपनी विष्ठा रात के समय में भू सतह पर छोड़ देते हैं। जिससे मिट्टी की वायु संचार क्षमता बढ़ जाती है। एक विशेषज्ञ के अनुसार केंचुए 2 से 250 टन मिट्टी प्रतिवर्ष उलट-पलट कर देते हैं जिसके फलस्वरूप भूमि की 1 से 5 मि.मी. सतह प्रतिवर्ष बढ़ जाती है।

• केंचुओं द्वारा निरंतर जुताई व उलट पलट के कारण स्थायी मिट्टी कणों का निर्माण होता है जिससे मृदा संरचना में सुधार एवं वायु संचार बेहतर होता है जो भूमि में जैविक क्रियाशीलता. हह्यूमस निर्माण तथा नत्रजन स्थिरीकरण के लिए आवश्यक है। • संरचना सुधार के फलस्वरूप भूमि की जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है तथा रिसाव एवं आपूर्ति क्षमता बढ़ने के कारण भूमि जल स्तर में सुधार एवं खेत का स्वतः जल निकास होता रहता है। • मृदा ताप संचरण व सूक्ष्म पर्यावरण के बने रहने के कारण फसल के लिए मृदा जलवायु अनुकूल बनी रहती है।

2. भूमि की रासायनिक गुणवत्ता एवं उर्वरता में सुधार: पौधों को अपनी बढ़वार के लिए पोषक तत्त्व भूमि से प्राप्त होते हैं तथा पोषक तत्व उपलब्ध कराने की भूमि की क्षमता को भूमि उर्वरता कहते हैं। इन पोषक तत्वों का मूल स्त्रोत मृदा पैतृक पदार्थ फसल अवशेष एवं सूक्ष्म जीव आदि होते हैं जिनकी सम्मिलित प्रक्रिया के फलस्वरूप पोषक तत्त्व पौधों को प्राप्त होते ते हैं। सभी जैविक अबशेष पहले सूक्ष्मजीवों द्वारा अपघटित किये जाते हैं। अर्द्धअपघटित अवशेष केंचुओं द्वारा वर्मीकास्ट में परिवर्तित होते हैं। सूक्ष्म जीवों तथा केंचुओ सम्मिलित अपघटन से जैविक पदार्थ उत्तम खाद में बदल जाते हैं और भूमि की उर्वरा शक्ति बढाते है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

प्राकृतिक खेती : कम लागत, बिना कर्ज, बिना जहर

डॉ. थानेश्वर कुमार विषय वस्तु विशेषज्ञ
कृषि विज्ञान केन्द्र, मुंगेली, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

प्राकृतिक खेती क्या है: प्राकृतिक खेती वह खेती है। जिसमे मानव द्वारा निर्मित किसी भी प्रकार का रसायन या कीटनाशक उपयोग में नहीं लाया जाता। सिर्फ प्रकृति के दौरान निर्मित उर्वरक और अन्य पेड़ पौधों के पत्ते खाद, पशुपालन गोबर खाद उपयोग लाया जाता है। यह प्रकार से विविध प्रकार की कृषि प्रणाली है जो फसलों और जीव जंतु पेड़ों को एकीकृत करके रखती है। प्राकृतिक खेती में प्रकृति में उपलब्ध जीवाणुओं,मित्र कीट और जैविक कीटनाशक द्वारा फसल को हानिकारक जीवाणुओं से बचाया जाता हैं। नीति आयोग के अनुसार प्राकृतिक कृषि को रसायन मुक्त और पशुधन आधारित कृषि के रुप में परिभाषित किया जा सकता है। यह परिभासा प्रचलित प्रथाओं पर आधारित है. कृशि पारिस्थिकी पर आधारित यह एक विविध कृषि प्रणाली है जो फसलों, पेड़ों और पशुधन को एकीकृत करती है जिससे कार्यात्मक जैव विविधता का इस्टम उपयोग होता है। प्राकृतिक खेती पारंपरिक खेती के तरीकों का एक रासायनिक मुक्त विकल्प है। इसे कृशि पारिस्थितिकी आधारित विविध कृषि प्रणाली के रूप में माना जाता है जो कार्यात्मक जैव विविधता के साथ फसलों, पेड़ों और पशुधन को एकीकृत करती हैं। आज के समय प्राकृतिक खेती एवं जैविक खेती की बहुत आवश्यकता है।

प्राकृतिक खेती के मुख्य घटक: 1.जीवामृत 2. बीजामृत 3. मल्चिंग 4. वाफसा

1.जीवामृत: यह स्थानीय गाय के गोबर (10किग्रा, स्थानीय गोमूत्र) 5-10 लीटर, गुड़ (2 किग्रा, दाल का आटा) 2किग्रा,पानी (200 लीटर और खेत की मेड़ से ली गई मुठ्टीभर मिट्टी का तरल हैं। जीवामृत की मदद से जमीन को पोषक तत्व मिलते हैं और यह एक उत्प्रेरक के रुप में कार्य करता है जिसकी वजह से मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की गतिविधि बढ़ जाती है। इसके अलावा जीवामृत की मदद से पेड़-पौधों को कवक और जीवाणु से उत्पन्न रोग होने से भी बचाया जा सकता है। एक एकड़ जमीन के लिए 200 लीटर जीवामृत मिश्रण की जरुरत पड़ती है। किसान को अपनी फसलों में एक महीने में जीवामृत का 2 बार छिड़काव करना होगा। इसे सिंचाई के पानी में मिलाकर भी उपयोग किया जाता है।

जीवामृत बनाने के विधि: एक ड्रम में 200 लीटर पानी डालें, उसमें 10 किलो ताजा गाय का गोबर 10 लीटर गाय का मूत्र मिलाएं,घोल में 2 किलो बेसन मिलाएं, इसमें 150 ग्राम मिट्टी (किसी बड़े पेड़ के नीचे की या खेत के मेढ़ की)। यह सब चींजे मिलाने के बाद मिश्रण को 86 घण्टों के लिए छाया में कपड़े से ढंककर रख दें। 6 दिन तक सुबह-शाम 5 मिनट अच्छी तरह मिलाएं। मिश्रण इस्तेमाल के लिए तैयार हो जाएगा।

2.बीजामृत : यह स्थानीय गाय के गोबर (5 किग्रा. स्थानीय गोमूत्र) 5 लीटर, चूना (50 ग्राम, पानी) 20 लीटर और खेती की मेंड़ से ली गई मिठ्ठीभर मिट्टी के साथ बनाया जाने वाला बीज उपचार सूत्र हैं।

बीजामृत बनाने की विधि: 5 किलो देशी गाय के गोबर को एक कपड़े से बांधकर 20 लीटर पानी में 12 घंटे के लिए टांग दें फिर इस गोबर के बंडल को लगातार 6 बार पानी में निचोड़े उसके बाद उस घोल में एक मुट्ठी मिट्टी (किसी बड़े पेड़ के नीचे की या खेत के मेंड़ की) पानी में अच्छी तरह से मिला दें अलग से 1 लीटर पानी में 50 ग्राम चूना मिलाकर रात भर रखें और अगले दिन उपर्युक्तघोल में मिला दें इस प्रकार बीजामृत को बीजोपजार के लिए तैयार करते है।

3.मल्चिंग: मल्चिंग तीन प्रकार की होती है। पहली मिट्टी की मल्चिंग द्वारा पानी का संरक्षण करना और साथ ही खरपतवारों को नियंत्रित करना। दूसरा है भूसा मल्चिंग जहां फसल अवशेषों को प्राकृतिक अपघटन के लिए खेत में ही रहने दिया जाय और बाद में पोषक तत्वों की हानि को रोकने के लिए खेत में ही मिला दिया जाए और तीसरी सह-फसल एंव मिश्रित फसल के द्वारा सजीव मल्चिंग।

• **आच्छादन मल्चिंग:** • पुआल भूसा आच्छादनः • सजीव आच्छादनः

वाफसा: इसमे सिंचाई के स्थान पर मृदा में नमी एवं वायु की उपस्थित को महत्व दिया जाता है। इस आयाम के अनुसार पौधों को बढ़ने के लिए अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती वे वाफसा यानी भाप की मदद से भी बढ़ सकते है। वाफसा वह स्थिति होती है जिसमें मिट्टी में मौजूद हवा व पानी के अणु की मदद से पौधे का विकास हो जाता है। यह मिट्टी में सुक्ष्म जलवायु का निर्माण है जिसके द्वारा मिट्टी के जीव और जड़े मिट्टी में उपलब्ध अथवा पर्याप्त हवा और आवष्यक नमी दे। मिट्टी के कणों के बीच गुफाओं में 50% वायु और 20% जल वाश्प की स्थति के साथ स्वतंत्र रुप से रह सकते है। जब हम पौधे की छाया के बाहर पानी देते है। यानी 12.00 बजे पौधे की छाया के बाहर वापस अनुरक्षित रहती हैं। क्योंकि छाया जड़ें जो बाहरी चंदवा क्षेत्र से पानी लेती है।

विभिन्न कीट-पतंगों के नियंत्रण के लिए तीन प्रकार के संमिश्रणों का भी सुझाव दिया गया है।

प्राकृतिक खेती: फसल सुरक्षा के उपाय-प्राकृतिक खेती में फसलों को कीटों एंव रोगों से बचने के लिए विभिन्न वनस्पतियों की पत्तियों के काढ़े का उपयोग किया जाता है।

नीमास्त्र: 5 कि.ग्रा.नीम की बारीक पत्तियां,100 लीटर पानी में, 5 लीटर देशी गाय का गोमूत्र, 1 कि.ग्रा. देशी गाय का गोबर डालकर 2-3 मिनट तक अच्छी तरह हिलाते हैं। ड्रम का मुंह सूती कपड़े से बांध दिया जाता है। 48 घंटे बाद नीमास्त्र तैयार हो जाता है।

अग्नि अस्त्र: आधा कि.ग्रा. हरी मिर्च, आधा कि.ग्रा. लहसुन, पांच कि.ग्रा.नीम की बारीक पत्तियां में 20 लीटर देशी गाय का गोमूत्र मिलाकर 20 मिनट तक उबाला जाता है। 48 घंटे रखने के बाद मिश्रण को सूती कपड़े से छान लिया जाता है। 5-6 लीटर अग्नि अस्त्र को 250 लीटर पानी में मिलाकर 1 हैक्टेयर में छिड़काव कर सकते हैं।

प्रयोग विधि: अग्नि अस्त्र का उपयेग तना छेदक (स्टेम बोरर, फल छेदक) फ्रूट बोरर और अन्य विभिन्न प्रकार के इल्लियों केटरपिलर्स प्रबंधन करने के लिए किया जाता है।

दशपर्णी अर्क:- नीम की 5 कि.ग्रा. पत्तियां, किन्ही 10 पौधों की 2 कि.ग्रा. पत्तियां (करजं, सीताफल, धतूरा, बेल, कनेर,अरंडी, पपीता, मदार, कनेर, तुलसी, तंबाकू, गेंदा, बबूल, बेर, हल्दी, अदरक, गुड़हल, गिलोय एंव आम इत्यादि) 10 लीटर देषी गाय का गौमूत्र, 10 कि.ग्रा. देशी गाय का गोबर, 500 ग्राम हल्दी पाउडर, 500 ग्राम लहसुन का पेस्ट, 500 ग्राम अदरक का पेस्ट, 1 किलो तंबाकू के पत्ते का पाउडर, 1 किलो तीखी मिर्च का पेस्ट इन सभी का मिश्रण तैयार करने के बाद 200 लीटर पानी में 30-40 दिन के लिए सड़ने के लिए रख देते हैं। इसे सूती कपड़े से छानकर 6 महीने तक उपयोग कर सकते हैं।

ब्रम्हास्त्र: नीम की 3 कि.ग्रा. पत्तियां, 2 कि.ग्रा. करंज, सीताफल एंव धतूरे की बारीक पत्तियां, 10 लीटर देशी गाय के गौमूत्र में मिश्रण को मिलाकर लगभग 20-25 मिनट तक उबालें,फिर मिश्रण को 48 घंटे के लिए ठंडा करके सामाग्री को सूती कपड़े से छान लें।

प्रयोग विधि: ब्रम्हास्त्र का उपयोग फसलों के बड़े आकार के छेदक (बोरर कीट-पतगों और इल्लियों) केटरपिलर्स के प्रबंधन के लिए किया जाता हैं। एक हेक्टेयर में छिड़काव के लिए 5-6 लीटर ब्रम्हास्त्र को 250 लीटर पानी में घोलकर उपयोग करें।

लहसुन-मिर्च अर्क: तीखी मिर्च अर्क 500 ग्राम एवं लहसुन 500 ग्राम को लेकर उसका मिश्रण तैयार किया जाता है। 5 कि.ग्रा. नीम की बारीक पत्तियां तथा इसमें 10 लीटर देशी गाय के गोमूत्र को मिलाकर इस मिश्रण को गर्म किया जाता हैं। मिश्रण को 24 घंटे के लिए ठंडा करते हैं। सामाग्री को सूती कपड़े से छान लिया जाता है।

प्रयोग विधि: लहसुन-मिर्च अर्क का उपयोग विभिन्न प्रकार इल्लियों (केटरपिलर्स जैसे- लिफरोलर, तना छेदक (स्टेमबोरर, फल छेदक) फ्रूट बोरर एंव फली छेदक पोड बोरर को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। एक हेक्टेयर में छिड़काव के लिए 5-6 लीटर दशपर्णी अर्क को 250 लीटर पानी में घोलकर उपयोग करें।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

अनानास के कीट, रोग, शारीरिक विकार और खरपतवार प्रबंधन

राधा (शोध छात्रा) फल विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्रदेव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

कौशल कुमार शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, रानी लक्ष्मीबाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय झांसी

डॉ. अतुल यादव (सहायक प्राध्यापक) फल विज्ञान विभाग,आचार्य नरेंद्रदेव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

अनानास की फसल सुरक्षा

कई अन्य फसलों की तरह, अनानास जैविक और अजैविक तनाव दोनों से बहुत प्रभावित होते हैं, जो समय पर उचित देखभाल न करने पर फसल की पैदावार को काफी कम कर देता है। यह लेख आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण जैविक और अजैविक तनावों की व्याख्या करता है

अनानास के प्रमुख कीट

आर्थ्रोपोड्स

1.आर्थ्रोपोड जमीन पर और ऊपर दोनों जगह पाए जाते हैं और अनानास में महत्वपूर्ण नुकसान पहुंचा सकते हैं क्योंकि वे बीमारियों के वाहक भी हैं। आर्थ्रोपोड अनानास को प्रभावित करते हैं। अनानास फ्रूट माइट फलों के घुन युवा की पत्तियों के फूलदान के आधार और विकासशील फलों के सहपत्रों और बाह्यदलों पर हमला करते हैं। 140 एमएल एंडोसल्फान 350 ईसी/100 लीटर पानी के घोल में पर्णीय छिड़काव से प्रभावी नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है। अनानास रेड माइटअनानास लाल घुन मध्य अमेरिका, फिलीपींस, ब्राजील, हवाई, क्यूबा, ताइवान, भारत, दक्षिण अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया जैसे लगभग सभी अनानास उत्पादन क्षेत्रों में पाया गया है। इस कीट को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने के लिए,ऑर्गनोफॉस्फेट कीटनाशकों या 6 एल डाइमेथोएट 400 ग्राम एल-1 ईसी के साथ 2,000 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर में पर्ण स्प्रे लगाते हैं।

2.नेमाटोड: नेमाटोड पोषक तत्वों और पानी को अवशोषित करने की पौधे की क्षमता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हुए प्राथमिक और द्वितीयक दोनों जड़ों को संक्रमित और नुकसान पहुंचा सकते हैं। इससे उपज में कमी आती है। अनानास को संक्रमित करने वाले तीन सबसे आम पौधे परजीवी नेमाटोड रूट-नॉट नेमाटोड, रेनिफॉर्म नेमाटोड और घाव वाले नेमाटोड हैं। रोपण से पहले मिट्टी की धूमन नेमाटोड समस्याओं को नियंत्रित करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है, लेकिन यह पर्यावरण की दृष्टि से स्थायी समाधान नहीं है। फ़सल चक्रीकरण या लंबे समय तक फ़सल के अंतराल को अपनाना, नेमाटोड आबादी को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ब्रेक के दौरान,

नेमाटोड की आबादी को दबाने के लिए सनई जैसी कवर फसलों का उपयोग किया जा सकता है।

3.सिम्फिलिड्स: सिम्फिलिड्स अनानास से जुड़े मिरियापोड हैं जो जड़ों पर फ़ीड करते हैं । मिरियापोड्स को नियंत्रित करने के लिए मिथाइल ब्रोमाइड गैस के साथ धूमन अत्यधिक प्रभावी है।

अनानास के महत्वपूर्ण रोग और उनका प्रबंधन

अनानास में आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण नुकसान पहुंचाने वाले रोग अक्सर फल पर हमला करते हैं। विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवों के कारण अनानास प्रबंधन चुनौतीपूर्ण है जो मुख्य रूप से विकासशील पुष्पक्रम की सतह और आंतरिक भागों पर हमला करते हैं। **आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण फल रोगों के उदाहरण निम्नलिखित हैं-** • काला सड़न • फ्रूटलेट कोर रोट

इन रोगों को मुख्य रूप से कीटनाशक अनुप्रयोगों के माध्यम से (कीट) रोगवाहकों को नियंत्रित करके नियंत्रित किया जाता है।

शारीरिक विकार-अजैविक तनाव

धूप की कालिमा: कटिबंधों में उच्च सौर विकिरण के कारण, सनबर्न एक बड़ी अजैविक समस्या है जो अनानास को प्रभावित करती है, विशेष रूप से फलों के पकने के दौरान और कटाई से कुछ समय पहले। सनबर्न के कारण होने वाली उपज हानि प्रत्येक उत्पादन क्षेत्र में सौर विकिरण के स्तर और फसल के मौसम के अनुसार भिन्न होती है, जो गर्मियों के दौरान और अधिक गंभीर हो जाती है, खासकर जब दिन के दौरान लंबे समय तक उच्च तापमान होता है। सनबर्न को नियंत्रित करने के लिए, विकासशील फलों को कागज से ढक कर सुरक्षित रखते हैं ।

खरपतवार प्रबंधन: अनानास की धीमी वृद्धि के कारण खरपतवार की समस्या सबसे महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है जो उत्पादन लागत में वृद्धि करती है। चाहे एक पंक्ति या दो पंक्ति वाली रोपण प्रणाली का उपयोग किया जाता है, हाथ से निराई करना या कुदाल का उपयोग करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है, विशेष रूप से डबल रोल फसल में। दूसरी ओर, डबल-रोल सिस्टम सिंगल-रोल सिस्टम से बेहतर है क्योंकि इससे खरपतवारों को उगाना कठिन हो जाता है।

प्लास्टिक कवर का उपयोग, जो खरपतवारों की उपस्थिति को काफी कम करता है, हालाँकि, प्लास्टिक के साथ भी, कुछ खरपतवार, जैसे कि साइपरेसी परिवार में, अभी भी आवरण को पार कर सकते हैं। बहुत ही कम मौकों पर ऐसा होता है, इन खरपतवारों को हाथ से खींचने की अत्यधिक अनुशंसा की जाती है, लेकिन बहुत सावधानी से प्लास्टिक को नष्ट न करें।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

04/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

सूचना प्रौद्योगिकी और कृषि विस्तार : डिजिटल युग में कृषि का भविष्य

सोमदत्त त्रिपाठी (शोध छात्र)
भानु प्रकाश मिश्रा (प्रोफेसर एवं विभाग प्रमुख)
अंजलि पांडेय शोध छात्रा, कृषि प्रसार विभाग सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौ. विश्वविद्यालय मोदीपुरम मेरठ
बृजेश कुमार गुप्ता सहायक प्राध्यापक, कृषि प्रसार विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बांदा

परिचय

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में कृषि न केवल आर्थिक विकास का आधार है, बल्कि लाखों किसानों के जीवन का स्रोत भी है। बदलते समय और नई चुनौतियों के साथ, पारंपरिक कृषि प्रणाली को अधिक प्रभावी बनाने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) का उपयोग आवश्यक हो गया है। डिजिटल युग ने कृषि में क्रांति ला दी है, जिससे किसानों को आधुनिक तकनीकों और नवीनतम जानकारी तक आसानी से पहुंच प्राप्त हो रही है। कृषि विस्तार सेवाओं के साथ आईटी का समन्वय किसानों के जीवन में सुधार और कृषि उत्पादकता में वृद्धि का एक महत्वपूर्ण माध्यम बन सकता है।

कृषि विस्तार का महत्व

कृषि विस्तार का मुख्य उद्देश्य किसानों को नई कृषि तकनीकों, वैज्ञानिक अनुसंधानों और बेहतर कृषि विधियों के बारे में जानकारी देना है। परंपरागत रूप से, यह प्रक्रिया सीधे संवाद, प्रशिक्षण कार्यक्रमों, और व्यक्तिगत संपर्क के माध्यम से की जाती रही है, लेकिन डिजिटल युग में सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग इसे अधिक व्यापक और कुशल बना रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से कृषि विस्तार की सेवाएं तेजी से और बड़े पैमाने पर किसानों तक पहुंचाई जा सकती हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी का कृषि में उपयोग

डिजिटल तकनीक ने कृषि विस्तार में कई नए रास्ते खोले हैं। आजकल, स्मार्टफोन, मोबाइल एप्लिकेशन, इंटरनेट, और अन्य डिजिटल प्लेटफार्मों के माध्यम से किसान खेती से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। यह उन्हें कृषि के हर चरण में मार्गदर्शन करता है, जैसे बीज की गुणवत्ता, उर्वरक का उपयोग, सिंचाई के तरीके, और फसल कटाई। इसके अलावा, किसानों को मौसम की सटीक जानकारी, बाजार की कीमतें, और सरकारी योजनाओं का लाभ भी तुरंत मिल सकता है।

स्मार्टफोन और मोबाइल एप्स का उपयोग

भारत में स्मार्टफोन की पहुंच ने कृषि विस्तार को एक नई दिशा दी है। "किसान सुविधा" और "आई किसान" जैसे मोबाइल एप्स ने किसानों को खेतों में मदद की है। इन एप्स के माध्यम से किसान मौसम पूर्वानुमान, बाजार की जानकारी, और कृषि वैज्ञानिकों से सीधे सलाह प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार की डिजिटल सेवाओं ने किसानों को तुरंत और सटीक निर्णय लेने में मदद की है, जिससे उनकी फसल उत्पादकता में वृद्धि हुई है।

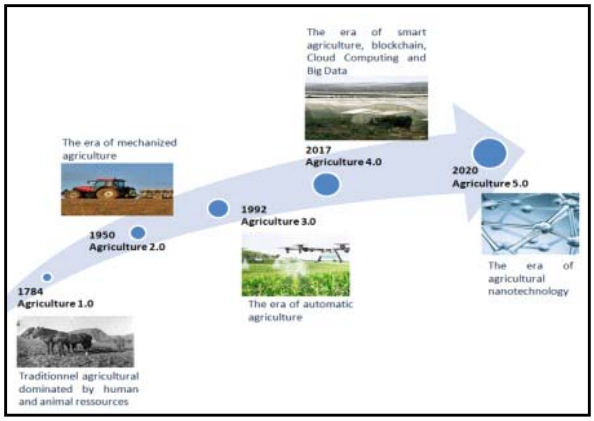

ड्रोन और सैटेलाइट तकनीक

ड्रोन और सैटेलाइट तकनीक का उपयोग फसल की निगरानी, भूमि की गुणवत्ता का मूल्यांकन, और सिंचाई के प्रबंधन में हो रहा है। यह तकनीक किसानों को वास्तविक समय में फसल की स्थिति की जानकारी देती है, जिससे वे समस्याओं को पहले से पहचानकर समाधान कर सकते हैं। इससे समय और संसाधनों की बचत होती है, और उत्पादकता भी बढ़ती है।

ई-नाम (नेशनल एग्रीकल्चर मार्केट)

ई-नाम एक डिजिटल मार्केट प्लेटफॉर्म है, जिसका उद्देश्य किसानों को उनके उत्पादों के लिए सही बाजार मूल्य दिलाना है। इस प्लेटफार्म से किसान देशभर के विभिन्न बाजारों तक सीधे जुड़ सकते हैं, जिससे वे बिचौलियों से बचते हुए अपने उत्पादों का सही मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

कृषि में सूचना प्रौद्योगिकी की चुनौतियां

हालांकि सूचना प्रौद्योगिकी ने कृषि क्षेत्र में कई सकारात्मक बदलाव किए हैं, फिर भी इसे पूरी तरह से अपनाने में कुछ चुनौतियाँ हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट और स्मार्टफोन की सीमित पहुंच और डिजिटल साक्षरता की कमी किसानों के लिए एक बड़ी बाधा है। इसके अलावा, बहुत से किसानों को नई तकनीकों को अपनाने में संकोच होता है, क्योंकि वे परंपरागत तरीकों से अधिक परिचित हैं।

समाधान

इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए सरकार और गैर-सरकारी संगठनों को मिलकर काम करना होगा। डिजिटल साक्षरता बढ़ाने के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए। इसके अलावा, सरकार को ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट सेवाओं और डिजिटल उपकरणों की पहुंच को और अधिक सुलभ बनाना चाहिए।

निष्कर्ष

सूचना प्रौद्योगिकी का कृषि विस्तार में उपयोग करना कृषि के भविष्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह न केवल किसानों को सटीक और समय पर जानकारी प्रदान करता है, बल्कि उन्हें बदलते मौसम, बाजार की मांगों, और नई कृषि तकनीकों के बारे में जागरूक भी करता है। डिजिटल युग में, कृषि का विस्तार सूचना प्रौद्योगिकी के बिना अधूरा है। यदि सही तरीके से इन तकनीकों का उपयोग किया जाए, तो भारत के कृषि क्षेत्र में व्यापक सुधार और विकास संभव है।

08/2023-24

पराली प्रबंधन में 'बेलर' की उपयोगिता

✍ **शिव पूजन यादव** विषय वस्तु विशेषज्ञ (शस्य विज्ञान)
✍ **डी. पी. सिंह** वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष
✍ **सत्येन्द्र कुमार** विषय वस्तु विशेषज्ञ (आनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विज्ञान), केविके, बसुली, महराजगंज, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या

किसान वैसे तो समाज को जीवन देने के लिए अन्न उगाता है लेकिन अनजाने में ही फसलों के अवशेष जलाने से साँस लेने से जुड़ी गंभीर तकलीफों और कैंसर तक का वाहक बन रहा है। इससे उनका अपना परिवार भी नहीं बचता है। इन दिनों धान की कटाई भी होने लगी है। धान की कटाई के बाद बचने वाला फसल अवशेष को पराली कहा जाता है। पराली इन दिनों किसानों के साथ-साथ सरकार हेतु भी एक बड़ी समस्या बन गया है। जहां किसान पराली का सलीके से निपटान कर अपने खेतों की उर्वरता बढ़ा सकते हैं, वही यह बात किसानों तक पहचानी जरुरी है कि खेतों में लगी आग से जमीन की उर्वरा शक्ति कम हो रही है। फसल अवशेष को जलाने से मिटटी की 6 इंच परत आग में भस्म हो जाती है, जिसमे विभिन्न प्रकार के लाभदायक सूक्ष्म जीव जैसे- राइजोबियम, अजोटोबक्टेर, नील-हरित काई, मित्र कीट के अन्डे आदि नष्ट हो जाते हैं। आज पूरी खेती ऐसे रसायनों द्वारा हो रही है, जो किसानों के मित्र सूक्ष्म जीवाणुओं को नष्ट क्र दे रहे हैं। ऐसे में खेत की जैव विविधता का संरक्षण बेहद जरुरी है। फसलों के अवशेष इसमें किसानों की मदद कर सकते हैं।

आजकल सीमान्त और खासकर बड़े किसान धान की फसल काटने के लिए कम्बाईन हार्वेस्टर जैसी मशीनों का सहारा ले रहे हैं। इससे कटाई से फसल के तने का अधिकांश हिस्सा खेतों में ही रह जाता है। यही कारण है कि देश में हर साल लगभग 31 करोड़ टन फसल अवशेष जलाए जाते हैं। जिससे हवा में जहरीली गैसों की मात्रा 33 से 290 गुणा बढ़ जाती है। हर साल अकेले पंजाब और हरियाणा में करीब 3 करोड़ 50 लाख टन पराली जलाई जाती है। 1 टन पराली जलाने पर वातावरण में 2 किलो सल्फर डाई ऑक्साइड, 3 किलो ठोस कण, 60 किलो कार्बन मोनो ऑक्साइड, 1460 किलो कार्बन डाई ऑक्साइड और 199 किलो राख निकलती है। ऐसे में जब करोडो टन अवशेष जलते हैं तो वायुमंडल की कितनी दुर्गति होती होगी। इसके साथ ही एक टन धान के पराली में लगभग 5.5 किग्रा नत्रजन, 2.3 किग्रा च2व5, 25 किग्रा ज्ञ2व, 1.2 किग्रा सल्फर, चावल द्वारा अवशोषित 50-70 प्रतिशत सूक्ष्म पोषक तत्व और 400 किग्रा कार्बन, जो धान की पराली जलाने से नष्ट हो जाता है। पराली का निस्तारण करना किसानों के लिए बड़ी चुनौती है, लेकिन आधुनिक कृषि यंत्र पराली को निस्तारित करने में किसानों की बहुत मदद करता है।

पराली क्यों जलाता है किसान?: धान की कटाई के बाद पुआल को मिटटी में मिलाने में और गेहूं की बुआई हेतु खेत तैयार करने के लिए कई जुताईयों (2-3 बार हैरो/पावर टिलर, या रोटावेटर और प्लैंकर) की आवश्यकता होती है, जिससे खेती की लागत बढ़ जाती है और गेहूं की बुआई में भी देरी होती है। खेत में पुआल सड़ने में अधिक समय लगता है और इसके लिए 6-7 ऑपरेशन की आवश्यकता होती है। इसलिए, किसान अगली गेहूं की फसल बोने के लिए खेत को जल्दी से साफ करने हेतु धान की पुआल जलाने का विकल्प चुनते हैं क्योंकि इसका उपयोग सीमित है। यह आमतौर पर उन क्षेत्रों में ज्यादा प्रचलित है, जहां संयुक्त कटाई विधि का उपयोग किया जाता है जो फसल अवशेषों को पीछे छोड़ देता है।

पराली प्रबंधन के तरीके: पराली को किसान खेत में न जलाए इसके लिए सरकार और वैज्ञानिको ने बहुत सरे उपाय किए हैं। फसल अवशेष को या तो खेत में ही इन्कॉर्पोरेट (इन-सीटू) कर दिया जाए अथवा खेत से ससमय बाहर निकलने की व्यवस्था (एक्स-सीटू) की जाए जिससे अगली फसल को उचित समय पर बोया जा सके। शस्य क्रियाओ द्वारा उचित फसल चक्र अपनाकर पराली जलाने की प्रक्रिया को काफी हद तक कम किया जा सकता है, लेकिन यह सभी कृषि जलवायु एवं पारिस्थिकी दशाओ में संभव नहीं है। बायो डीकोम्पोजर (जैसे, पूसा बायो-डीकंपोजर) की मदद से फसल अवशेष को खेत में ही सड़ाकर मिटटी में जुताई करके मिला सकते है, लेकिन इस प्रक्रिया को पूरा होने में लगभग एक महीने का समय लगता है, जिसके कारण यह भी ज्यादा प्रासंगिक नहीं हो पाया। हालांकि बायो डीकोम्पोजर की मदद से पुआल जो खेत से बाहर निकालकर इकट्ठा किया गया है, को सड़ाकर कम्पोस्ट बहुत जल्दी बनाया जा सकता है। आधुनिक मशीनरी का प्रयोग करके फसल अवशेष का उचित प्रबंधन करना बहुत ही आसान हो गया है। पराली के उचित प्रबंधन हेतु रोटावेटर, हैप्पी सीडर, इनकॉर्पोरेटर, मोल्ड बोर्ड हल, जीरो सीड ड्रिल, स्ट्रॉ बेलर, पैडी स्ट्रॉ चॉपर और कंबाइन हार्वेस्टर पर सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम व्यावसायिक रूप से उपलब्ध कृषि मशीनरी हैं। रोटावेटर फसल अवशेषों को उपयोगी बनाने में काफी मददगार है। इस मशीन से जुताई करने पर फसल अवशेष बारीक़ टुकड़ो में कटकर मिटटी में ही मिल जातें हैं। फसल के अवशेषों को मिट्टी में समाविष्ट करने से ह्यूमस की मात्रा भी बढ़ जाएगी जो मिट्टी में रहने वाले रोगाणुओं के संपर्क में आएगी और परिणाम स्वरूप, अवशेषों के अपघटन में तेजी आएगी। धान की कटाई के बाद गेहूं की बुआई के लिए रोटो टिल ड्रिल का विकास किया गया। मशीन एक सीड ड्रिल के साथ संयुक्त रोटावेटर थी। लेकिन इस मशीन का कार्य कम्बाईन हार्वेस्टर से कटाई किये गये धान के खेतों में असंतोषजनक था। इस मशीन को जब स्ट्रॉ चॉपर से पुआल को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटने के बाद उपयोग किया गया, तो मशीन का प्रदर्शन अच्छा पाया गया। हैप्पी सीडर विकसित किया गया; यह एक ही कार्य में खेत की बुआई करता है तथा ढीले भूसे तथा खड़ी ठूंठ को काटता है, उठाता है तथा फेंकता है। इसके लिए शक्ति स्रोत के रूप में 45 एचपी वाले ट्रैक्टर के साथ पीटीओ द्वारा संचालित किया जाता है, और इसकी क्षमता 0.3-0.4 हे./घंटा है। इस मशीन का कार्य भी संतोषजनक तब पाया गया जब भूसे का भार 7 टन/हे. से कम था। रोटावेटर या डिस्क हैरो/मौर्ल्ड बोर्ड हल का उपयोग करके, कटे और फैले हुए ठूंठ आसानी से मिट्टी में दब जाते है और सिंचाई के बाद सड़ जाते थे। राइस स्ट्रॉ चॉपर-कम-स्प्रेडर ढीली और खड़ी पराली दोनों स्थितियों में संतोषजनक ढंग से काम करता है। हालाँकि, कटे हुए भूसे और ठूंठ को विघटित होने में अधिक समय लगता है, जिससे अगली फसल की बुआई में देरी होती है। स्टबल हार्वेस्टर कम चॉपर में ढीले भूसे का जमाव देखा गया। एक स्ट्रॉ ब्रूज़र और एक कंबर स्प्रेडर वर्तमान कंबाइन के सहायक उपकरण हैं। इसे कंबाइन हार्वेस्टर के पिछले हुड पर, भूसी छानने की छलनी के पीछे, और भूसा वॉकर के ठीक सामने लगाया जाता है। विकसित मशीन का प्राथमिक उद्देश्य कंबाइन के स्ट्रॉ वॉकर से पुआल और भूसी को तोड़ना और उन्हें कटे हुए खेत में बिखेरने से पहले छोटे टुकड़ों में काटना था। इन सभी विधियों को अपनाने के बहुत सारे लाभ है तो कुछ समस्याए भी है, जिस कारण आज भी पराली जलाने की प्रक्रिया को पूरी तरह रोका नहीं जा सका है।

बेलर की कार्य प्रणाली और इसकी उपयोगिता : बेलर, धान की कटाई कम्बाईन हार्वेस्टर से करने के बाद बची हुई ठूंठ को पहले छोटे-छोटे टुकड़ों में काटता है, फिर, यह कटी हुई पराली को एक चौम्बर में दबाता है, जो फसल अवशेषों को घने, प्रबंधनीय पैकेजों में जमा करने के लिए हाइड्रोलिक प्रेस के रूप में कार्य करते हैं। बेलर मशीन का उपयोग करने से पहले किसान फसल अवशेषों को ट्रैक्टर पर लगे कटर से काटते हैं। ट्रैक्टर पर लगी बेलर मशीन जाल का उपयोग करके पराली को कॉम्पैक्ट गांठों में संपीड़ित करती है। एक निश्चित मात्रा में पराली दबाने के बाद, बेलर उसे एक मजबूत रस्सी या तार से बांधकर एक गठ्ठर बना देता है। अंत में, यह गठ्ठर चौम्बर से बाहर निकाल दिया जाता है स पराली को गठ्ठरों में बांधकर खेत में ही छोड़ा जा सकता है जिससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है। पराली के गठ्ठरों का उपयोग पशुओं के चारे के रूप में किया जा सकता है। पराली के गठ्ठरों का उपयोग बायोगैस उत्पादन हेतु भी किया जा सकता है जिससे किसानों को आमदनी भी मिलती है। 1 एकड़ खेत में करीब 20 क्विं. पराली निकलती है। एक बेलर रोजाना 20 से 30 एकड़ खेत से पराली को उठा सकता है। बेलर को चलाने हेतु 50 हॉर्स पावर या उससे अधिक क्षमता वाले ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है। एक बेलर चलाने से पहले ही किसानों को रैकर की आवश्यकता होती है। रैकर धान की फसल कटाई के बाद खेतों में फैली हुई पराली को लाइनों में इकठ्ठा करता है, जिससे बेलर का काम बेहद आसान हो जाता है। रैकर को चलाने हेतु 25 से 30 हॉर्स पावर ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है। बेलर या रैकर खरीदने पर सरकार द्वारा 50 से 80% तक की सब्सिडी देती है। बेलर की कीमत करीब 17 लाख रु. और रैकर की कीमत 4 लाख रुपए है।

फायदे

पर्यावरण संरक्षण- फसल के डंठल जलाने की आवश्यकता को समाप्त करता है, वायु प्रदूषण और मिट्टी के क्षरण को कम करने में योगदान देता है। किसान कटाई के बाद पराली जलाते हैं, जिससे वायु प्रदूषण होता है। बेलर पराली को संपीड़ित करके उसे गांठों में तब्दील करके जलाने का एक पर्यावरण-अनुकूल विकल्प प्रदान करते हैं।

संसाधन दक्षता- पराली को कुशलतापूर्वक संपीड़ित करता है, जिससे प्रबंधन, परिवहन और भंडारण आसान हो जाता है। यह किसानों को तुरंत खेत की जुताई करने और अगली फसल बोने की अनुमति देता है।

आर्थिक लाभ- एक मूल्यवान संसाधन के रूप में संपीड़ित पराली की बिक्री के माध्यम से राजस्व सृजन के रास्ते खुलते हैं।

बेलर के प्रयोग करने में आने वाली समस्याएं

उच्च इनपुट लागत-एक बेलर की लागत बिना सब्सिडी के लगभग 14.5 लाख रुपये है। सब्सिडी के बाद भी अधिकतर कास्तकार इसको खरीदने के लिए पर्याप्त धन नही जुटा पाते हैं।

सामर्थ्य का मुद्दा- फसल अवशेष प्रबंधन योजना के तहत शामिल किए जाने के बाद पहले दो वर्षों में कोई बेलर इकाइयाँ नहीं बेची गई।

पर्याप्त मशीनों की अनुपलब्धता-उत्तर प्रदेश में धान की खेती खरीफ की मुख्य फसल है लेकिन, राज्य में उपलब्ध बेलर्स द्वारा कुछ प्रतिशत क्षेत्र को ही कवर किया जा सकता है। एक बेलर एक दिन में केवल 15-20 एकड़ ही कवर कर सकता है।

निष्कर्ष : यदि कृषक बंधु अवशेष प्रबंधन के विकल्पों में से इन-सीटू या एक्स-सीटू जो उपयुक्त हो, का चुनाव करके फसल अवशेष प्रबंधन करते है तो जहा पराली को अभिशाप समझा जाता है उसे सोना में परिवर्तित कर सकते है। पराली जलाने से उसमे उपस्थित पोषक तत्व, मिट्टी के कुछ गुण जैसे मिट्टी का तापमान, पीएच, नमी, उपलब्ध फास्फोरस और मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ काफी प्रभावित होते हैं। अतः फसल अवशेषों को खेत में मिला देने से मिटटी में उपस्थित सूक्ष्म जीवों के लिए भोजन का काम करता है, इससे मल्चिंग करके खेत की नमी को बनाये रखने के साथ ही मिट्टी के कटाव को भी कम करता है। पराली का गट्ठर बनाकर यथा उचित जगह पहुचाया जा सकता है। इन सभी अवशेष प्रबंधन विधियों को प्रभावी बनाने के लिए आर्थिक रूप से व्यवहार्य उपयोग के तरीकों की पहचान की जानी चाहिए तथा सुविधाएं और बुनियादी ढांचे का निर्माण किया जाना चाहिये। इसमे संग्रह के लिए बुनियादी ढांचे की स्थापना, बेलिंग, बड़ी मात्रा में फसल अवशेष के परिवहन और हैंडलिंग सुविधाओं का निर्माण। धान के पुआल का उपयोग बायोमास जैसे विभिन्न उद्योगों में करना, बिजली उत्पादन इकाइयां, थर्मल पावर प्लांट में बायोमास सह-फायरिंग, बायो-सीएनजी, जैव इथेनॉल, आदि के लिए चेंनेल बनाना। मंडी के माध्यम से किसानों से धान के पुआल की खरीद सुनिश्चित कर पुआल एग्रीगेटर्स को बढ़ावा दिया जाये तो संभव है की भविष्य में पराली जलाने की समस्या से निजात पाया जा सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

पर्यावरण के अनुकूल एवं पौष्टिक गुणों से भरपूर 'दालें'

डॉ. अंजलि वर्मा
श्री हरिओम मिश्र विषय वस्तु विशेषज्ञ
विषय वस्तु विशेषज्ञ, के.वि.के. बस्ती, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या
डॉ. रीमा वर्मा सहायक अध्यापक, श्री वाल्मीकि इंटर कॉलेज, विक्रम जोत,बस्ती, (उ.प्र.)

दालें न केवल भारतीय आहार का एक प्रमुख घटक होने के कारण महत्वपूर्ण है, बल्कि पशु प्रोटीन की तुलना में आहार प्रोटीन का सस्ता स्रोत होने की वजह से भी महत्वपूर्ण है। दालें पर्यावरण के अनुकूल मानी जाती हैं क्योंकि इनका कार्बन उत्सर्जन कम होता है और ये पर्यावरण के लिए अच्छी होती है। लगभग 5,000 से भी अधिक वर्षों से मानव दलहनी फसलों की खेती कर रहा है। ये फसलें दुनिया के अधिकांश क्षेत्रों में उगाई जाती है। भारत दालों का अग्रणी उत्पादक है, जो वैश्विक उत्पादन का 25% हिस्सा है। विश्व खपत का 27% हिस्सा लेकर सबसे बड़ा उपभोक्ता है, तथा वैश्विक आयात का 14% हिस्सा लेकर एक महत्वपूर्ण आयातक है। देश ने वर्ष 2023-24 के दौरान 5,689.40 करोड़ रु./ 686.90 मिलियन अमरीकी डॉलर कीमत की 626,653.80 मीट्रिक टन दालों का विश्वभर को निर्यात किया है (डीजीसीआईएस) प्रमुख दाल उत्पादक राज्यों में मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और उ.प्र. शामिल है। सामान्यतः मानव उपभोग के लिए उपयोग की जाने वाली दलहनी फसलों में सोयाबीन, मटर, मसूर, चौड़ी फलियां, मूंग, हरी फलियां, अरहर और मूंगफली आदि शामिल हैं। दालें न केवल पोषण प्रदान करती हैं, बल्कि जैवसक्रिय यौगिकों से भरपूर होने के कारण, स्वास्थ्यवर्धक और औषधीय गुणों से भी भरपूर होती हैं।

महत्व: दलहन लेगुमिनीसी समूह के पौधे होते हैं। दलहन फसल उत्पादन, मृदा उर्वरता बनाये रखने की अपनी सहज क्षमता के कारण टिकाऊ खेती में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। इसलिए दलहन उत्पादन को बदलते परिवेश में मानव पोषण, पशुधन आहार, पर्यावरण तथा मृदा उर्वरता का टिकाऊ स्रोत कहा जा सकता है। दलहनी फसलें अपने बीज, फलियों में बनाती हैं। यह घास, अनाज और अन्य गैर फलियों वाली फसलों से स्पष्ट रूप से भिन्न होती हैं। इनमें नाइट्रोजन पोषक तत्व की मांग अन्य फसलों की तुलना में कम होती है।

■ दालों में पोषक तत्वों की प्रचुरता उन्हें पोषण का एक ऐसा स्रोत बनाती है जो स्वस्थ और संतुलित आहार का निर्माण करता है । ■ कुछ फलीदार फसलों जैसे कि मूंगफली व सोयाबीन का प्रयोग व्यापारिक स्तर पर तेल प्राप्त करने के लिए किया जाता है। ■ दलहनी फसलें दाल की पूर्ति के साथ-साथ हरी फलियां एवं पत्तियां सब्जी के रूप में प्रयोग की जाती हैं। ■ इनके पौधों की जड़ों की गांठों में राइजोबियम जीवाणु पाये जाते हैं, जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करके पौधों को उपलब्ध करवाते हैं। इससे मृदा की उर्वरता में वृद्धि होती है। इससे सिंथेटिक उर्वरकों की आवश्यकता कम हो जाती है और मिट्टी का स्वास्थ्य बेहतर होता है। ■ दालें पर्यावरण के अनुकूल फसलें हैं जिन्हें अन्य प्रोटीन स्रोतों की तुलना में कम पानी और ऊर्जा की आवश्यकता होती है। उनकी खेती ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करने में मदद करती है। ■ दालें किसानों के लिए मूल्यवान नकदी फसलें हैं, जो विकासशील और विकसित दोनों देशों में आय के अवसर प्रदान करती हैं। वे ग्रामीण आजीविका और आर्थिक स्थिरता में भी योगदान करते हैं। ■ दलहनी फसलों के दानों के छिलकों में प्रोटीन के अलावा फास्फोरस व अन्य खनिजों की काफी मात्रा होने के कारण पशुओं के लिए सर्वोत्तम चारे में प्रयोग किए जाते हैं।

वर्गीकरण: खाद्य दलहनों को दो व्यापक समूहों में वर्गीकृत किया जाता है: दालें और तेल के बीज। दालें, खाद्य प्रयोजनों के लिए उपयोग की जाने वाली दलहनी फसलों के सूखे बीज हैं। तिलहन उच्च तेलयुक्त फसलें हैं जैसे कि मूंगफली, सोयाबीन आदि। दालों के समूह में हरी दलहनी फसलों जैसे कि हरा चना, हरी मटर, हरी फलियों को सम्मिलित नहीं किया जाता है। इन फलियों का उपयोग सब्जी बनाने में किया जाता है, इसलिए इन्हें सब्जियों की फसलों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। दालें फलियों की एक व्यापक श्रेणी है जिसमें विभिन्न प्रकार शामिल हैं, जिनमें से प्रत्येक की अलग-अलग विशेषताएं और पोषण संबंधी विशेषताएं हैं। दालें विभिन्न आकार, साइज़ और रंगों में आते हैं, छोटे और गोल से लेकर बड़े और चपटे तक। कुछ दालें अपने जल्दी पकने के लिए जानी जाती हैं, जबकि अन्य को तैयार करने से पहले भिगोना पड़ता है। इनका उपयोग सूप से लेकर सलाद और साइड डिश तक कई तरह के व्यंजनों में किया जाता है। उनकी विविधता खाना पकाने में बहुमुखी प्रतिभा की अनुमति देती है और संतुलित और स्वस्थ आहार में योगदान देती है।

दलहन फसलों का उत्पादन सभी तीनों मौसमों में किया जाता है। क्षेत्रफल की दृष्टि से कुल खाद्यान्नों को संदर्भ में दालों का कुल योगदान 11% है, जिसमें चना 4%, अरहर 2% और अन्य दालों का लगभग 5% क्षेत्र है ।

मौसम	दालों का उत्पादन
खरीफ	अरहर, उड़द, मूंग, लोबिया, कुल्थी, मोठ
रबी	चना, मसूर, मटर, खेसारी, राजमा
जायद	मूंग. उड़द लोबिया आदि

पोषण मूल्य: ■ दालें स्वास्थ्यवर्धक, पौष्टिक और पकाने में आसान होती हैं। दालों में 20 से 30 प्रतिशत प्रोटीन पाये जाने की वजह ये यह शाकाहारी लोगों के लिए प्रोटीन का मुख्य स्त्रोत मानी जाती हैं। ■ सभी दालें पोषक तत्वों से भरपूर होती हैं, जो फाइबर (रेशा), प्रोटीन, खनिज (जैसे, आयरन) और विटामिन (जैसे, फोलेट) का समृद्ध स्रोत प्रदान करती है। ■ इनमें प्रचुर मात्रा में आहारीय रेशा तथा आवश्यक अमीनो अम्ल (मेथियोनीन व लाइसिन) पाए जाने की वजह से ये अनाजों के साथ पोषण के रूप में परिपूरक होती हैं। ■ दालों में वसा कम मात्रा में उपस्थित होती है जबकि ग्लूटेन व कोलेस्ट्रॉल-से मुक्त है। हालांकि विभिन्न प्रजातियों में पोषण मूल्य थोड़ा भिन्न हो सकता है।■ दालों में प्रत्येक ग्राम फाइबर के लिए लगभग 1 ग्रा. प्रोटीन होता है, जिससे दालें पादप-आधारित प्रोटीन के सबसे समृद्ध स्रोतों में से एक बन जाती हैं। ■ नियमित रूप से खाए जाने पर दालें मोटापे, हृदय रोग, मधुमेह और कुछ प्रकार के कैंसर के जोखिम को कम करने में मदद कर सकती हैं। ■ दालों में पाए जाने वाले कुछ प्रमुख खनिजों में लोहा, पोटेशियम, मैग्नीशियम और जस्ता शामिल हैं। दालों में फोलेट, थायमिन और नियासिन सहित बी विटामिन भी प्रचुर मात्रा में होते हैं ।

एक सर्वेक्षण के अनुसार, भारत में लगभग 31 प्रतिशत लोग शाकाहारी हैं, जिनके आहार में दाले उनको प्रोटीन आवश्यकता के एक बड़े हिस्से को पूरा करने में प्रमुख भूमिका निभा सकती हैं। एक औसत व्यक्ति की दैनिक प्रोटीन की आवश्यकता पुरुषों और महिलाओं के लिए क्रमशः 54.0 और 45.7 (आर.डी.ए.,2020) ग्राम होती है। 100 ग्राम दालों में लगभग 40-50 ग्राम दालों को एक औसत व्यक्ति के दैनिक भोजन में शामिल करके प्रतिदिन की प्रोटीन आवश्यकता का एक महत्वपूर्ण हिस्सा पूरा किया जा सकता है। इसके साथ ही अनाज आधारित भोजन की गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकता है।

निष्कर्ष: पोषण सुरक्षा का मूल्यांकन प्रायः उस खाद्य वस्तु की प्रति व्यक्ति आवश्यकता के अनुसार उपलब्धता से किया जाता है। बढ़ती जनसंख्या के साथ हमारे देश में खाद्य वस्तु के उत्पादन में भी प्रति व्यक्ति आवश्यकता को पूरा करने के लिए कई गुना वृद्धि करने की आवश्यकता है। अपने विविध उत्पादन और उपभोग पैटर्न के साथ, भारत आहार और कृषि में दालों के महत्व का उदाहरण है। भारत में दालों के उत्पादन और उत्पादकता को बढ़ाने के लिए सरकार द्वारा कुछ नई पहल भी की गई। ये पहल बीज मिनी किट्स का वितरण, बीज केंद्रों (सीड हब्स) का निर्माण, प्रजनक बीज उत्पादन कार्यक्रम की प्रबल करना, गुणवत्तापूर्ण चीजों के उत्पादन पर अनुदान और कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से सामूहिक अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन करना है। साथ ही दलहनी फसलों के मूल्य का सही निर्धारण होना चाहिए, जिससे कि उचित मूल्य से आकृष्ट होकर किसान दलहनी फसलों के अंतर्गत क्षेत्रफल बढ़ा सकें।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

फसल अवशेष प्रबन्धन क्यों और कैसे?

शिवेन्द्र प्रताप सिंह विषय वस्तु विशेषज्ञ- पादप प्रजनन विभाग, कृषि विज्ञान केन्द्र, बेलीपार, गोरखपुर (उ.प्र.)

मनोज कुमार विषय वस्तु विशेषज्ञ-कृषि प्रसार, कृषि विज्ञान केन्द्र, बेलीपार, गोरखपुर (उ.प्र.)

एस. के. तोमर वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र बेलीपार, गोरखपुर (उ.प्र.)

फसल अवशेष पौधे के वे भाग (जैसे भूसा, तना, डंठल, पत्ते व छिलके इत्यादि होते हैं), जो फसल की कटाई और गहाई के बाद खेत में छोड़ दिए जाते हैं। फसल अवशेष जलाने में चीन, भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका शीर्ष पर हैं। भारत में इसको सर्वाधिक पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में जलाया जाता है। वर्तमान में हरियाणा व पंजाब जैसे कृषि की दृष्टि से विकसित राज्यों में भी मात्रा 10 प्रतिशत किसान ही फसल अवशेषों का प्रबंधन कर रहे हैं। हमारे देश में सालाना लगभग 630-635 मिलियन टन फसल अवशेष पैदा होता है।

कुल फसल अवशेष उत्पादन का 58% धान्य फसलों से 17% गन्ना, 20% रेशा वाली फसलों से तथा 5% तिलहनी फसलों से प्राप्त होता है। अपने देश में सालाना 154.59 मीट्रिक टन/वर्ष, धान के अवशेष का उत्पादन होता है। इसको जलाने से 0.236 टन नाइट्रोजन, 0.009 टन फॉस्फोरस एवं 0.200 टन/वर्ष पोटाश का नुकसान हो रहा है।

फसल अवशेष जलाने से होने वाले दुष्प्रभाव

फसल अवशेषों को जलाने से मानव स्वास्थ्य, मृदा स्वास्थ्य के साथ साथ हमारी प्रकृति पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है-

- जब फसल अवाशेषों को जलाते समय मिटटी के सतह का तापमान 50-55 डिग्री सेंटीग्रेट हो जाता है ऐसी दशा में मिटटी में पाए जाने वाले लाभदायक जीवाणु (जैसे-बैसिलस सबलिटिस, राइज़ोबियम प्रजाति, एजोटोबैक्टर प्रजाति इत्यादि), लाभदायक फफूंद (जैसे- ट्राईकोडर्मा हर्जिएनम, व्युवेरिया वेसियाना, वैम) एवं लाभदायक मित्र कीट (जैसे-क्राईसोपा लेक्सिपर्डा, कोक्सिनेला सेप्टमपंक्टाटा इत्यादि) नष्ट हो जाते हैं ।
- फसल अवशेष को जलाने से क्षोभ मंडल में गैसीय प्रदूषकों जैसे-कार्बनमोनोऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रसऑक्साइड और हाइड्रोकार्बन कि मात्रा

बढ़ने से कारण सामान्य वायु की गुणवत्ता में कमी आ जाती है। एक टन भूसे को जलाने से 3 कि.ग्रा. पार्टिकुलेटमैटर (पीएम), 60 कि.ग्रा. कार्बनमोनोऑक्साइड, 1,460 कि.ग्रा. कार्बनडाइऑक्साइड, 199 कि.ग्रा. राख और 2 कि.ग्रा. सल्फर डाइऑक्साइड निकलती है।

- फसलों के अवशेषों को जलाने पर उनके जड़, तना एवं पत्तियों में संचित लाभदायक पोषक तत्व जलकर नष्ट हो जाते हैं। धान की पुआल को खेत में जलाने पर पुआल में उपस्थित नाइट्रोजन की लगभग सारी मात्रा, फॉस्फोरस का लगभग 25 प्रतिशत, पोटेशियम का 20 प्रतिशत, और सल्फर का 5 से 50 प्रतिशत का नुकसान हो जाता है।
- फसल के अवशेष को खेत में आग लगाने से सर्वप्रथम मृदा नमी में कमी एवं मृदा तापमान में बढ़ोतरी होती है, जिससे खेत की उर्वराशक्ति कम होने के साथ-साथ मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
- धान का फसल अवशेष जलाना विशेष रूप से एयरोसोल कणों जैसे मोटेकण (पीएम 10) और महीन कण (पीएम 2.5) का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। विभिन्न अध्ययनों में पाया गया है कि कृषि अवशेष जलाने के कारण निकलने वाले महीन कण आसानी से फेफड़े में प्रवेश कर जाते हैं, जिससे हृदय में परेशानी होती है

फसल अवशेषोंका प्रबन्धन

एक अध्ययन के अनुसार फसल के अवशेषों का सिर्फ 22% ही इस्तेमाल होता है। **शेष जला दिया जाता है। इसके प्रबन्धन के निम्न विकल्प हैं-**

पूसा डीकम्पोजर का उपयोग करके

यह भाकृअनपु-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा के वैज्ञानिकों द्वारा बनाया गया एक ऐसा छोटा कैप्सूल है, जो फसल अवशेषों को लाभदायक कृषि अपशिष्ट खाद में बदल देता है। एक कैप्सूल की कीमत सिर्फ 4-5 रुपये है और एक एकड़ खेत के अवशेष को उपयोगी खाद में बदलने के लिए केवल 4 कैप्सूल की आवश्यकता होती है।

जीरो टिल/हैप्पी सीडर/सुपर सीडर द्वारा गेहूं की बुआई

संरक्षित खेती को अपनाकर हैप्पी सीडर द्वारा गेहूं की बुआई करें। इस मशीन पराली का गठ्ठर अथवा ब्लॉक में भूसे को हार्वेस्ट करने के लिए हार्वेस्टर लगा होता है, जो भूसे को सिड्रिल के आगे से उठाकर छोटे-छोटे टुकड़ों में बदलकर बुआई की गई फसल पर पलवार के रूप में बिछा देता है। ऐसा करने से मृदा में बीज अंकुरण के लिए पर्याप्त मात्रा में नमी संरक्षित रहती है।

खेत में अवशेषों का समावेश

कटाई के उपरांत खेत में बचे फसल अवशेष, घास-फूस, पत्तियां व ठूंठ आदि को सड़ाने के लिए फसल काटने के बाद 20-25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से छिड़ककर डिस्क हैरो या रोटावेटर से मिट्टी में मिला देना चाहिए। इस प्रकार अवशेष खेत में विघटित होना प्रारंभ कर देंगे।

खेत से हटाकर दूसरे कार्यों में उपयोग करना

कटाई उपरांत धान की पराली को पैडी स्ट्रॉचॉपर, सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम या गट्ठर बनाने वाली मशीन से ब्लॉक या ब्रिक्स बनाकर इसे खेत से हटा सकते हैं। दूसरे कार्यों जैसे-पशुओं के चारे, पेपर बनाने, जैव ईंधन एवं मशरूम उत्पादन, कम्पोस्ट बनाने या ईंधन के तौर पर भी इसका उपयोग कर सकते हैं।

कम अवधि एवं कम बढ़ने वाली किस्मों का प्रयोग

धान की कम अवधि में पकने वाली किस्में लंबी अवधि में पकने वाली किस्मों की तुलना में जल्दी पक जाती हैं, जिससे अगली फसल की बुआई और खेत की तैयारी के लिए पर्याप्त समय मिल जाता है। इसके अलावा इन किस्मों से प्रति एकड़ फसल अवशेष उत्पादन भी लंबी अवधि एवं अधिक बढ़ने वाली किस्मों की अपेक्षा कम होता है। इस प्रकार इनके अवशेष प्रबंधन में ज्यादा परेशानी नहीं होती है।

- पशु चारे के रूप में उपयोग करके
- गेहूँ एवं मक्का के फसल अवशेषों का भूसा बनाकर पशु चारे के रूप में उपयोग किया जा सकता है
- फसल अवशेषों का मशरूम कि खेती में सार्थक प्रयोग किया जा सकता है
- फसल अवशेषों के प्रभावी प्रयोग जैसे झोपड़ी, खिलौने, चटाई, गत्ता एवं मूर्तियाँ बनाने में किया जा सकता है
- धान एवं अन्य फसलों के अवशेषों का गैसीकरण कर उर्जा का का उत्पादन किया जा सकता है
- फसल अवशेषों को कम्पोस्ट बनाने में उपयोग किया जा सकता है
- फसल अवशेषों को पलवार अथवा मल्च के रूप में प्रयोग कर विभिन्न फसलों में खरपतवार के प्रकोप को कम किया जा सकता है साथ ही साथ मृदा स्वास्थ्य में भी सुधर किया जा सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

न्यूट्रीगार्डन : पोषण और स्वास्थ्य के लिए कदम

सीमा कनौजिया, फौज़िया बानो
(शोध छात्रा) खाद्य एवं पोषण विभाग, एरा विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

न्यूट्रीगार्डन एक ऐसा बाग है जहाँ पोषण से भरपूर फल, सब्जियाँ और जड़ी-बूटियां उगाई जाती हैं। इस पहल का उद्देश्य है प्राकृतिक और जैविक खाद्य पदार्थों का उत्पादन करना, जिससे परिवारों को ताज़ा और स्वास्थ्यवर्धक आहार मिल सके। न्यूट्रीगार्डन न केवल भोजन की गुणवत्ता बढ़ाता है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी मदद करता है।

न्यूट्रीगार्डन का मुख्य उद्देश्य घर में ही रसायनमुक्त और ताज़ा उत्पाद प्राप्त करना है। इसके अलावा, यह पारिवारिक बजट में भी बचत करता है और जैविक खेती को बढ़ावा देता है।

न्यूट्रीगार्डन की विशेषताएं

1.ताज़गी और पौष्टिकता

न्यूट्रीगार्डन में उगाई जाने वाली सब्जियाँ और फल ताज़े होते हैं और इनमें कोई भी रसायन या कीटनाशक नहीं होते। इससे इनके पोषक तत्व बरकरार रहते हैं, जिससे आपको अधिक विटामिन और मिनरल मिलते हैं।

2.रसायनमुक्त खाद्य पदार्थ

बाज़ार में मिलने वाले उत्पादों में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग होता है, जबकि न्यूट्रीगार्डन में आप जैविक खाद और प्राकृतिक तरीकों से सब्जियाँ उगा सकते हैं। इससे आपके खाद्य पदार्थ शुद्ध और स्वास्थ्यवर्धक होते हैं।

3.पर्यावरण के अनुकूल

न्यूट्रीगार्डन न केवल आपकी सेहत के लिए फायदेमंद होता है, बल्कि पर्यावरण को भी लाभ पहुंचाता है। इसमें पानी की बचत, मृदा संरक्षण और जैव विविधता को बढ़ावा मिलता है।

4.शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य

बागवानी एक प्रकार का व्यायाम है, जो आपको शारीरिक रूप से फिट रखता है। इसके साथ ही, पौधों की देखभाल करने से मानसिक शांति और तनाव में कमी आती है।

न्यूट्रीगार्डन कैसे बनाएं?

1.स्थान का चयन करें

सबसे पहले अपने घर में एक ऐसा स्थान चुनें जहाँ धूप आती हो। यह आपके पौधों के विकास के लिए जरूरी है। अगर आपके पास ज़्यादा जगह नहीं है तो आप छत या बालकनी का इस्तेमाल कर सकते हैं।

2.उपयुक्त पौधों का चयन

न्यूट्रीगार्डन के लिए स्थानीय जलवायु के अनुसार पौधे चुनें। टमाटर, पालक, धनिया, मिर्च, और तुलसी जैसे पौधे आसानी से उगाए जा सकते हैं।

3.जैविक खाद और मिट्टी का उपयोग

न्यूट्रीगार्डन में जैविक खाद का प्रयोग करें ताकि आपके पौधे पोषक तत्वों से भरपूर हों। कम्पोस्ट खाद और गोबर की खाद पौधों के लिए सबसे बेहतर होती है।

4.सिंचाई और देखभाल

नियमित रूप से पौधों में पानी दें और उनकी देखभाल करें। कीड़ों और बीमारियों से बचाने के लिए जैविक तरीकों का इस्तेमाल करें।

न्यूट्रीगार्डन के लाभ

1.ताज़ा और रासायन

मुक्त खाद्य पदार्थः यहाँ उगाई जाने वाली सब्जियाँ और फल जैविक होते हैं, जिनमें किसी प्रकार का हानिकारक रसायन नहीं होता।

2.पोषण में वृद्धि

ताजे उत्पाद पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं, जो शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करते हैं।

3.पर्यावरण संरक्षण

न्यूट्रीगार्डन जैव विविधता को बढ़ावा देता है और मिट्टी की गुणवत्ता को बनाए रखता है।

4.खर्च में कमी

घर पर सब्जियाँ उगाने से बाजार की तुलना में खर्च कम होता है। न्यूट्रीगार्डन एक सरल और प्रभावी तरीका है जो पोषण और स्वास्थ्य को प्राथमिकता देता है, साथ ही प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण भी करता है।

निष्कर्ष

न्यूट्रीगार्डन न केवल आपके आहार को बेहतर बनाता है, बल्कि यह आपको आत्मनिर्भर और स्वस्थ जीवनशैली अपनाने में भी मदद करता है। यह पर्यावरण के अनुकूल है और स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। इसलिए, आज ही अपने घर में न्यूट्रीगार्डन बनाने की शुरुआत करें और ताजगी और पौष्टिकता से भरे जीवन का आनंद लें।

02/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

सुरक्षित अनाजों का भंडारण एवं सावधानियां

संदीप साहू, संजय कुमार (शोध छात्र)
सस्य विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

डॉ. जी.एस. पंवार अधिष्ठाता कृषि, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बांदा (उ.प्र.)

परिचय-खाद्यान्न के लिए बढ़ती आबादी की वर्तमान और भविष्य की मांग से निपटने के लिए, फसल के दौरान और उसके बाद बीजों के नुकसान को कम करने पर जोर दिया जाता है। पूरे वर्ष उचित एवं संतुलित सार्वजनिक वितरण सुनिश्चित करने के लिए बीजों को अलग-अलग अवधि में संग्रहित किया जाता है। भारत में लगभग 10% नुकसान फसल कटाई के बाद हो जाता है जिसमें से लगभग 6.5% नुकसान अकेले बीज भंडारण करने के समय में होता है। जिसका मुख्य कारण सुरक्षित भंडारण का न होना है। भारत जैसे विकासशील देश में अनाज के कुल उत्पादन का लगभग 25% भाग विभिन्न कारणों से उपभोग उपयुक्त नहीं रह पाता। जिसका कारण भंडारण की समुचित व्यवस्था का अभाव प्रमुख है। किन्तु भारतवर्ष जैसे विशाल देश और विशाल कृषि उत्पाद हेतु भंडारण व्यवस्था तुरंत ही सुधारा नहीं जा सकता, इसलिए कृषकों को अपने स्तर पर ही फसल की कटाई के बाद अनाज को पूरी तरह से सुरक्षित रखना बहुत जरूरी है, विश्व बैंक की रिपोर्ट (1999) के अनुसार भारत में फसलोत्तर हानि प्रत्येक वर्ष 12 से 16 मिलियन टन खाद्यान्न है जो भारत के एक तिहाई गरीबों का पेट भर सकती है। न फसलोत्तर हानियों में से भंडारण कीट द्वारा हानि ही 2.0 से 4.2% है इसके बाद चूहो द्वारा की 2.50%, पक्षियों द्वारा 0.85% और नमी के कारण 0.68 प्रतिशत है।

1. भंडारण में लगने वाले कीट और चूहे- गोदामों में मुख्यतः गेहूँ और चावल घुन या सूँड वाली सुरसुरी, खपरा बिटिल या पाई, भारतीय मैदा पतंगा लेसर ग्रेन बोरर या छोटी सुरसुरी, लाल आंटा घुन, चावल पतंगा एवं पलन बिटिल या ढोरा इत्यादि गोदामों के प्रमुख कीट हैं। चूहों में घरेलू चूहा एवं छोटी चुहिया भण्डारित अन्न को नुकसान पहुंचाती है।

गोदामों में कीटों के प्रकोप के प्रमुख कारण

नमी की उपलब्धता - भंडारित अन्न में यदि 10: से अधिक नमी होती है तो अनाजों का भंडारण समय घटने लगता है एवं कीटों की संख्या में बढोत्तरी होती है

बीज नमी (%)	भण्डारण समय
11-13 प्रतिशत	6 महीने
10-12 प्रतिशत	1 साल
9-10 प्रतिशत	2 साल
8-10 प्रतिशत	4साल

सापेक्षिक आर्द्रता व तापमान - अन्न भण्डारण के लिये यह आवश्यक है कि वायुमण्डल की सापेक्षिक आर्द्रता बीज नमी प्रतिशत के लगभग बराबर होनी चाहिये एवं भण्डारित कक्ष का तापमान लगभग 25°c से कम होना चाहिए।

आक्सीजन की उपलब्धता- यदि भण्डारण कक्ष में पर्याप्त आक्सीजन उपलब्ध है तो कीटो संख्या बहुत तेजी से बढती है।

2. सुरक्षित अन्न भण्डारण

परंपरागत तौर तरीके से अनाजों का सुरक्षित भण्डारण: सुरक्षित भंडारण हेतु अनेक पारम्परिक प्रथायें आसानी से प्रयोग में लाई जाती है। ये परंपरागत तरीके स्थानीय रूप में उपलब्ध एवं प्राकृतिक संसाधनो पर आधारित होती है। घरेलू स्तर पर निम्नलिखित पारंपरिक विधियों का उपयोग अनाज भंडारण हेतु किया जा सकता है।

अनाजों को धूप से सुखाकर-यह अन्न भण्डारण की सबसे आसान एवं टिकाऊ विधि है इस विधि में फसल कटने के बाद अनाजों को लगभग 1-2 दिन तक धूप में सुखायेंज ब तक अनाजों में 10% नमी उपलब्ध रहे। इससे कीओ में हाने वाली प्रजनन क्रिया रूक जाती है। यह प्रक्रिया मई व जून के महीने से करनी चाहिये

अन्न भण्डारण के लिये नीम की पत्तियों का उपयोग- नीम के पेड से ताजी पत्तिया को एकत्र कर उन्हें छायादार स्थान में सुखाकर अनाज के साथ मिलाकर बोरी में भर देते हैं। विधि बहुत ही प्रभावी, सुरक्षित एवं सस्ती है।

नीम तेल का उपयोग-20 मिली नीम तेल प्रति 1 किग्रा. अनाजों में लगाने से इसकी तेज गंध से कीडों का प्रकोप नही होता है और यह कीडों को अण्डे की अवस्था में भी मारने में सक्षम है।

हल्दी का प्रयोग- इसमें प्रति किलो अनाज में 40 ग्रा. हल्दी चूर्ण का इस्तेमाल करते है। हल्दी चूर्ण को अनाज के साथ मिलाकर आधे घंटे के लिए छाया में सुखा देते है। यह उपचार कीटो से लम्बे समय तक सुरक्षा प्रदान करता है और खाने की दृष्टि से सुरक्षित है।

लहसुन का उपयोग - लहसुन में उपस्थित कीटनाशी गुण एवं उसके गंध के कारण कीटों की संख्या को कम किया जा सकता है इस विधि में लहसुन की कलियों को छीलकर चावल एवं गेहूं के निचले सतह में रखकर पेटी को अच्छे से कसकर बंद कर देते है।

नमक का उपयोग - पुराने समय से ही नमक का उपयोग कवक एवं जीवाणुओं से बचाव के लिए किया जाता रहा है।

चूना उपचार- साधारण 10 ग्राम चूने का चूर्ण का उपयोग 1 किग्रा. अनाज के साथ मिलाकर अनाजों को जूट से बनें थैले में भरकर सुखे स्थान पर रख देने से इसकी महक से ही कीडे दूर भागने लगते है।

नीम के घोल द्वारा उपचारित जूट से बने थैले का उपयोग: नीम के घोल को तैययर करने हेतु 10 लीटर पानी में 10% नीम पत्तियो एवं नीम के बीज का पाउडर बनाकर पोटली में बांध कर पूरी रात पानी में डुबोकर रखे, इसके बाद थैलो को आधे घण्टे के लिये उसी धोल में रखकर थैले को छाया में सुखाकर ही इस्तेमाल अनाज भरने के किया जा सकता है। यह विधि एक वर्ष तक ही कीडो से बचाव के लिये उपयोगी है।

रासायनिक विधि द्वारा अन्न भण्डारण: ■ अनाज भण्डारण करने से पूर्व भण्डारण कक्ष को मैलाथियान 50% ईसी को 1:100 के अनुपात में घोल बनाकर 3ली. प्रति 100 वर्ग मी0 की दर से फर्श, दीवार एवं छत पर छिडकाव कर देने से छिपे हुए कीट मर जाते है। ■ पुराने थैलो को कड़ी घूप में सुखाने या मैलाथियान 50 प्रतिशत ईसी के 1:100 के अनुपात में 10 मिनट भिगोने से बोरो में छिपे हुए कीट मर जाते है। ■ यदि भण्डारण कक्ष में बोरियो में भण्डारण करना हो तो छत की पूरी ऊंचाई का 1/5 भाग छोड़कर ही बोरियों की छल्ली लगाना चाहिए तथा कीटों से सुरक्षा की दृष्टि से एल्युमिनियम फास्फाइड पाउडर पाउच 56% (10 ग्राम पैकिंग का 150 ग्राम प्रति घन) एल्युमिनियम फास्फाइड (15% 12 ग्राम पैकिंग का 600 ग्राम प्रति घन मी. की दर से बोरियों के बीज रख देते है तथा भण्डारण कक्ष को अच्छी तरह से बन्द कर वायुरोधी कर देना चाहिए। ■ बीज में प्रयोग हेतु भण्डारित किये जाने वाले अनाजों में मैलाथियान 5% पाउडर 250 ग्राम पर क्विं. मिलाकर भण्डारित करें।

अनाज को भण्डारण में रखने से पहले सावधानियां

■ भण्डारण की साफ-सफाई अच्छी तरह करें। ■ गोदाम की फर्शो, दीवारों और छत को पर पाई जाने वाली दरारों एवं सुराखों को सीमेन्ट से बन्द कर देना चाहिए। ■ अनाज संग्रहण के लिये नई बोरिया प्रयोग में लाए। यदि बोरियां पुरानी हो तो नीम धोल द्वारा उपचारित कर देना चाहिए।

अनाज को भण्डारण में रखते समय सावधनियां: ■ अनाज को ढोने लिये काम में लाई जाने वाली ट्राली को अच्छी तरह साफ करना चाहिए। ■ अनाज को धूप में अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए। इसकी जांच दाने को दांत के नीचे काटने से की जाती है। यदि कट की आवाज आती है तो अनाज भरने हेतु तैयार है। ■ सुखाने के बाद गरम अनाज को तुरंत नहीं रखें। ऐसा करने से कीड़े-मकोड़े की बढ़ोत्तरी का खतरा रहता है। अनाज को रात भर ठंडा करने के बाद भरें। ■ अनाज की भारी बोरियां सीधे जमीन व दीवार से सटाकर नहीं रखनी चाहिए। उन्हें लकड़ी के तख्तों व बांस की चटाई पर थोड़ी ऊंचाई पर रखें। ■ कोठी में भी अनाज को पॉलीथिन से ढंककर बंद कर दें ताकि अनाज में नमी नही जा सकें।

02/203-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

परंपरा भी, जरूरत भी प्राकृतिक खेती और इसके घटक

निशा महान (शोध छात्रा) सस्य विज्ञान, ब्रह्मानंद महाविद्यालय राठ, हमीरपुर (उ.प्र.)

लोकनाथ सिंह (शोध छात्र-सस्य विज्ञान, ब्रह्मानंद महाविद्यालय राठ, हमीरपुर, उ.प्र.)

डॉ. विनोद कुमार पांडेय

डॉ. वरुण कुमार सिंह

अधिक उत्पादन के लालच में मानव ने रासायनिक खाद एवं कीटनाशकों का अधाधुंध प्रयोग किया जिससे किसान की लागत बढ़ गई और धरती माता अनेक समस्याओं से ग्रसित हो गई है, जैसे-जैविक कार्बन की कमी, मृदा की भौतिक व जैविक गुणवत्ता स्तर का नीचा होना तथा मिट्टी में जीवाणुओं का असंतुलन इत्यादि। वेदों में ऋषियों ने मां के रूप में धरती माता व गाय माता को विशेष दर्जा प्रदान किया है इसके संरक्षण की जिम्मेदारी प्रत्येक मनुष्य पर है। धरती मां का स्वास्थ्य गौ माता के संरक्षण के साथ गहराई से जुड़ा है। प्राकृतिक खेती इसकी ओर किया गया एक सामूहिक प्रयास है जिसमें पौधों के स्वास्थ्य पर ध्यान न देकर भूमि के स्वास्थ्य पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है।

प्राकृतिक खेती वह खेती है जिसमें किसी भी प्रकार के रासायनिक पदार्थ जैसे-रासायनिक खाद, रासायनिक उर्वरक, रासायनिक कीटनाशक, रासायनिक खरपतवारनाशक व रासायनिक बीज शोधक इत्यादि का उपयोग नहीं किया जाता है। केवल प्राकृतिक रूप से निर्मित किए गए पदार्थ, पेड़-पौधों व फसलों के अवशेषों और हरी खाद का उपयोग किया जाता है। यह एक प्रकार से विविध कृषि प्रणाली है जिसमें प्राकृतिक पदार्थों को उपयोग में लाया जाता है। प्राकृतिक खेती को वर्ष 1975 में अपनी पुस्तक 'द वन स्ट्रॉ रिवोल्यूशन' में मासानोबू फुकुओका ने पेश किया था जो की एक जापानी किसान तथा दार्शनिक थे। प्राकृतिक खेती रासायान मुक्त खेती की एक विधा है जो पारंपरिक भारतीय पद्धतियों से उद्धृत है, परंतु अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्राकृतिक खेती को पुनर्योजी कृषि का एक रूप माना जाता है जो ग्रह बचाने की एक रणनीति है। प्राकृतिक खेती कृषि पारिस्थितिकी पर निर्भर करती है, इसका उद्देश्य उत्पादन की लागत को कम करना और एक स्थाई स्तर पर वापसी को बढ़ावा देना है।

प्राकृतिक खेती के घटक

1. बीजामृत

आवश्यक सामग्री: देसी गाय का गोबर-5 किलोग्राम, देसी गाय का मूत्र-5 लीटर, चूना-250 ग्राम, पानी-20 लीटर, खेत की मिट्टी-मुट्ठी भर

उद्देश्य: बीज शोधन के लिए

निर्माण की विधि: सभी सामग्री को पानी में घोलकर 24 घंटे के लिए छाया में रखें तथा दिन में 2 बार (सुबह-शाम) लकड़ी के डंडे से घड़ी की सुई की दिशा में मिलाये। तैयार होने के बाद बीज को शोधित करें तथा बीज को छाया में सुखाकर बुवाई करें।

2. जीवामृत

आवश्यक सामग्री: देसी गाय का गोबर-10 किलोग्राम, देसी गाय का मूत्र-10 लीटर, गुड-2 किलोग्राम, बेसन-2 किलोग्राम, पानी-180 लीटर, बरगद के पेड़ के नीचे की मिट्टी-1 किलोग्राम

उद्देश्य - फसलों में छिड़काव के लिए

निर्माण की विधि-सभी सामग्री को प्लास्टिक के ड्रम में डालकर लकड़ी की सहायता से घोलकर इस घोल को 2-3 दिन तक सड़ने के लिए छाया में रख देते हैं तथा दिन में 2 बार (सुबह-शाम) घड़ी की सुई की दिशा में लकड़ी के डंडे की मदद से घुमा देते हैं। घुमाने के बाद जीवामृत को बोरे से ढक देते हैं। गर्मियों में जीवामृत बनाने के 7 दिन तथा सर्दियों में 8 से 15 दिन बाद तक उपयोग कर सकते हैं।

3. घनजीवामृत

आवश्यक सामग्री: देसी गाय का गोबर - 100 किलोग्राम, गुड - 1 किलोग्राम, दलहन का आटा(चना, मटर, मसूर) - 2 किलोग्राम, खेत की मिट्टी - 1 मुट्ठी, देसी गाय का मूत्र - आवश्यकतानुसार

निर्माण की विधि - सभी सामग्री को मिलाकर अच्छी तरह से गूंथ लें, जिससे हलवा जैसा गाढा बन जाए, इसको 2 दिन बोरे से ढक कर छाया में रखते हैं तथा थोड़ी-थोड़ी पानी छिड़कते रहते हैं। 2-3 दिन बाद इसके लड्डू बना लें। इन लड्डुओं को कपास, मिर्च, टमाटर, बैगन, भिंडी व सरसों के बीज के साथ भूमि में रख देते हैं ऊपर से सूखी घास डाल देते हैं। इसके प्रयोग के समय खेत में नमी की कमी नहीं होनी चाहिए।

4. नीमास्त्र

उद्देश्य : रस चूसने वाले कीटों, छोटी सूड़ियों के नियंत्रण के लिए

सामग्री-नीम के हरे पत्ते - 5 किलोग्राम या नीम के सूखे फल- 5 किलोग्राम, पानी 100 लीटर, देसी गाय का मूत्र - 5 लीटर, देसी गाय का गोबर-1 किलोग्राम

निर्माण की विधि-नीम के पत्ते या फलों में से जो भी उपलब्ध हो उसको पीसकर सभी सामग्री को पानी में डालकर लकड़ी की मदद से घोल देते हैं तथा इस घोल को 48 घंटे के लिए छाया में रख देते हैं। दिन में 3 बार लकड़ी की मदद से मिला देते हैं तथा 48 घंटे बाद कपड़े से छानकर फसलों पर छिड़काव करते हैं।

5. ब्रह्मास्त्र

उद्देश्य: कीड़ों,बड़ी सुंडियों तथा इल्लियों के नियंत्रण हेतु

आवश्यक सामग्री: देसी गाय का मूत्र - 10 लीटर, नीम के पत्ते-3 किलोग्राम, करंजे के पत्ते - 2 किलोग्राम, सीताफल के पत्ते-2 किलोग्राम, धतूरे के पत्ते-2 किलोग्राम

निर्माण की विधि: सभी पत्तों को पीसकर गोमूत्र में घोल लें तथा ढक कर 3-4 उबाल आने तक उबालें। 48 घंटे तक ठंडा होने के लिए रखें। ठंडा होने के बाद कपड़े से छानकर किसी बर्तन में भरकर रखें। 100 लीटर पानी में 2-2.5 लीटर ब्रह्मास्त्र मिलकर फसलों पर छिड़काव करें।

6. अग्नि-अस्त्र

उद्देश्य: पेड़ के तनों वा डंठलों में रहने वाले कीड़े, फलियों और फलों में रहने वाली सुंडियों, कपास की सुंडियों तथा अन्य सभी प्रकार की बड़ी सुंडियों के नियंत्रण के लिए

आवश्यक सामग्री: देसी गाय का मूत्र-20 लीटर, हरी मिर्च-आधा किलोग्राम, लहसुन-आधा किलोग्राम, नीम के पत्ते-5 किलोग्राम

निर्माण की विधि: हरी मिर्च, लहसुन और नीम के पत्तों को पीसकर गोमूत्र में घोलकर 4-5 उबाल आने तक पकाते हैं। उबाल आने के बाद उतारकर 48 घंटे तक ठंडा होने के लिए रख देते हैं तथा 48 घंटे बाद कपड़े से छानकर अलग बर्तन में रख देते हैं। 100 लीटर पानी में 2-2.5 लीटर अग्नि-अस्त्र डालकर फसलों पर छिड़काव करें।

7. दशपर्णी अर्क

उद्देश्य: सभी प्रकार के रस चूसक कीड़ों और इल्लियों के नियंत्रण के लिए।

आवश्यक सामग्री: पानी-200 लीटर, देसी गाय का मूत्र-10 लीटर, देशी गाय का गोबर-2 किलोग्राम, हल्दी पाउडर-500 ग्राम, अदरक की चटनी-500 ग्राम, हींग पाउडर-10 ग्राम, तंबाकू पाउडर-1 किलोग्राम, तीखी हरी मिर्च की चटनी-1 किलोग्राम, लहसुन की चटनी-आधा किलोग्राम, नीम की छोटी-छोटी टहनियां-2 किलोग्राम, करंज की पत्तियां-2 किलोग्राम, अरंडी की पत्तियां-2 किलोग्राम, बेल की पत्तियां-2 किलोग्राम, आम की पत्तियां-2 किलोग्राम, धतूरे की पत्तियां-2 किलोग्राम, तुलसी की टहनिया फूल-पत्तों सहित-2 किलोग्राम, अमरूद की पत्तियां-2 किलोग्राम, देसी करेले की पत्तियां-2 किलोग्राम, पपीते की पत्तियां-2 किलोग्राम, हल्दी-2 किलोग्राम, अदरक-2 किलोग्राम, बबूल की पत्तियां-2 किलोग्राम, सीताफल की पत्तियां-2 किलोग्राम, सोंठ का पाउडर-200 ग्राम

निर्माण की विधि: लिखित वनस्पतियों में से कोई 10 वनस्पतियों की पत्तियों का उपयोग करें सभी वनस्पतियों के उपयोग करने की जरूरत नहीं होती है। सभी सामग्री को एक ड्रम में घोले तथा लकड़ी के डंडे से घड़ी की सुई की दिशा में दिन में 2 बार (सुबह-शाम) घोले। इस घोल को छाया में रखें तथा धूप व पानी से बचाए। इस औषधि को तैयार होने में 40 दिन का समय लगता है, 40 दिन बाद कपड़े से छाने तथा अलग बर्तन में भंडारण करें। इस घोल का प्रयोग 6 महीने तक किया जा सकता है। 200 लीटर पानी में 5-7 लीटर 10 दशपर्णी अर्क मिलकर फसलों पर छिड़काव करें।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कार्बन खेती : जलवायु परिवर्तन से निपटने की नई दिशा

हरि शंकर सिंह, रोहित कुमार जायसवाल
रिसर्च स्कॉलर, (मृदा विज्ञान विभाग),
चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

संजीव शर्मा (सहायक प्रोफेसर) मृदा विज्ञान विभाग) (चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

कार्बन खेती एक ऐसी कृषि पद्धति है जिसमें मिट्टी और वनस्पति के माध्यम से वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करके मिट्टी में संग्रहित किया जाता है। यह न केवल जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने में मदद करता है, बल्कि मिट्टी की गुणवत्ता, जैव विविधता और खेती की उत्पादकता को भी बढ़ाता है। जिस्से हमारी मृदा मै ऊर्वरक छमता बानी रहती है। मुख्य तकनीकों में कवर क्रॉपिंग, नो-टिल खेती, और एग्रोफोरेस्ट्री शामिल हैं। कवर क्रॉपिंग के तहत फसलों के बीच में ऐसी फसलें उगाई जाती हैं जो मिट्टी को ढकने के साथ-साथ कार्बन अवशोषित करती हैं। नो-टिल खेती में बिना मिट्टी को जोते खेती की जाती है, जिससे कार्बन का मिट्टी में संरक्षण होता है। एग्रोफोरेस्ट्री में खेतों के साथ पेड़-पौधों का संयोजन किया जाता है, जो कार्बन संग्रहण में मदद करता है। जैविक खाद और फसल अवशेष प्रबंधन भी कार्बन खेती के हिस्से हैं, जो मिट्टी में जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ाते हैं।

कार्बन खेती किसानों के लिए एक नई आर्थिक संभावनाएं भी प्रदान करती है। कार्बन क्रेडिट सिस्टम के माध्यम से, किसान अतिरिक्त कार्बन संग्रहण के लिए वित्तीय लाभ कमा सकते हैं। इस प्रणाली से किसान जलवायु परिवर्तन से निपटने में योगदान करते हुए अपनी आय बढ़ा सकते हैं। इस प्रकार, कार्बन खेती जलवायु संकट से निपटने के साथ-साथ सतत कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने का एक टिकाऊ उपाय है।

कार्बन खेती के मुख्य उद्देश्य

कार्बन का अवशोषण और संग्रहणः वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर इसे मिट्टी में जमा करना। कार्बन कैप्चर और स्टोरेज एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें औद्योगिक स्रोतों से कार्बन डाइऑक्साइड की अपेक्षाकृत शुद्ध धारा को अलग किया जाता है, उपचारित किया जाता है और दीर्घकालिक भंडारण स्थान पर ले जाया जाता है। CO2 को एक बड़े बिंदु स्रोत से कैप्चर किया जाता है, जैसे कि प्राकृतिक गैस प्रसंस्करण संयंत्र या कोयला बिजली संयंत्र, और आमतौर पर एक गहरी भूवैज्ञानिक संरचना में संग्रहीत किया जाता है। 2023 तक, सालाना कैप्चर किए गए CO2 का लगभग 73% उन्नत तेल वसूली के

लिए उपयोग किया जाता है, एक प्रक्रिया जिसमें अधिक तेल निकालने के लिए CO2 को आंशिक रूप से समाप्त तेल भंडार में इंजेक्ट किया जाता है और फिर भूमिगत छोड़ दिया जाता है। चूंकि ईओआर इसे संग्रहीत करने के अलावा CO2 का उपयोग करता है, इसलिए सीसीएस को कार्बन कैप्चर, उपयोग और भंडारण के रूप में भी जाना जाता है।

मिट्टी की उर्वरता में वृद्धिः पौधों की वृद्धि तथा विकास के लिए मृदा को भौतिक, रसायनिक तथा जैविक शक्ति के योग को मृदा उर्वरता कहते हैं। पौधों की वृद्धि एवं विकास के लिए भौतिक रसायनिक तथा जैविक शक्ति तीनों का अपना-अपना महत्व है यदि एक भी शक्ति कम है,तो मृदा की उर्वरता यह स्वास्थ्य कम होगा। जैसे, मिट्टी में पौधों की वृद्धि के लिए पर्याप्त पोषक तत्व है, किंतु यदि जल निकास ठीक से नहीं है, तो जल निकास ना होने के कारण मृदा वायु में कमी होगी जिससे मृदा जीव की वृद्धि प्रभावित होगी उनके लिए प्रतिकूल स्थिति निर्मित होने से मृदा की उर्वरता या स्वास्थ्य कम होगा। सभी उत्पादक भूमि की उर्वरता या स्वास्थ्य अच्छी हो सकती है, किंतु सभी उर्वर भूमि की उत्पादकता अच्छी नहीं हो सकती। ऐसा भूमि में जल निकास ना होने से, जलवायु की विपरीत परिस्थितियों होने के कारण हो सकता है।

जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करना: ग्रीनहाउस गैसों के स्तर को कम करना।

किसानों के लिए आय के नए स्रोतः कार्बन क्रेडिट्स के माध्यम से अतिरिक्त आय प्राप्त करना।

कार्बन खेती के मुख्य तरीके

कवर क्रॉपिंग (आवरण फसल)

विवरण- मुख्य फसल के बाहर की अवधि में मिट्टी को ढंकने के लिए क्लोवर, राय, या लेग्युम जैसी फसलें उगाई जाती हैं।

लाभ- मिट्टी की संरचना में सुधार, जैविक पदार्थ बढ़ाना और कार्बन को संग्रहीत करना।

कमी जुताई (नो-टिल खेती)

विवरणः मिट्टी की कम से कम खुदाई या जुताई करना।

लाभः मिट्टी के अंदर कार्बन को संरक्षित करना, मिट्टी की गुणवत्ता को बनाए रखना।

एग्रोफोरेस्ट्री (कृषि वानिकी)

विवरण- खेतों में पेड़ों और झाड़ियों को उगाना, जैसे कि वायुवरोधन और फसल की पंक्तियों में वृक्षारोपण।

लाभ-भूमि की उत्पादकता और जैव विविधता बढ़ाने के साथ-साथ मिट्टी में कार्बन का संग्रहण।

कम्पोस्टिंग और जैविक संशोधन

विवरण- कम्पोस्ट, गोबर या अन्य जैविक संशोधनों का उपयोग।

लाभ- मिट्टी में जैविक पदार्थ बढ़ाना और कार्बन को संग्रहीत करना।

बायोचार का उपयोग

विवरण- जैविक पदार्थ को ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में गर्म करके बायोचार का उत्पादन और उसे मिट्टी में मिलाना।

लाभ- मिट्टी की उर्वरता और पानी की धारण क्षमता में वृद्धि।

रोटेशनल ग्रेजिंग (चक्रात्मक चराई)

विवरण- पशुओं को चराई के लिए अलग-अलग क्षेत्रों में स्थानांतरित करना।

लाभ- पौधों की वृद्धि को बढ़ाना और मिट्टी में कार्बन का संचय करना।

गहन फसल चक्रण और विविधीकरण

विवरण- फसलों का विभिन्न मौसमों में चक्रण और एक ही भूमि पर विविध फसलों का उत्पादन।

लाभ- मिट्टी की उर्वरता और जैविक पदार्थ में सुधार।

कार्बन क्रेडिट्स और किसानों के लिए लाभ

कार्बन खेती से जुड़े किसान कार्बन क्रेडिट्स बेच सकते हैं, जो कंपनियों द्वारा खरीदे जाते हैं ताकि वे अपने कार्बन फुटप्रिंट को कम कर सकें। यह किसानों के लिए एक अतिरिक्त आय का स्रोत बन सकता है। जैसे : जैविक कृषि, पेड़ लगाना और वन संरक्षण, नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग, पानी और मिट्टी का संरक्षण

निष्कर्ष

कार्बन खेती एक टिकाऊ और पर्यावरण अनुकूल कृषि पद्धति है जो न केवल किसानों को आर्थिक लाभ देती है बल्कि जलवायु परिवर्तन से निपटने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके अपनाने से मिट्टी की गुणवत्ता, उत्पादकता और जैव विविधता को भी बढ़ावा मिलता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

भारतीय दर्शन में वृक्ष का महत्व

सीमा जाट (सहायक प्रोफेसर) विस्तार शिक्षा विभाग, दयानंद कॉलेज, अजमेर (राजस्थान)

के.सी. शर्मा निदेशक, मानव संसाधन विकास, श्री करण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर (राजस्थान)

पर्यावरण का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसमें स्थल मण्डल, जल मण्डल एवं वायुमण्डल तीनों ही सम्मिलित है। प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वायु को दुषित न करें, जल की गुणवत्ता को बनाये रखें, भूमि को प्रदूषित न करें। प्राकृतिक साधनों का न्यूनतम दोहन करें। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा शुरू किया गया एक पेड़ माँ के नाम अभियान जलवायु परिवर्तन के मुद्दों पर अब जन-आंदोलन बन चुका है। यह माँ और धरती माता के प्रति जन-सम्मान का प्रकटीकरण है। हर व्यक्ति एक पौधा लगाकर माँ और धरती माता के प्रति सम्मान प्रकट कर रहा है। पर्यावरण संरक्षण आज विश्व के लिए चिंता का विषय है। कार्बन डाईऑक्साइड और कार्बन मोनोऑक्साइड ने ओजोन स्तर को कम कर दिया है, जिससे धरती पर गर्मी बढ़ने लगी है और जलवायु परिवर्तन का अनुभव हो रहा है।

भारतवर्ष विश्वास, प्रेम एवं परम्पराओं का देश है। यहाँ पर अनादि काल से अनेक प्रकार की उपासनाएँ, पूजा तथा अर्चना की पद्धतियाँ प्रचलित है। देवी देवताओं से लेकर पेड़ पौधों एवं पशु पक्षिओं को पूजने तक लोक रीती घर-घर प्रचलित थी और आज भी है। जहाँ वृक्षों की पूजा की जाती है। आज भी वृक्षों को वृक्ष देवता कहकर पुकारते हैं।

पीपल : पद्य पुराण में लिखा है कि पीपल का वृक्ष लगाकर मनुष्य सैकड़ों यज्ञों से ज्यादा फल प्राप्त कर लेता है प्रत्येक पर्व के दिन जो उसमें पत्ते पास में गिरते हैं वे पिण्ड के समान होकर पीपल वृक्ष के रोपकर्ता के पितरों को तृप्ति प्रदान करते हैं। हमारे देश में आज भी यह मान्यता है कि पीपल के पेड़ में ब्रह्मा, विष्णु और महेश का वास है पीपल व तुलसी 24 घण्टे आक्सीजन प्राणवायु देते हैं। गौतम बुद्ध ने इसी वृक्ष के नीचे जीवन का संदेश प्राप्त किया था और उनहें ज्ञान का प्रकाश मिला था।

लोक संस्कृति में पीपल को खुशी ओर सुख का प्रतीक मानते हैं और प्रातः काल जल चढ़ाकर इसके प्रति श्रद्धा करते हैं। वैदिक युग में पीपल को काफी महत्ता प्राप्त थी और आज भी है। आदिकाल में पीपल की पूजा अराधना अनेक प्रकार से स्त्रियाँ किया करती थी।

आँवला: आँवला के वृक्ष के लिए लिखा गया है कि जिसके आँगन मे आँवले का पेड है उस घर में श्री विष्णु सदा विराजमान रहते हैं। आँवला खाने से आयु बढ़ती है उसका जल पीने से धर्म संयम होता है और उसके द्वारा स्नान करने से दरिद्रता दूर होती है तथा सभी प्रकार का एश्वर्य प्राप्त होता है पुत्र प्राप्ति के लिए इस वृक्ष की पूजा की जाती हैं।

तुलसी: तुलसी के पौधे का हिन्दू संस्कृति में काफी महत्व है। मंदिरों तथा घर आँगन के अहातों से लेकर बाग में बगीचों, कुएँ, तालाबों के पवित्र स्थानों पर इसके पौधों को विशेषरूप से देखा जा सकता है। तुलसी पर प्रतिदिन जल चढ़ाकर मनोकामना की सिद्धि

होती है, कार्तिक मास एकादशी के दिन तुलसी का धूमधाम से विवाह रचाया जाता है और पूर्णिमा के दिन विदाई की रस्म अदा करते हैं।

शम्भूएके सर्व तीर्थोति चम्मधो सर्वदेवताः।
चदग्रे सर्ववेदाश्च तुलसिता नमाभ्यहम्।।

तुलसी की पत्तियों को पूजा अराधना में भोग के साथ व चरणामृत में डालकर प्रसाद रूप में वितरित किया जाता है। तुलसी के मूल में सभी तीर्थों का निवास है जिसके मध्य में सभी देवताओं का निवास है उस तुलसी को प्रणाम करती हूँ।

बरगद : बरगद की पूजा ज्येष्ठ मास की अमावस्या के दिन हिन्दू स्त्रियाँ इसकी पूजा करती है। ऋग्वेद एवं अर्थवेद में ऐसा लिखा गया है कि बरगद के वृक्ष को लगाने वाले को स्वर्ग की प्राप्ति होती है। पद्म पुराण में बरगद को भगवान विष्णु का अवतार कहा गया है।

बेर: बेर फल का उल्लेख तुलसीदास कृत रामायण में भी है कि श्री रामचन्द्र जी भगवान ने प्रेम विभोर होकर शबरी के जूठे बेर खाये। बेल का सम्पूर्ण वृक्ष पवित्र और भगवान शिव को प्रिय है। शिव पूजन आक, धतुरा, कनेर आदि से किया जाता है।

पलाश: पलाश को कामदेव का रूप कहा गया है क्योंकि इसके सुन्दर व आकर्षक फल बंसत ऋतु में बड़े ही मनोहारी प्रतीत होते हैं। पद्य पुराण में पलास को ब्रह्मा का अवतार कहा गया है। इसकी लकड़ी को हवन सामग्री में प्रयोग करते हैं।

खेजड़ी: थार के रेगिस्तान में पाए जाने वाले वृक्ष खेजड़ी के सम्बन्ध में राजस्थानी भाषा में कन्हैयालाल सेठिया की कविता मींझर बहुत प्रसिद्द है। इस कविता में खेजड़ी की उपयोगिता और महत्व का सुन्दर चित्रण किया गया है। दशहरे के दिन शमी के वृक्ष की पूजा करने की परंपरा भी है। रावण दहन के बाद घर लौटते समय शमी के पत्ते लूट कर लाने की प्रथा है जो स्वर्ण का प्रतीक मानी जाती है। इसके अनेक औषधीय गुण भी है। पांडवों द्वारा अज्ञातवास के अंतिम वर्ष में गांडीव धनुष इसी पेड़ में छुपाए जाने के उल्लेख मिलते हैं। इसी प्रकार लंका विजय से पूर्व भगवान राम द्वारा शमी के वृक्ष की पूजा का उल्लेख मिलता है। शमी या खेजड़ी के वृक्ष की लकड़ी यज्ञ की समिधा के लिए पवित्र मानी जाती है।

नीम: नीम का भी सामयिक एवँ आर्थिक दृष्टिकोण से काफी महत्व है। चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन पूजा-अराधना करके काली मिर्च सहित नीम की कोमल पत्तियों को खाने का विशेष महत्व है। नारियल वैदिक कालीन भारतीय साहित्य में नारियल का उल्लेख किया गया है। इसके फल का पूजा आराधना में आज भी विशेष स्थान है। हवन में नारियल फल आवश्यक माना गया है। रामनवमी के दिन श्री रामचन्द्र जी भगवान को नारियल फलों से अर्ध्थ देने का विधान है।

चन्दन: चन्दन एक ऐसा वृक्ष है जिसकी सुगंधित लकड़ी का व्यवहार देवी-देवताओं के पूजा-पाठ में किया जाता है। वैशाख मास के दिन गंगा स्नान करके भगवान कृष्ण को चन्दन चढ़ाने का विशेष माहात्म्य दर्शाया गया है।

गुलर: पुराणों में गुलर को विष्णु का अवतार कहा गया है। हवन सामग्री तैयार करने में भी गुलर की आवश्यकता पड़ती है। भारतीय संस्कृति में यह स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है की स्त्रियाँ गुलर वृक्ष की पूजा संतान तथा सौभाग्य और सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए करती है।

अंजीर : पुराण में अंजीर वृक्ष को भी भगवान विष्णु का अवतार माना गया है। इसकी पूजा और अर्चना करने से सुख शान्ति तथा आनन्द की प्राप्ति होती है। अशोक वृक्ष हिन्दुओं का एक पवित्र वृक्ष है इसकी महत्ता पूजा अर्चना में काफी है। इसकी हरी पत्तियों का तोरण बनाकर शुभ अवसर पर द्वारों पर सजाते हैं।

आम: आम के वृक्ष और आम के फल को बहुत. बहुत शुभ माना जाता है। मांगलिक कार्यों में इसका प्रयोग अवश्य ही किया जाता है। इसकी लकड़ी को हवन सामग्री में प्रयोग करते हैं।

कदम्ब: विष्णु पुराण में कदम्ब को कादम्बरी भी कहा गया है। कदम्ब का नाम महाभारत कालीन श्री कृष्ण के साथ जुड़ा है।

केले: केले का सम्पूर्ण पौधा पवित्र समझा जाता है। केले के सम्पूर्ण पौधे को किसी भी शुभ कार्य में प्रवेश द्वारा पर शोभा बढ़ाने एवँ मंडप सजाने के लिए हिन्दू कर्मशास्त्र में विधान है केले के फल को शुभ माना गया है और यही कारण है कि इसे प्रायः सभी प्रकार के शुभ कार्यों में स्थान दिया गया है। गुरूवार को केले की पूजा करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। इसके अलावा भी कई पेड़ पौधे जैसे सेजड़ी, चम्पा, कल्पवृक्ष, बांस, कमल, तृपसी, पान, बखमा, साफ, सेमल, चमेली आदि को भी आदर से पूजा जाता है।

धन्वतरि कोष में उद्यान विज्ञान पर प्रकाश डाला गया है। उत्तर वैदिक काल में उद्यान विज्ञान की अबाध गति से प्रगति हुई थी। भारतीय साहित्य में ऐसी ढेर सारी कथाएँ पढ़ने को मिलती है। जिनमें आम, महुआ, इमली, नीम, बबूल, बेस, पीपल, बरगद, अशोक, गुलर, आँवला, बांस एवँ अनेकानेक फल जैसे कमल, गुलाब, कचनार इत्यादि के पेड़ पौधे का संबंध ग्लानि, घृणा, हीनता, संतप्ति, असंतप्ति, दुख-सुख, व्यथा प्रेम आदि के साथ जोड़ा गया है। आदिकाल में हवन की लकड़ी में आम की लकड़ी, पीपल, ढाक आदि की लकड़ी का प्रयोग होता आ रहा है। वेद, उपनिषद्, महाभारत, पुराणों, रामायण इत्यादि ग्रंथों मे जिनमें भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की कहानी है। स्थान-स्थान पर लिखा मिलता है कि पेड़-पौधों से घृणा करना अपरिपक्व अवस्था में काटना, उन्हें प्यार न करना मानव को सीधे पतन की ओर ले जाता है। अपने देश के ऋषि मुनियों के महान ग्रंथों की रचनाएँ भी वनों में एकांत में बैठकर की है। पुराण में लिखा है कि जंगलों की कटाई से सुखा एवं अभाव की स्थिति बताती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

बैंगन भारत में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण फसल

नीतू चौधरी विद्यावाचस्पति, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान, कृषि महाविद्यालय, बीकानेर

बैंगन भारत में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है। उच्च तुंगता वाले क्षेत्रों के अलावा यह संपूर्ण भारत में उगाई जाती है। इसकी खेती वर्षभर की जा सकती है। चीन के बाद भारत बैंगन का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। भारत में प्रमुख बैंगन उत्पादक राज्य पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, कर्नाटक, बिहार, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश और आंध्र प्रदेश हैं। यह एक बहुवर्षीय फसल के रूप में उगाई जा सकती है। परंतु इसे एक वर्षीय फसल के रूप में उगाया जाता है।

बुआई का समय: पहली फसल के लिए, अक्टूबर में नर्सरी तैयार करें और नवंबर में पौधे रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं।

दूसरी फसल के लिए, नवंबर में नर्सरी तैयार करें और फरवरी के पहले पखवाड़े में रोपाई करें।

तीसरी फसल के लिए, फरवरी-मार्च में नर्सरी बोएं और अप्रैल के अंत से पहले रोपाई करें। चौथी फसल के लिए, जुलाई में नर्सरी बोएं और अगस्त में रोपाई करें। गर्मी के मौसम में हर तीसरे या चौथे दिन और सर्दियों के मौसम में 12 से 15 दिन बाद खेत में सिंचाई करें। बैंगन की अच्छी पैदावार के लिए समय पर सिंचाई बहुत ज़रूरी है। ठंड के दिनों में मिट्टी को नमीदार बनाए रखने के लिए बैंगन के खेत में नियमित रूप से सिंचाई करनी चाहिए। खेत में पानी जमा न होने दें क्योंकि बैंगन जलभराव को बर्दाश्त नहीं कर सकता। आमतौर पर खरपतवार नियंत्रण, वायु संचार और पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए दो-चार निराई-गुड़ाई और गुड़ाई की आवश्यकता होती है। काली पॉलीथीन फिल्म से मल्चिंग करने से खरपतवार की वृद्धि कम होती है और मिट्टी का तापमान बना रहता है। बैंगन के पौधे पर विभिन्न जीवन प्रावस्थाओं में विभिन्न प्रकार के रोगों का आक्रमण होता है। जो किसके उत्पादन में एक प्रमुख सीमा कारक है। इस लेख मे हम बैंगन में होने वाले प्रमुख रोगों तथा उनके प्रबंधन के बारे में चर्चा करेंगे

कीट और उनका नियंत्रण

● टहनी और फल छेदक, (ल्यूसिनोड्स ऑर्बोनेलिस) यह बैंगन के प्रमुख और गंभीर कीटों में से एक है। एक छोटी गुलाबी रंग की इल्ली शुरुआती अवस्था में अंतिम टहनियों में छेद करके अंदरूनी ऊतकों को खाती है, बाद में फलों में छेद कर देती है। संक्रमित फलों पर बड़े-बड़े छेद देखे जा सकते हैं। कीट से प्रभावित फल खाने के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं।

फल छेदक का प्रबंधन: फल और टहनियों पर छेद करने वाले कीट के संक्रमण के लिए रोपाई के बाद हर हफ्ते खेत की निगरानी करें। संक्रमित फलों को हटा दें और नष्ट कर दें। रोपाई के एक महीने बाद ट्रायज़ोफॉस 20 मिली/10 लीटर पानी और नीम अर्क 50 ग्राम/लीटर का छिड़काव करें। 10-15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव दोहराएं। जब फसल फूलने की अवस्था में हो तो क्लोरेंट्रानिलिप्रोएल 18.5% एससी (कोराजन) 5 मिली + टीपोल 5 मिली को 12 लीटर पानी में मिलाकर 20 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें। संक्रमण की शुरुआती अवस्था में 5%

नीम अर्क 50 ग्राम/लीटर का छिड़काव करें। यदि खेत में संक्रमण दिखाई दे तो प्रभावित फसलों पर 25% साइपरमेथ्रिन 2.4 मिली/10 लीटर पानी का छिड़काव करें। अधिक आबादी के लिए स्पिनोसैड 1 मिली/लीटर पानी का छिड़काव करें।

हड्डा बीटल, (हेनोसेपिलाचना विगिन्टियोक्टोपंटाटा): यह बैंगन के महत्वपूर्ण कीटों में से एक है, जो अक्सर पत्तियों को गंभीर नुकसान पहुंचाता है। ग्रब और वयस्क दोनों ही नुकसान पहुंचाते हैं। यह पत्तियों की एपिडर्मल परत को खाता है, जिसके परिणामस्वरूप पत्तियां पूरी तरह सूख जाती हैं।

बैंगन में हड्डा बीटल का प्रबंधन ● अलग से प्रबंधन पद्धतियों की आवश्यकता नहीं है; फल छेदक के लिए किए गए नियंत्रण उपाय ही पर्याप्त हैं।

● संक्रमण के प्रारंभिक चरण में ग्रब और वयस्कों को एकत्रित करने और नष्ट करने से आगे संक्रमण कम हो जाएगा

● जब प्रकोप गंभीर हो तो कार्बेरिल (0.1%) या क्विनालफॉस (0.05%) जैसे संपर्क कीटनाशक का छिड़काव करें।

● आवश्यकता आधारित अनुप्रयोग से लार्वा-प्यूपल यूलोफिड परजीवी पेडिओबियस फोवोलेटस को विकसित करने में भी मदद मिलेगी, जो इस कीट से जुड़ा पाया जाता है और प्राकृतिक स्थिति के अंतर्गत महत्वपूर्ण मृत्यु दर का कारण बनता है।

● फलों के पकने और तुड़ाई के समय कीटनाशक का प्रयोग न करें।

● नए पौधे लगाने से पहले पुराने पौधों को उखाड़कर जला दें क्योंकि उनमें कीट पनपते हैं और संक्रमण आगे भी जारी रहता है।

थ्रिप्स: थ्रिप्स की गंभीरता को रोकने के लिए प्रति एकड़ 6-8 नीले चिपचिपे जाल रखें और प्रकोप को कम करने के लिए वर्टिसिलियम लेकानी 5 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। यदि थ्रिप्स का प्रकोप अधिक हो तो नियंत्रण के लिए फिप्रोनिल 2 मिली प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

थ्रिप्स: थ्रिप्स की गंभीरता को रोकने के लिए प्रति एकड़ 6-8 नीले चिपचिपे जाल रखें और प्रकोप को कम करने के लिए वर्टिसिलियम लेकानी 5 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। यदि थ्रिप्स का प्रकोप अधिक हो तो नियंत्रण के लिए फिप्रोनिल 2 मिली प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

जैसिड्स कीट: ये हरे रंग के कीट पत्तियों की निचली सतह से लगकर रस चूसते हैं। जिसके फलस्वरूप पत्तियां पीली पद जाती हैं और पौधे कमजोर हो जाते हैं। इनके नियंत्रण हेतु रोपाई से पूर्व पौधों की जड़ों को कॉनफीडर दवा के 1.25 मि.ली./ली. की दर से बने घोल में 2 घंटे तक डूबोयें ।

एकीकृत कीट प्रबंधन रणनीतियां

नर्सरी की स्थापना ● भिगोने आदि से बचने के लिए अच्छी जल निकासी हेतु हमेशा जमीनी स्तर से 10 सेमी ऊपर नर्सरी तैयार करें। ● जून के दौरान तीन हफ्तों के लिए नर्सरी बेड को धूप सन्शोधन करने के लिए 45 गेज (0.45 मिमी) की पॉलिथीन शीट से ढंक दें जिससे मिट्टी के कीड़े, जीवाणु जनित उक्टा तथा सूत्र क्रमि जैसी बीमारियों को कम करने में मदद मिलेगी। हालाँकि, ध्यान रखा जाना चाहिए कि धूप सन्शोधन करने के लिए मिट्टी में पर्याप्त नमी मौजूद हो। ● तीन किलो सडी गोबर की खाद में 250 ग्राम ट्राइकोडर्मा विराडी मिलाकर पौधों के संवर्धन के लिए लगभग सात दिनों के लिए छोड़ दें। सात दिनों के बाद मिट्टी में 3 वर्ग मीटर के बेड में मिला दें। F1-321 जैसे लोकप्रिय संकरों की बेड में बुवाई जुलाई के पहले हफ्ते में होनी चाहिए। बुवाई से पहले, बीज को ट्राइकोडर्मा विराडी 4 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर से उपचार किया जाना चाहिए। निराई समय-समय पर की जानी चाहिए और संक्रमित पौधों को नर्सरी से बाहर कर देना चाहिए।

रोग और उनका नियंत्रण

रूट नॉट नेमाटोड: यह बैंगन की फसल में आम है। ये पौध के शुरुआती चरण में ज़्यादा नुकसानदायक होते हैं। ये रूट गॉल का कारण बनते हैं। रूट नॉट नेमाटोड के संक्रमण के कारण, पौधे बौने हो जाते हैं, पीले दिखाई देते हैं और इस तरह उपज प्रभावित होती है।

एकल फसल उगाने से बचें और फसल चक्र अपनाएँ। मिट्टी में कार्बोफ्यूरान या फोरेट @5-8 किग्रा/एकड़ डालें।

डंपिंग ऑफ: नमी और खराब जल निकासी वाली मिट्टी डंपिंग ऑफ बीमारी का कारण बनती है। यह मिट्टी से होने वाली बीमारी है। पानी सोखने और तने के सिकुड़ने से पौधे निकल आते हैं। अंकुर निकलने से पहले ही मर जाते हैं। अगर यह नर्सरी में दिखाई देता है तो पूरा अंकुर नष्ट हो सकता है। यह बैंगन की एक गंभीर बीमारी है।

बुवाई से पहले बीज को 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से थिरम से उपचारित करें। नर्सरी की मिट्टी का सोलराइजेशन करें। अगर नर्सरी में डंपिंग ऑफ दिखाई दे तो पानी निकाल दें और नर्सरी की मिट्टी को कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में भिगो दें।

फ़ोमोप्सिस ब्लाइट और फ्रूट रॉट: पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। फल पर पानी जैसा घाव दिखाई देता है और यह काला हो जाता है। बुवाई से पहले बीज को थिरम @3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज से उपचारित करें। खेती के लिए ब्लाइट रोग प्रतिरोधी किस्म का उपयोग करें। यदि खेत में संक्रमण दिखाई दे तो ज़िनेब @2 ग्राम प्रति लीटर पानी या मैन्कोज़ेब @2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

आशीष कुमार (सहायक प्रोफ़ेसर) APEX विधि विभाग, जयपुर, APEX UNIVERSITY, (जयपुर राजस्थान)

कविता सिंह (सहायक प्रोफ़ेसर) APEX विधि विभाग, जयपुर, APEX UNIVERSITY, (जयपुर राजस्थान)

पानी के अधिकार और सिंचाई कानून: सिंचाई और किसानों की जल संसाधनों तक पहुंच का कानूनी शासन

परिचय: पानी, जीवन का अभिन्न अंग होने के साथ-साथ कृषि के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारतीय कृषि, जो कि देश की आर्थिक और सामाजिक संरचना का मूल आधार है, जल संसाधनों पर निर्भर करती है। भारत की लगभग 60त्न जनसंख्या कृषि पर निर्भर है, और इसके उत्पादन में पानी की उपलब्धता का महत्वपूर्ण योगदान है। सिंचाई के बिना, फसलों की पैदावार में कमी आती है, विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ वर्षा पर निर्भरता अधिक होती है।

भारतीय कृषि में जल संसाधनों की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है, जब हम जलवायु परिवर्तन और जल संकट की चुनौतियों को देखते हैं। सिंचाई के माध्यम से, किसान अपनी फसलों को नियमित जल आपूर्ति सुनिश्चित कर सकते हैं, जिससे उनकी उपज बढ़ती है और उनकी आर्थिक स्थिरता में सुधार होता है। इसके अलावा, जल संसाधनों का सही प्रबंधन कृषि उत्पादकता को बढ़ाने के साथ-साथ खाद्य सुरक्षा को भी सुनिश्चित करता है। इसलिए, पानी का उचित उपयोग और संरक्षण न केवल किसानों हेतु, बल्कि सम्पूर्ण देश के लिए आवश्यक है, ताकि एक स्थायी और फलदायी कृषि व्यवस्था स्थापित की जा सके।

पानी के अधिकार: जल का स्वामित्व भारतीय संविधान के अंतर्गत राज्य के पास होता है, जिसका अर्थ है कि जल संसाधनों का प्रबंधन और उपयोग सरकार के अधीन है। हालांकि, यह आवश्यक है कि इस स्वामित्व को किसानों और अन्य उपयोगकर्ताओं के हितों को ध्यान में रखते हुए संचालित किया जाए। जल का स्वामित्व केवल कानूनी रूप से ही नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह किसानों की सिंचाई और उत्पादन क्षमता को सीधे प्रभावित करता है। जल के उपयोग के अधिकार की बात करें, तो यह किसानों को यह सुनिश्चित करने का अधिकार प्रदान करता है कि वे अपनी फसलों के लिए आवश्यक जल प्राप्त कर सकें। यह अधिकार किसानों को स्वतंत्रता और सुरक्षा प्रदान करता है, जिससे वे अपनी कृषि गतिविधियों को सुचारू रूप से संचालित कर सकें। जब किसानों को पर्याप्त जल उपलब्ध नहीं होता है, तो उनकी फसलों की पैदावार में कमी आती है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति प्रभावित होती है। जल अधिकारों की आवश्यकता आज के समय में और भी अधिक बढ़ गई है, जब जल संकट और जलवायु परिवर्तन की चुनौतियाँ सामने आ रही हैं। जल का अत्यधिक उपयोग और उसके उचित प्रबंधन की कमी के कारण, किसानों को जल संकट का सामना करना पड़ता है। इसलिए, जल अधिकारों का संरक्षण और उनका उचित वितरण अत्यंत आवश्यक है। इससे न केवल किसानों की जल संसाधनों तक पहुँच सुनिश्चित होती है, बल्कि यह खाद्य सुरक्षा और कृषि विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है। इस प्रकार, जल के अधिकारों को संरक्षित करना और सशक्त बनाना एक स्थायी और न्यायपूर्ण कृषि प्रणाली के लिए आवश्यक है।

सिंचाई कानून: भारत में सिंचाई कानून कृषि क्षेत्र के विकास और जल संसाधनों के प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण हैं। कृषि सिंचाई कानून का अवलोकन करते हुए, हम पाते हैं कि विभिन्न राज्यों में विशेष कानून और नीतियाँ मौजूद हैं, जो किसानों को सिंचाई के लिए जल उपयोग की अनुमति देती हैं। ये कानून सुनिश्चित करते हैं कि सभी किसानों को उचित और समुचित जल आपूर्ति मिले, ताकि वे अपनी फसलों को सफलतापूर्वक विकसित कर सकें। इसके अलावा, ये कानून जल संसाधनों का संरक्षण भी करते हैं, जिससे जल संकट की स्थिति को कम किया जा सके। जल उपयोग और संरक्षण का अर्थ है कि जल के संसाधनों का सतत उपयोग होना चाहिए, जो कि न केवल किसानों के लिए बल्कि पूरे समुदाय के लिए फायदेमंद है। सही जल प्रबंधन और संरक्षण के माध्यम से, हम जल के अपव्यय को रोक सकते हैं और इसे आने वाली पीढ़ियों हेतु संरक्षित कर सकते हैं। सिंचाई के लिए विभिन्न तकनीकों, जैसे ड्रिप सिंचाई और वर्षा जल संचयन, को अपनाकर जल उपयोग को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है। सिंचाई परियोजनाओं का प्रबंधन सरकार द्वारा किया जाता है, जिसमें जलाशयों, नहरों और पंपिंग स्टेशनों का निर्माण शामिल होता है। इन परियोजनाओं का सही प्रबंधन यह सुनिश्चित करता है कि जल संसाधनों का समुचित उपयोग हो और सभी किसानों को समय पर जल प्राप्त हो सके। यदि किसी किसान को जल अधिकारों के उल्लंघन का सामना करना पड़ता है, तो न्यायिक उपायों का सहारा लिया जा सकता है।

चुनौतियां: भारत में जल संसाधनों के प्रबंधन के दौरान कई चुनौतियाँ सामने आती हैं, जिनमें जल संकट एक प्रमुख मुद्दा है। बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिकीकरण और जलवायु परिवर्तन के कारण जल की उपलब्धता में कमी आई है, जिससे किसानों को सिंचाई के लिए पर्याप्त जल प्राप्त करने में कठिनाई होती है। कानूनी जटिलताएँ भी एक बड़ी समस्या हैं। विभिन्न राज्यों में जल और सिंचाई से संबंधित कानूनों की विविधता और उनकी जटिलता किसानों के लिए समझने में मुश्किल पैदा करती हैं। इस स्थिति में, किसानों को अपने अधिकारों की जानकारी नहीं होती, जिससे उन्हें जल संसाधनों तक पहुँच में बाधाएँ आती हैं। नीति निर्माण में किसानों की भागीदारी की कमी भी एक महत्वपूर्ण चुनौती है। अक्सर, जल नीतियों का निर्माण बिना किसानों की वास्तविक आवश्यकताओं और अनुभवों को ध्यान में रखे किया जाता है। यह किसानों के हितों के प्रति संवेदनहीनता को दर्शाता है और परिणाम स्वरूप, नीतियाँ प्रभावी नहीं बनतीं।

सरकारी नीतियाँ और कार्यक्रम: सरकारी नीतियाँ और कार्यक्रम जल संसाधनों के प्रबंधन और संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जल संरक्षण नीतियाँ, जैसे राष्ट्रीय जल नीति और विभिन्न राज्य स्तर की नीतियाँ, जल के विवेकपूर्ण उपयोग को प्रोत्साहित करती हैं। इन नीतियों में जल के सतत उपयोग, जल पुनर्चक्रण, और जल संरक्षण के लिए जागरूकता बढ़ाने पर जोर दिया गया है। सरकार जल संसाधनों की सुरक्षा के लिए ठोस उपायों को लागू कर रही है, जैसे वर्षा जल संचयन और जल बचत तकनीकों का प्रचार करना।

सिंचाई के लिए सरकारी योजनाएँ जैसे प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (PMKSY) और नैशनल वाटर मिशन किसानों को बेहतर सिंचाई सुविधाएँ प्रदान करने के उद्देश्य से बनाई गई हैं। ये योजनाएँ न केवल सिंचाई के लिए आवश्यक जल की उपलब्धता को बढ़ाने में मदद करती हैं, बल्कि किसानों को आधुनिक सिंचाई तकनीकों को अपनाने के लिए भी प्रोत्साहित करती हैं। इसके अंतर्गत, ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई जैसे सटीक सिंचाई प्रणालियों को बढ़ावा दिया जाता है, जिससे जल की बर्बादी कम होती है। किसानों के लिए जागरूकता कार्यक्रम भी सरकार द्वारा संचालित किए जाते हैं, जो उन्हें जल संरक्षण के महत्व और तकनीकों के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। इन कार्यक्रमों के माध्यम से, किसान जल उपयोग की सर्वोत्तम प्रथाओं को समझते हैं और अपने सिंचाई प्रबंधन में सुधार कर सकते हैं। इस प्रकार, सरकारी नीतियाँ और कार्यक्रम जल संसाधनों के प्रभावी प्रबंधन और संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

वर्तमान स्थिति और घटनाक्रम: भारत में जल संसाधनों का प्रबंधन एक जटिल प्रक्रिया है, जिसमें कई सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय कारक शामिल होते हैं। हाल की नीतियों, जैसे राष्ट्रीय जल नीति और प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (क्क्ब्स्ङ्क), ने जल संरक्षण और सिंचाई के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाने का प्रयास किया है। इन नीतियों का उद्देश्य न केवल जल की उपलब्धता को बढ़ाना है, बल्कि किसानों को आधुनिक सिंचाई तकनीकों को अपनाने के लिए भी प्रोत्साहित करना है। हालांकि, इन नीतियों के प्रभाव का मूल्यांकन करते समय यह देखा गया है कि नीतियों को प्रभावी ढंग से लागू करने में स्थानीय स्तर पर चुनौतियाँ उत्पन्न हो रही हैं, जिससे अपेक्षित परिणाम हासिल करना कठिन हो रहा है। जल विवाद भी भारतीय कृषि क्षेत्र में एक गंभीर मुद्दा है। विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों के बीच जल बंटवारे के मुद्दे अक्सर तनाव और विवाद का कारण बनते हैं। उदाहरण के लिए, नदियों के जल बंटवारे को लेकर कई मामलों में सुप्रीम कोर्ट और अन्य न्यायालयों में विवाद चल रहे हैं। जल विवादों के समाधान के लिए सरकार ने विभिन्न उपाय किए हैं, जैसे जल न्यायाधिकरण का गठन, जो कि विभिन्न हितधारकों के बीच विवादों को सुलझाने में मदद करता है।हाल ही में, केंद्र सरकार ने जल संरक्षण और प्रबंधन के लिए कई नई पहलें शुरू की हैं, जैसे जल शक्ति अभियान, जिसका उद्देश्य जल संकट की समस्याओं को सुलझाना है। इससे जल संसाधनों का प्रभावी प्रबंधन और जल विवादों का समाधान संभव हो सकेगा, जिससे किसानों की जल सुरक्षा सुनिश्चित होगी। इस प्रकार, वर्तमान स्थिति और घटनाक्रम जल प्रबंधन के लिए एक महत्वपूर्ण मोड़ प्रदान कर रहे हैं।

निष्कर्ष: समुचित जल प्रबंधन भारतीय कृषि के लिए अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि जल संसाधनों की उपलब्धता और उपयोग सीधे तौर पर किसानों की उपज और जीवन स्तर को प्रभावित करते हैं। जल संकट, जलवायु परिवर्तन और बढ़ती जनसंख्या के मद्देनजर, प्रभावी जल प्रबंधन न केवल खाद्य सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि आर्थिक विकास और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए भी आवश्यक है। भविष्य की दिशा में, यह आवश्यक है कि जल प्रबंधन नीतियों को सशक्त बनाने और किसानों की सक्रिय भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए ठोस कदम उठाए जाएँ। इसके लिए, स्थानीय समुदायों को जल संरक्षण और प्रबंधन की प्रक्रियाओं में शामिल किया जाना चाहिए। साथ ही, आधुनिक तकनीकों का उपयोग, जैसे वर्षा जल संचयन और ड्रिप सिंचाई, को प्रोत्साहित करना चाहिए। सिफारिशों में यह शामिल है कि सरकारें जल नीति में अधिक पारदर्शिता लाएँ और किसानों के अनुभवों और सुझावों को नीतियों के निर्माण में शामिल करें। इसके अतिरिक्त, जल विवादों के समाधान के लिए एक प्रभावी और न्यायिक तंत्र का विकास किया जाना चाहिए। इन प्रयासों के माध्यम से, हम एक स्थायी और न्यायपूर्ण जल प्रबंधन प्रणाली स्थापित कर सकते हैं, जो सभी किसानों के लिए जल संसाधनों तक समुचित पहुँच सुनिश्चित करेगी।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

सहजन है एक औषधीय पेड़

राजबाला मीणा (राजस्थान)

सहजन को अंग्रेजी भाषा में ड्रमस्टिक कहते हैं, जिसका वैज्ञानिक नाम मोरिंगा ओलीफेरा है। यह मॉर्निंगऐसी कुल का पौधा है। सहजन भारत में अनेक नामों से जाना जाता है जैसे- सहजन लाल, सहजना, मूंगा इत्यादि। सहजन पौधे का प्रत्येक भाग पोषक तत्वों से भरपूर होता है जैसे-फली, फूल, पत्तियां इत्यादि। इसलिए इसका उपयोग घरों में सब्जी बनाने एवं इसे विभिन्न औषधियों के रूप में काम में लिया जाता है। इसके फूलों व फलियों से सब्जी बनाई जाती हैं व पत्तियों का उपयोग विभिन्न प्रकार की दवा बनाने में किया जाता है। इसका फल पतला लंबा और हरे रंग का होता है, जो पेड़ के तने से निचे लटका रहता है। सहजन के पौधे का आकार 4 से 6 मीटर लंबा होता है और यह 100 से 110 दिनों बाद फूल देने लगता है। पौधे लगाने के लगभग 160 से 170 दिनों में फल तैयार हो जाता है। यह पौधा एक वर्ष में 40 से 50 कि.ग्रा. फलियां उत्पन्न करता है। सहजन का पौधा एक बार लगाने के बाद यह 4 से 5 वर्षों तक फूल व फल देता रहता है। प्रत्येक वर्ष फसल लेने के बाद पौधे को जमीन से 1 मीटर छोड़कर काट देना चाहिए, जिससे अच्छी पैदावार होती है।

अफ्रीकी देशों में सहजन को माताओ का सबसे अच्छा दोस्त कहते हैं व पश्चिमी देशों में इसे न्यूट्रीशन डायनामाइट के नाम से जाना जाता है। सहजन का उपयोग लगभग 100 से भी अधिक तरह से पोषण के लिए किया जाता है। इसकी फली व फूल से स्वादिष्ट सब्जी बनती है। इसके बीज को सेंक कर खाने से मूंगफली जैसा स्वाद आता है। सहजन के बीज से तेल, छाल से गोंद, जड़ों व पत्तियों में दही से 9 गुना अधिक प्रोटिन, संतरे से 7 गुना विटामिन 'सी', गाजर से 4 गुना विटामिन 'ए', केले से 15 गुना पोटेशियम एवं पालक से 25 गुना आयरन पाया जाता है। इसके अलावा सहजन की पत्तियां फोलिक एसिड व विटामिन 'सी' से भरपूर होती हैं। खासतौर पर सर्दी-जुकाम से यदि नाक-कान बंद हो जाते है, तो पत्तियों को पानी में उबालकर भाप लेने से जुकाम में आराम मिलता है। इसके अलावा हड्डियां मजबूत करने, यौन शक्ति बढ़ाने, खून साफ करने एवं बुढ़ापे को कम करने में यह बखूबी योगदान देता है। सहजन के बीज के चूर्ण से पानी शुद्ध किया जा सकता है। इस तरह से सहजन आज के युग में संजीवनी बूटी है। सहजन की पत्तियां बढ़ते शिशु के लिए टॉनिक के समान हैं। इसकी पत्तियों का रस बच्चों को दूध में मिलाकर देने से बच्चों की हड्डियां मजबूत होती हैं और आयरन की कमी दूर होती है। सहजन की पत्तियों का रस गर्भवती माताओं को प्रसव पीड़ा में राहत और दूध बढ़ाने में मदद करता है। इसकी सूखी पत्तियों को भंडारित भी किया जा सकता है। पत्तियों के चूर्ण का उपयोग सब्जियों में मसाले के रूप में करते हैं। इस बच्चों को दूध में डालकर, रोटी व लड्डू बनाकर खिलाया जा सकता है। सहजन का उपयोग कर बच्चों व बड़ों को कुपोषण से बखूबी बचाया जा सकता है। इसके अलावा पशुओं के चारे के रूप में इसकी पत्तियों को देने से दूध में डेढ़ गुना तक वृद्धि हो सकती है।

सहजन की फसल का भविष्य

राजस्थान शुष्क एवं अर्द्धशुष्क जलवायु का क्षेत्र है। राजस्थान में जल की अनियमितता को देखते हुए सहजन की खेती बहुत ही लाभकारी सिद्ध हो सकती है। सहजन की खेती के लिए अधिक जल की आवश्यकता नहीं होती है। इसकी खेती के लिए लगभग 2 से 3 सिचाइयां पर्याप्त रहती है। इस कारण सहजन की खेती का राजस्थान में जलवायु की प्रतिकूल दशाओं को देखते हुए अलवर, जयपुर, भरतपुर, धौलपुर, सवाई माधोपुर, कोटा, बूंदी, झालावाड, बांसवाडा, डूगरपुर, उदयपुर, सिरोही, गंगानगर, हनुमानगढ़, झुंझुन, सीकर इत्यादि जिलों में सहजन की खेती कर सकते है। पश्चिमी राजस्थान में जैसे- जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर, चुरू आदि जिलों में सहजन की खेती की संभावना कम है। वहां अधिक तापमान व सीमित जल होने की वजह से खेती करने में परेशानी उत्पन्न होती है।

मृदा व जलवायु

सहजन उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु का पौधा है, जिसके लिए 20 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान सर्वोत्तम माना जाता है। यह 45 डिग्री सेल्सियस तापमान तक सहन कर सकता है। जहां 80 से 150 सें.मी. तक वर्षा होती हैं। वहां के लिए भी उपयुक्त माना जाता है। सभी प्रकार की मृदाओं में सहजन की खेती की जा सकती है, लेकिन बलुई दोमट मृदा जिसका पी-एच मान 6 से 7.5 व उचित जल निकास की व्यवस्था हो, सर्वोत्तम मानी जाती है।

प्रवर्द्धन

सहजन का प्रवर्द्धन बीज एवं कलम द्वारा किया जा सकता है, लेकिन बीज द्वारा किया गया प्रवर्द्धन अच्छी पैदावार देता है। एक हैक्टर क्षेत्र में खेती करने के लिए 500 से 600 ग्राम बीज पर्याप्त रहता है। बीज को सीधा गड्ढों में या पॉलीथीन की थैलियों में उगाया जा सकता है।

पॉलीथीन में बीज तैयार करना

सहजन के ताजा बीजों को रातभर पानी में भिगोने के बाद खाद और बालू रेत से भरे पॉलीथीन बैग में 1-2 बीज प्रति बैग व 1 से 2 इंच की गहराई में लगाना चाहिए। बाद में पौधों को 3ग3 के गड्ढों में रोपित करके हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

सहनज की उन्नत किस्में

पी.के.एम.-1, पी.के.एम.-2, भाग्य (के.डी.एम.-1), जी.के.वी.के-1, जी.के.वी.के-2, जी.के.वी.के-3, कोयंबटूर-1, कोयंबटूर-1

गड्ढे तैयार करना

सहजन के पौधे लगाने के लिए 33 मीटर दूरी पर गड्ढों की खुदाई कर ली जाती है। बुआई से लगभग 1 सप्ताह पहले गड्ढों को 0.50×0.50×0.50 मीटर आकार में खोदकर 15 कि.ग्रा. प्रति गड्ढा गोबर की खाद और एजोस्पिाइरिलम व पीएसबी 5 कि.ग्रा. प्रति है. की दर से गड्ढों में डालकर लगभग 1 सप्ताह बाद बुआई कर देनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

सहजन की फसल हेतु गड्ढे तैयार करते समय 15 से 20 कि.ग्रा. गोबर की खाद प्रति गड्ढा एवं एजोस्पिाइरिलम और पीएसबी 5 कि.ग्रा. प्रति है. की दर से प्रयोग करना चाहिए। इसके अलावा बुआई के 3 माह बाद 100 ग्राम यूरिया, 100 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट व 50 ग्राम पोटाश प्रत्येक गड्ढे की दर से डालनी चाहिए। इससे अच्छी उपज प्राप्त होती है।

सिंचाई

सहजन की फसल में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए सिंचाई करना अति जरूरी है। सर्दियों में 15 से 20 दिनों व गर्मियों में 10 से 12 दिनों के अंतराल से सिंचाई करनी चाहिए। इसके अलावा फूल आते समय सिंचाई का विशेष ध्यान रखना चाहिए। मृदा में अधिक नमी व शुष्कता होने के कारण फूल झड़ जाते है।

सहजन में रेटूनिंग

सहजन की फसल से उत्पादन लेने के बाद इसके पौधों को सतह से लगभग 1 मीटर की ऊंचाई से काटकर अलग कर दिया जाता है। इससे अगली फसल के लिए फुटान अच्छा होता है व पैदावार अधिक व गुणवत्तापूर्ण होती है।

फलों की तुडाई एवं उपज

वर्ष में दो बार फल देने वाली सहजन की किस्मों की तुडाई सामान्यतः फरवरी-मार्च और सितंबर-अक्टूबर में की जाती है। प्रत्येक पौधे से 200 से 400 फलियां या 40 से 50 कि.ग्रा. फलियां प्रति पौधा प्राप्त होती है।

विपणन

सहजन के पोषक गुणों के कारण लोगों का इसके प्रति रूझान बढ़ रहा है, जिसके कारण बाजार मांग अधिक हुई है। इसके विपणन में किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं आती है। किसान इसको सीधा बाजार ले जाकर बेच सकता है। विभिन्न प्रकार की कंपनियां, जो बेबी फूड तैयार कर रही है, किसानों से सीधे संपर्क बना लेती हैं और इस प्रकार विपणन में किसी प्रकार की परेशानी उत्पन्न नहीं होती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

तिलहन की फसलों में सरसों का महत्व

नीतू चौधरी विद्यावाचस्पति, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान, कृषि महाविद्यालय, बीकानेर

तिलहन की फसलों में सरसों (ब्रैसिका एसपीपी) का भारतवर्ष में विशेष स्थान है, सोयाबीन, मूंगफली के बाद सरसों की खेती देश भर में सबसे ज्यादा होती है। यह राजस्थान की रबी की मुख्य फसल है. खाद्य तेल के रूप में सरसों की मांग अधिक रहने के कारण पिछले कुछ वर्षों से किसानों को सरसों की खेती से अच्छा मुनाफा हो रहा है। सरसों का अच्छा उत्पादन कई कारणों पर निर्भर करता है जैसे मिट्टी, जलवायु, बीज, रोग तथा कीट। सरसों की फसल में समय-समय पर विभिन्न कीट एवं रोग काफी नुकसान पहुंचाते हैं, जिससे उपज में कमी आती हैं। यदि समय रहते इन रोगों एवं कीटों का नियंत्रण कर लिया जाए तो सरसों के उत्पादन में बढ़ोतरी की जा सकती है। चेंपा या माहू, आरामक्खी, चितकबरा कीट, मटर का पर्ण सुरंगक कीट आदि सरसों के मुख्य नाशी कीट हैं। काला धब्बा, सफेद रतुआ, मृदुरोमिल आसिता, चूर्णिल आसिता एवं तना गलन आदि सरसों के मुख्य रोग हैं। इसलिए यह अति आवश्यक है कि इन कीटों की सही पहचान कर उचित रोकथाम की जाए. यदि समय रहते इन रोगों एवं कीटों का नियंत्रण कर लिया जाये तो सरसों के उत्पादन में बढ़ोत्तरी की जा सकती है।

प्रमुख कीट

चेंपा या माहू: सरसों में माहू यानी चेपा मुख्य कीट होता है. माहू पंखहीन या पंखयुक्त हल्के स्लेटी या हरे रंग के 1.5-3.0 मिमी. लम्बे, चुभाने एवं चूसने वाले मुखांग वाले छोटे कीट होते हैं। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ पौधों के कोमल तनों, पत्तियों, फूलों एवं नई फलियों से रस चूसकर उसे कमजोर एवं क्षतिग्रस्त तो करते ही है, साथ ही साथ रस चूसते समय पत्तियों पर मधुस्राव भी करते हैं। इस मधुस्राव पर काले कवक का प्रकोप हो जाता है तथा प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित हो जाती है। इस कीट का प्रकोप दिसम्बर-जनवरी से लेकर मार्च तक बना रहता है।

प्रबंधन: माहू के प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण करें। जहां तक संभव हो सरसों की बुआई 15 अक्टूबर तक कर देनी चाहिए, इससे फसल माहूँ के प्रकोप से बच जाती है। उर्वरकों की अनुशंसित मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिए।

सरसों की बिजाई की गई फसल (10-25 अक्टूबर तक) पर इस कीट का प्रकोप कम होता है. राया जाति की किस्मों पर चेंपे का प्रकोप कम होता है. प्रारम्भ में प्रकोपित शाखाओं के प्रभावित हिस्सों को कीट सहित नष्ट कर दें। जब फसल में कम से कम 10 प्रतिशत पौधे की संख्या चेंपा से ग्रसित हो व 26-28 चेंपा प्रति पौधा हो तब एसिटामिप्रिड 20 प्रतिशत एसपी 500 ग्राम या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 150 मिली. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर में

सायंकाल में छिड़काव करें। यदि दुबारा से कीट का प्रकोप हो तो 15 दिन के अंतराल से पुनःछिड़काव करें।

आरा मक्खी: इस मक्खी का धड़ नारंगी रंग का होता है। इसका सिर व पैर काले होते हैं। सुंडियों का रंग गहरा हरा होता है। जिनके ऊपरी भाग पर काले धब्बों की तीन कतारें होती हैं। इस कीड़े की सुंडियां फसल को उगते ही पत्तों को काट-काट कर खा जाती है। इसका अधिक प्रकोप अक्टूबर-नवम्बर में होता है।

प्रबंधन: गर्मियों की गहरी जुताई करें व सिंचाई करने पर भी इसका प्रकोप कम हो जाता है। इस कीट की रोकथाम हेतु मेलाथियान 50 ई.सी. 1 लीटर को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर में छिड़काव करें। आवश्यकता पडने पर दुबारा छिड़काव करें।

मटर का पर्ण सुरंगक कीट: प्रौढ़ मक्खी छोटी काले रंग की होती है और इसका सिर पिला होता है। प्रौढ़ मक्खी की लंबाई 1.5 मि.मी., पंख विन्यास लगभग 4 मि.मी. व घरेलू मक्खी के समान परन्तु आकार में छोटी होती है। नए मेगेट्स कीट धूसर सफेद रंग के होते हैं और इनके मुखांग काले भूरे रंग के होते हैं। पूर्ण विकसित कीट हरा पीला रंग का लगभग 3 मि.मी. चौड़ा, जिनका मध्य भाग मोटा और आगे से चपटा होता है। कीट पत्ती में सुरंग के अंदर रहता है और सुरंग में ही कृमिकोष में चला जाता है।

प्रबंधन: ग्रसित पत्तियों को तोड़कर जमीन में दबा देना चाहिए, ताकि पत्तियों में छिपे कीट व कृमिकोष नष्ट हो जाएं।

आँक्सी: डेमेटोन मिथाइल 25 पायस सांद्रण या डाइमिथोएट 30 पायस सांद्रण की एक लीटर मात्रा को 600-800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें अथवा इमिडाक्लोप्रिड 1708 एस.एल. को 5 मि.ली. / 15 लीटर पानी की दर से घोलकर छिड़काव करें।

चितकबरा कीट: प्रौढ़ कीट के शरीर के ऊपर काले व चमकीले नारंगी रंग के धब्बे होते हैं। प्रौढ़ 6.5-7.0 मि.मी. चौड़ा व पूर्ण विकसित शिशु 4 मि.मी. लंबा व 2.6 मि.मी. चौड़ा होता है। इन पर भूरी धारियां पाई जाती हैं। ये कीट फसल के छोटे-छोटे पौधों को या पौध अवस्था में अधिक नुक्सान पहुंचाते है। शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पौधे की पत्तियों एवं प्ररोह से रस चूसकर हानि पहुंचाते हैं। फसल की दो पत्ती अवस्था में नुक्सान होने पर ग्रसित उपरी भाग मुरझाकर सुख जाता है। वानस्पतिक अवस्था में प्रकोप के समय पत्तियों पर सफेद धब्बे हो जाते हैं। पौधे का विगलन हो जाता है व पौधे पूर्णतःसुख जाते हैं। खलिहानों में कटी हुई फसल पर इन कीटों का आक्रमण व हानि को देखा जा सकता है। इस प्रकार यह कीट उपज व तेल की मात्रा में कमी करता है।

समन्वित कीट प्रबंधन

- खेत में साफ़-सफाई रखनी चाहिए। खेतों के आसपास खरपतवार तथा फसल अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।
- खेतों की गर्मियों के दिनों (मई-जून) में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करनी चाहिए।
- बुआई के 3-4 सप्ताह बाद यदि संभव हो, तो पहली सिंचाई कर देनी चाहिए।
- पौधावस्था में इस कीट का आक्रमण होने पर क्यूनालफॉस 10 प्रतिशत अथवा मैलाथियान 5 प्रतिशत धुल की 20-25 किलोग्राम मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करें।
- अत्यधिक प्रकोप की अवस्था में मेलाथियान 50 पायस अथवा डाइमिथोएट (रोगोर) 30 पायस सांद्रण की एक लीटर अथवा इमिडाक्लोप्रिड 1708 एस.एल. की 150 मि.ली.मात्रा को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिडकाव करें।
- फसल का रंग सुनहरा होने पर ही कटाई कर लेनी चाहिए। फसल की जल्द से जल्द मड़ाई कर लेनी चाहिए, जिसमें अधिक हानि न हो व पादप अवशेषों को तुरंत नष्ट कर देना चाहिए।

जैविक नियंत्रण: सरसों की फसल में चेंपा के जैविक नियंत्रण हेतु फसल में कीट की आर्थिक क्षति स्तर में पाए जाने पर 2 प्रतिशत नीम के तेल को तरल साबुन के घोल (20 मि.ली. नीम का तेल +1 मि.ली. तरल साबुन) में मिलाकर छिड़काव करें. सरसों की फसल की फूल अवस्था पर अपेक्षाकृत सुरक्षित रसायनों का छिड़काव संध्याकाल में ही करें.

अन्य उपाय: फसल कटने के उपरांत गर्मी के मौसम में गहरी जुताई करें ताकि जमीन में जो फफूंद हैं नष्ट हो जाए. स्वस्थ साफ और प्रमाणित बीज ही बोएं. तना गलन रोगग्रस्त खेतों में गेहूं या जौ का फसल चक्र अपनाएं. राया की बिजाई समय पर 10 से 25 अक्टूबर तक करने से रोगों का प्रकोप कम हो जाता है. खेत में पानी खड़ा न रहने दें अन्यथा नमी रहने से विशेषकर तना गलन रोग का प्रकोप अधिक हो जाता है फसल में खरपतवार न होने दें।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तराखण्ड

हिमाचल प्रदेश की पहाड़ियों में प्राकृतिक खेती: एक सतत कृषि क्रांति

अजय ममगाईं और नवप्रभात नेगी
माउंट वैली डेवलपमेंट एसोसिएशन, गांव- डोनी, जिला टिहरी गढ़वाल, (उत्तराखंड)

भारत के उत्तरी क्षेत्र में बसा हिमाचल प्रदेश अपने आश्चर्यजनक परिदृश्य, विविध पारिस्थितिकी तंत्र और समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के लिए प्रसिद्ध है। हालाँकि, राज्य के पहाड़ी क्षेत्रों की खड़ी जमीन और नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र ने कृषि को चुनौतीपूर्ण बना दिया है। हाल के वर्षों में, प्राकृतिक खेती के रूप में जानी जाने वाली एक स्थायी कृषि पद्धति ने हिमाचल प्रदेश में महत्वपूर्ण गति प्राप्त की है, जिससे इन पहाड़ियों में खेती के तरीके में बदलाव आया है। यह लेख क्षेत्र में प्राकृतिक खेती के उदय, इसके लाभों, चुनौतियों और आगे के रास्ते की पड़ताल करता है।

प्राकृतिक खेती क्या है?: प्राकृतिक खेती, जिसे अक्सर शून्य-बजट प्राकृतिक खेती के सिद्धांतों से जोड़ा जाता है, एक कृषि-पारिस्थितिकी दृष्टिकोण है जो रासायनिक इनपुट के उपयोग को कम करता है और मिट्टी की उर्वरता और फसल उत्पादकता को बढ़ाने के लिए प्राकृतिक प्रक्रियाओं पर ध्यान केंद्रित करता है। यह विधि फसल चक्रण, मिश्रित फसल और गाय के गोबर, मूत्र और खाद जैसे प्राकृतिक उर्वरकों के उपयोग जैसी तकनीकों पर निर्भर करती है। इसका लक्ष्य एक आत्मनिर्भर कृषि प्रणाली बनाना है जो प्रकृति के साथ सामंजस्य में हो।

हिमाचल प्रदेश में प्राकृतिक खेती का उदय: हिमाचल प्रदेश में प्राकृतिक खेती की ओर आंदोलन ने 2010 के दशक की शुरुआत में गति पकड़ी, जो काफी हद तक स्थानीय किसानों, गैर सरकारी संगठनों और सरकारी पहलों के प्रयासों से प्रभावित था। राज्य सरकार ने किसानों के सामने आने वाली पर्यावरणीय और आर्थिक चुनौतियों को पहचानते हुए 2018 में प्राकृतिक खेती खुशहाल किसान योजना (पीकेउवाइ) शुरू की, जिसका उद्देश्य पूरे राज्य में प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देना है।

पहाड़ों में प्राकृतिक खेती के लाभ

पर्यावरणीय स्थिरता: ● हिमाचल प्रदेश की पहाड़ियों की खड़ी ढलानें और नाजुक मिट्टी कटाव और क्षरण के लिए प्रवण हैं। प्राकृतिक खेती जैविक पदार्थ संवर्धन और कम जुताई के माध्यम से मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करती है, जिससे मिट्टी का कटाव कम होता है।

● रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों से बचकर, प्राकृतिक खेती भूजल संदूषण के जोखिम को कम करती है और जैव विविधता को संरक्षित करती है।

2. आर्थिक व्यवहार्यता: ● प्राकृतिक खेती का शून्य-बजट पहलू बाहरी इनपुट पर निर्भरता को कम करता है, जिससे खेती की लागत कम होती है। यह विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए फायदेमंद है जो हिमाचल प्रदेश के कृषि परिदृश्य पर हावी हैं। ● प्राकृतिक खेती करने वाले किसानों ने बेहतर पैदावार और उपज की गुणवत्ता की सूचना दी है, जिससे बाजार में कीमतें बढ़ रही हैं, खासकर जैविक उत्पादों के लिए, जिनकी उच्च मांग है।

3. स्वास्थ्य और पोषण: ● प्राकृतिक खेती यह सुनिश्चित करती है कि उत्पादित खाद्य पदार्थ हानिकारक रसायनों से मुक्त हों, जिससे उपभोक्ताओं के लिए बेहतर स्वास्थ्य परिणाम प्राप्त होते हैं। ● विविध फसल प्रणालियों पर ध्यान केंद्रित करने से उपज का पोषण मूल्य भी बढ़ता है, जिससे किसानों और उपभोक्ताओं दोनों को लाभ होता है।

4. जलवायु लचीलापन: ● प्राकृतिक खेती में निहित कृषि-पारिस्थितिकी प्रथाएँ फसलों को जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति अधिक लचीला बनाती हैं। मल्चिंग और इंटरक्रॉपिंग जैसी तकनीकें मिट्टी की नमी को बनाए रखने और फसलों को चरम मौसम की घटनाओं से बचाने में मदद करती हैं, जो इस क्षेत्र में तेजी से आम हो रही हैं।

प्राकृतिक खेती को लागू करने में चुनौतियाँ: इसके लाभों के बावजूद, हिमाचल प्रदेश में प्राकृतिक खेती को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है:

● **ज्ञान और जागरूकता:** पारंपरिक से प्राकृतिक खेती में बदलाव हेतु कृषि संबंधी सिद्धांतों की गहरी समझ की आवश्यकता होती है। कई किसान अभी भी इन प्रथाओं से अपरिचित हैं, जिसके लिए व्यापक प्रशिक्षण और सहायता की आवश्यकता होती है।

● **बाजार तक पहुँच:** जबकि जैविक उत्पादों की माँग बढ़ रही है, प्राकृतिक कृषि उत्पादों हेतु प्रीमियम मूल्य देने वाले बाजारों तक पहुँचना चुनौतीपूर्ण हो सकता है, खासकर दूरदराज के पहाड़ी क्षेत्रों में।

● **प्रारंभिक संक्रमण काल:** प्राकृतिक खेती को अपनाने के शुरुआती वर्षों में पैदावार में गिरावट देखी जा सकती है क्योंकि मिट्टी पुनर्जीवित होती है और नई कृषि पद्धतियों के अनुकूल हो जाती है। पर्याप्त समर्थन के बिना यह संक्रमणकाल किसानों के लिए आर्थिक रूप से तनावपूर्ण हो सकता है।

● **नीति समर्थन:** हालाँकि सरकार ने सहायक योजनाएँ शुरू की हैं, लेकिन पूरे राज्य में प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने के लिए लगातार और मजबूत नीति समर्थन आवश्यक है।

आगे की राह: हिमाचल प्रदेश में प्राकृतिक खेती की प्रथा को बनाए रखने और उसका विस्तार करने के लिए कई कदम उठाए जाने की आवश्यकता है:

क्षमता निर्माण: किसानों को प्राकृतिक खेती की तकनीकों के बारे में शिक्षित और प्रशिक्षित करने के लिए निरंतर प्रयासों की आवश्यकता है। यह किसान फील्ड स्कूलों, कार्यशालाओं और खेत पर प्रदर्शनों के माध्यम से किया जा सकता है।

अनुसंधान और विकास: कृषि विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संस्थानों और किसानों को शामिल करते हुए सहयोगात्मक अनुसंधान प्राकृतिक खेती की तकनीकों को परिष्कृत करने और क्षेत्र-विशिष्ट समाधान विकसित करने में मदद कर सकता है।

बाजार संपर्क: सहकारी समितियों, किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) और डिजिटल प्लेटफार्मों के माध्यम से बाजार संपर्कों को मजबूत करने से किसानों को उनकी उपज के लिए बेहतर मूल्य प्राप्त करने में मदद मिल सकती है।

नीति और वित्तीय सहायता: प्राकृतिक खेती के इनपुट के लिए सब्सिडी और जैविक प्रमाणीकरण के लिए प्रोत्साहन सहित बढ़ी हुई नीति समर्थन, अधिक किसानों को प्राकृतिक खेती अपनाने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है।

डेटा और आँकड़े

कृषि क्षेत्र: हिमाचल प्रदेश में लगभग 89ः भूमि पहाड़ी क्षेत्र में आती है, जहां कृषि एक चुनौती है।

प्राकृतिक खेती का प्रभाव: 2018 में, हिमाचल प्रदेश सरकार ने 50,000 किसानों को प्रशिक्षित करने का लक्ष्य रखा था। 2022 तक, 20,000 हेक्टेयर से अधिक भूमि को प्राकृतिक खेती के अंतर्गत लाया गया था।

उपज में वृद्धि: प्राकृतिक खेती अपनाने वाले किसानों ने देखा कि उनकी उपज में 10-15% की वृद्धि हुई और उत्पादन लागत में 20-30% की कमी आई।

प्राकृतिक खेती के तरीके: प्राकृतिक खेती एक ऐसा दृष्टिकोण है जो स्थिरता, प्रकृति के साथ सामंजस्य और सिंथेटिक उर्वरकों और कीटनाशकों जैसे बाहरी इनपुट पर न्यूनतम निर्भरता पर जोर देता है। प्राकृतिक खेती में उपयोग की जाने वाली कुछ प्रमुख विधियाँ इस प्रकार हैं:

1. जीवामृत (जैव-वर्धक)-

उपयोग: इस जैव-वर्धक को मिट्टी में लगाया जाता है या सूक्ष्मजीवी गतिविधि को बढ़ावा देने और मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए पत्तियों पर स्प्रे के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

लाभ: जीवामृत मिट्टी को लाभकारी सूक्ष्मजीवों से समृद्ध करता है, पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाता है और स्वस्थ पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देता है।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

कीटनाशकों का घरेलू पशुओं पर हानिकारक प्रभाव, उनके आर्थिक निहितार्थ और बचाव के उपाय

डॉ. महा सिंह जागलान, डॉ. विजय कुमार
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, उचानी, करनाल (हरियाणा)

कीटनाशकों का उपयोग और पशुओं पर प्रभाव

कीटनाशकों का उपयोग घरेलू पशुओं के शरीर से जूं, चिचड़ी, और अन्य परजीवियों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। यह किसानों के लिए एक आम प्रथा है, लेकिन इसका गलत उपयोग पशुओं के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। त्वचा पर जलन, बालों का झड़ना, और विषाक्तता जैसे गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं कीटनाशकों के दुष्प्रभावों में शामिल हैं। यदि पशुओं की सेहत खराब होती है, तो उनकी उत्पादकता कम हो जाती है, जिससे किसानों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। स्वस्थ पशु अधिक दूध, मांस और अंडे का उत्पादन करते हैं, जो किसानों की आमदनी को बढ़ाता है।

कीटनाशकों के सही उपयोग का महत्व

कीटनाशक का सही मात्रा में उपयोग बेहद जरूरी है ताकि पशुओं की सेहत पर कोई प्रतिकूल असर न हो। जब कीटनाशकों का सटीक उपयोग किया जाता है, तो पशुओं की उत्पादकता में सुधार होता है और किसानों की आय में वृद्धि होती है। दूसरी ओर, कीटनाशकों का गलत या अत्यधिक उपयोग पशुओं की मृत्यु का कारण बन सकता है, जिससे न केवल किसान को मानसिक तनाव होता है, बल्कि इलाज पर अधिक खर्च भी करना पड़ता है। इससे किसान की आर्थिक स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

आर्थिक दृष्टिकोण से कीटनाशक प्रबंधन

कीटनाशकों का सही प्रबंधन आर्थिक रूप से भी बहुत महत्वपूर्ण है। गलत तरीके से इनका प्रयोग करने से किसान को बार-बार कीटनाशक खरीदनी पड़ती है, जिससे उनकी लागत बढ़ जाती है। इससे मुनाफा कम हो जाता है। इसके अलावा, अगर पशुओं में कीटनाशकों का अवशेष रह जाता है, तो उनके उत्पाद (मांस, दूध, अंडे) की गुणवत्ता गिर सकती है। इससे बाजार में उनकी मांग घट जाती है, जो किसानों के लिए आर्थिक रूप से नुकसानदेह होता है। यदि किसान कीटनाशक अवशेष रहित उत्पाद बेचते हैं, तो उपभोक्ता इन उत्पादों पर अधिक भरोसा करते हैं और उनकी मांग भी बढ़ती है, जिससे किसानों की आय में स्थिरता रहती है।

गुणवत्ता और सही उत्पाद का चयन

कीटनाशकों की गुणवत्ता भी किसान की आर्थिक स्थिति पर गहरा प्रभाव डालती है। सस्ती कीटनाशक अक्सर लंबे समय में हानिकारक साबित हो सकती हैं, जबकि उच्च गुणवत्ता वाली कीटनाशक महंगी हो सकती हैं लेकिन वे पशुओं की उत्पादकता और स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद होती हैं। बेहतर कीटनाशकों का चयन करने से पशुओं की सेहत बनी रहती है, जिससे किसानों को लंबी अवधि में अधिक लाभ होता है। इसलिए, सही कीटनाशक का चयन करना और गुणवत्ता पर ध्यान देना आवश्यक है।

सही संग्रहण और सुरक्षा उपाय

कीटनाशकों का सही तरीके से संग्रहण भी बहुत जरूरी है। यदि इन्हें ठीक से संग्रहित नहीं किया जाता, तो यह अपनी प्रभावशीलता खो सकते हैं, जिससे किसानों को नई कीटनाशक खरीदनी पड़ सकती है। इससे लागत बढ़ती है। साथ ही, कीटनाशकों को बच्चों और पशुओं की पहुंच से दूर रखना चाहिए ताकि अनावश्यक दुर्घटनाओं से बचा जा सके। यह आर्थिक दृष्टि से भी आवश्यक है क्योंकि दुर्घटनाओं से उपचार की लागत बढ़ जाती है।

कीटनाशक अवशेष और उत्पादकता

कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से पशुओं के खाद्य उत्पादों (मांस, दूध, अंडे) में अवशेष रह सकते हैं, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। ऐसे अवशेषों के कारण उत्पादों की मांग घट जाती है और किसानों को वित्तीय नुकसान हो सकता है। बाजार में उन उत्पादों की अधिक मांग होती है जिनमें कोई अवशेष नहीं होते, जिससे किसानों को अधिक आय होती है। कीटनाशकों का सटीक उपयोग न केवल पशुओं के स्वास्थ्य को बेहतर बनाए रखता है, बल्कि बाजार में उनकी प्रतिस्पर्धा भी बढ़ाता है।

कीटनाशक प्रतिबंध और आर्थिक प्रभाव

सरकार ने क्लोरीनेटिड हाइड्रोकार्बन कीटनाशकों पर प्रतिबंध लगाया है, जिससे अन्य विषैले कीटनाशकों का उपयोग बढ़ा है। इससे कीटनाशकों पर किसानों की निर्भरता बढ़ गई है और इसके लगातार प्रयोग से लागत में वृद्धि हुई है। इसके अलावा, विषाक्तता के मामले भी बढ़े हैं, जिससे पशु उत्पादन प्रभावित होता है। यह किसानों के लिए एक बड़ी आर्थिक चुनौती है, क्योंकि उन्हें इलाज पर खर्च करना पड़ता है और उत्पादन में भी गिरावट आती है, जिससे उनकी आय पर प्रतिकूल असर पड़ता है।

सही कीटनाशक और पशु की उम्र

पशु की उम्र और स्वास्थ्य की स्थिति के अनुसार कीटनाशक का उपयोग किया जाना चाहिए। छोटे और बीमार पशुओं पर अत्यधिक कीटनाशक का उपयोग उनकी सेहत के लिए हानिकारक हो सकता है। इसके परिणामस्वरूप, किसान को आर्थिक नुकसान हो सकता है, क्योंकि उन्हें पशु के इलाज पर अधिक खर्च करना पड़ सकता है। पशु की उम्र और आकार के अनुसार कीटनाशक की खुराक निर्धारित करने से विषाक्तता और आर्थिक नुकसान से बचा जा सकता है।

विषाक्तता के लक्षण और आर्थिक नुकसान

आरगेनोफास्फेट कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग कोलीनएस्टरेज एंजाइम को रोकता है, जिससे पशुओं में विषाक्तता के लक्षण प्रकट होते हैं। इसके लक्षणों में पसीना आना, मांसपेशियों में झटके और दस्त शामिल हैं। यदि समय पर उपचार नहीं किया जाता है, तो यह पशु के लिए घातक हो सकता है, जिससे किसान को आर्थिक नुकसान हो सकता है। विषाक्तता के मामले में पशु की मृत्यु होने से किसान को बड़ा आर्थिक झटका लग सकता है।

आर्थिक रूप से लाभकारी उपाय

किसानों के लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि वे कीटनाशकों का सही उपयोग करें, समय पर इलाज करें, और विषाक्तता के लक्षणों की पहचान करें। इससे न केवल पशुओं का स्वास्थ्य सुरक्षित रहता है, बल्कि किसानों की आय भी सुरक्षित रहती है। सही जानकारी और सलाह के साथ कीटनाशकों का उपयोग करना न केवल पशुओं के लिए फायदेमंद होता है, बल्कि किसानों की आर्थिक स्थिति के लिए भी आवश्यक है।

निष्कर्ष

कीटनाशकों का सही उपयोग न केवल पशुओं के स्वास्थ्य के लिए बल्कि किसानों की आय के लिए भी महत्वपूर्ण है। गलत उपयोग से पशुओं में विषाक्तता का खतरा बढ़ जाता है, जिससे आर्थिक नुकसान हो सकता है। सही जानकारी और प्रबंधन के साथ कीटनाशकों का उपयोग करने से पशु स्वस्थ रहते हैं और किसानों की आय बढ़ती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

आर्थिक दृष्टिकोण से हरियाणा में वर्मी कंपोस्ट के लाभ

डॉ. विजय कुमार चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, जिला विस्तार विशेषज्ञ (फार्म प्रबंधन), कृषि विज्ञान केन्द्र, उचानी, करनाल (हरियाणा)

डॉ. रूही सहायक वैज्ञानिक, क्षेत्रीय अनुसन्धान केन्द्र, उचानी करनाल (हरियाणा)

डॉ. महा सिंह सीनियर कोऑर्डिनेटर, कृषि विज्ञान केन्द्र, उचानी, करनाल (हरियाणा)

वर्मी कंपोस्ट, जिसे केंचुआ खाद के रूप में भी जाना जाता है, जैविक खेती और टिकाऊ कृषि का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। वर्मी कंपोस्ट बनाने की प्रक्रिया में केंचुए जैविक कचरे को उच्च गुणवत्ता वाली खाद में बदलते हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता और कृषि उत्पादकता बढ़ती है। विशेष रूप से हरियाणा जैसे कृषि प्रधान राज्य में, जहाँ बड़े पैमाने पर खेती होती है, वर्मी कंपोस्ट का उपयोग न केवल कृषि लागत को कम करता है, बल्कि किसानों को आर्थिक रूप से सशक्त भी बनाता है।

वर्मी कंपोस्ट की आर्थिक विशेषताएं: वर्मी कंपोस्ट न केवल पर्यावरण के लिए लाभकारी है, बल्कि यह किसानों को आर्थिक लाभ भी प्रदान करता है। **इसके कुछ प्रमुख आर्थिक लाभ निम्नलिखित हैं:**

1.रासायनिक उर्वरकों की लागत में कमी: रासायनिक उर्वरकों का इस्तेमाल किसानों के लिए एक बड़ी लागत होती है। वर्मी कंपोस्ट के उपयोग से, किसान प्राकृतिक खाद का उत्पादन और उपयोग कर सकते हैं, जिससे रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम हो जाती है। हरियाणा में विशेष रूप से, जहाँ धान, गेहूँ और सब्जियों की बड़े पैमाने पर खेती होती है, वर्मी कंपोस्ट ने उर्वरक लागत में 25% से 30% तक की कमी लाई है। उदाहरण के तौर पर एक औसत किसान जो 5 एकड़ भूमि पर खेती करता है, वर्मी कंपोस्ट का उपयोग करके प्रति एकड़ उर्वरक लागत में रु. 3000 से रु. 5000 तक की बचत कर सकता है।

2.मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि: वर्मी कंपोस्ट के उपयोग से मिट्टी की संरचना बेहतर होती है, जिससे पौधों को आवश्यक पोषक तत्व मिलते हैं। बेहतर उर्वरता के कारण पैदावार में वृद्धि होती है, जो किसानों की आय को बढ़ाती है। हरियाणा में जो किसान नियमित रूप से वर्मी कंपोस्ट का उपयोग करते हैं, उनकी फसल उत्पादन दर में 10त्न से 20त्न तक वृद्धि दर्ज की गई है। बेहतर उत्पादन से किसान अपनी उपज को उच्च बाजार मूल्यों पर बेच सकते हैं, जिससे उनकी कुल आय में वृद्धि होती है।

3.वर्मी कंपोस्ट उत्पादन के माध्यम से अतिरिक्त आय: हरियाणा में कई किसान वर्मी कंपोस्ट उत्पादन को एक व्यावसायिक गतिविधि के रूप में अपना रहे हैं। वर्मी कंपोस्ट की बढ़ती मांग के कारण, किसान इसे बाजार में बेचकर अतिरिक्त आय अर्जित कर सकते हैं। इसके लिए बहुत अधिक पूंजी निवेश की आवश्यकता नहीं होती है और एक छोटा वर्मी कंपोस्ट प्लांट किसान को सालाना रु. 50,000 से रु. 1 लाख तक की आय दे सकता है। छोटे और सीमांत किसान भी वर्मी कंपोस्ट उत्पादन करके स्थानीय और क्षेत्रीय बाजारों में इसे बेच सकते हैं।

4.मिट्टी की जलधारण क्षमता में वृद्धि: वर्मी कंपोस्ट का उपयोग मिट्टी की जलधारण क्षमता में सुधार करता है, जिससे फसलों को कम सिंचाई की आवश्यकता होती है। इससे किसानों को पानी और बिजली की लागत में बचत होती है। हरियाणा जैसे राज्य में, जहाँ भूजल का स्तर गिर रहा है, वर्मी कंपोस्ट का उपयोग कृषि में जल संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। कम सिंचाई लागत के कारण किसानों को बिजली और पानी पर सालाना रु. 2000 से रु. 5000 तक की बचत होती है, जो उनकी कुल उत्पादन लागत को कम करता है।

5.पर्यावरणीय स्थिरता और सब्सिडी प्राप्ति: भारत सरकार और राज्य सरकारें जैविक खेती और वर्मी कंपोस्ट के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए सब्सिडी और वित्तीय सहायता प्रदान कर रही हैं। हरियाणा में जैविक कृषि कार्यक्रमों के तहत, किसान वर्मी कंपोस्ट उत्पादन इकाइयाँ स्थापित करने के लिए सब्सिडी प्राप्त कर सकते हैं। हरियाणा सरकार जैविक खेती के लिए किसानों को 25% से 50% तक की सब्सिडी प्रदान करती है। यह सब्सिडी वर्मी कंपोस्ट उत्पादन इकाइयों के लिए भी लागू होती है, जिससे किसानों के लिए यह एक सस्ता और लाभकारी विकल्प बनता है।

हरियाणा में वर्मी कंपोस्ट का विस्तार: हरियाणा में वर्मी कंपोस्ट का प्रयोग तेज़ी से बढ़ रहा है, और सरकार भी इसे बढ़ावा दे रही है। कृषि विज्ञान केंद्र (KVK) और अन्य सरकारी संस्थान किसानों को वर्मी कंपोस्ट उत्पादन तकनीकों की जानकारी प्रदान कर रहे हैं। राज्य में कई कृषि संस्थान प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित कर रहे हैं, जिससे किसान इसे आसानी से अपना सकते हैं। हरियाणा में कई महिला किसान और स्व-सहायता समूह वर्मी कंपोस्ट उत्पादन में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। वर्मी कंपोस्ट उत्पादन से महिलाएँ घरेलू स्तर पर अतिरिक्त आय अर्जित कर रही हैं और परिवार की आर्थिक स्थिति को मजबूत बना रही हैं।

वर्मी कंपोस्ट की गुणवत्ता और बाज़ार की मांग: वर्मी कंपोस्ट उच्च गुणवत्ता वाली जैविक खाद होती है जिसकी बाज़ार में बड़ी मांग है। हरियाणा जैसे कृषि प्रधान राज्य में जैविक खाद की मांग विशेष रूप से बढ़ रही है, जहाँ किसान और उपभोक्ता दोनों जैविक कृषि उत्पादों की ओर रुख कर रहे हैं। वर्मी कंपोस्ट की कीमत रु. 5 से रु. 10 प्रति किग्रा. होती है, और एक छोटे पैमाने का उत्पादन करने वाला किसान प्रति वर्ष 10 से 20 टन वर्मी कंपोस्ट उत्पादन कर सकता है। यह उसे सालाना रु.50,000 से रु. 2 लाख तक की आय अर्जित करने का अवसर देता है। हरियाणा में वर्मी कंपोस्ट का उपयोग और उत्पादन न केवल किसानों हेतु आर्थिक लाभकारी है, बल्कि यह पर्यावरण संरक्षण और टिकाऊ खेती हेतु भी महत्वपूर्ण है। वर्मी कंपोस्ट का प्रयोग रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता को कम करता है, उत्पादन लागत घटाता है, और किसानों की आय में वृद्धि करता है।

हरियाणा में वर्मी कंपोस्ट यूनिट की आर्थिक विश्लेषण: वर्मी कंपोस्ट इकाई की स्थापना हरियाणा में एक लाभकारी और पर्यावरणीय रूप से टिकाऊ व्यवसाय है। कृषि के इस जैविक समाधान का उपयोग न केवल मिट्टी की गुणवत्ता को सुधारता है, बल्कि किसानों के लिए अतिरिक्त आय का स्रोत भी बनता है। वर्मी कंपोस्ट इकाई स्थापित करने की प्रक्रिया में निवेश, संचालन लागत, उत्पादन, और मुनाफे का सही आकलन किया जाना आवश्यक है।

1. वर्मी कंपोस्ट यूनिट की स्थापना लागत: वर्मी कंपोस्ट यूनिट की स्थापना के लिए आवश्यक प्रारंभिक निवेश कई कारकों पर निर्भर करता है, जैसे कि उत्पादन क्षमता, आवश्यक भूमि, केंचुए की लागत, और बुनियादी ढाँचे का निर्माण। **निम्नलिखित एक औसत यूनिट की स्थापना के लिए लागत विश्लेषण है:**

उपकरण और सामग्री	लागत (रु. में)
भूमि की आवश्यकता (500 वर्ग मीटर)	रु. 0 (यदि स्वयं की है)
वर्मी बेड्स (50 बेड)	रु. 50,000
केंचुए (100 किलो @ रु. 400/किलो)	रु. 40,000
जैविक कचरा (प्रति माह)	रु. 5,000
छाया नेट या शेड निर्माण	रु. 30,000
पानी की व्यवस्था (सिंचाई प्रणाली)	रु. 15,000
श्रम लागत (स्थापना)	रु. 10,000
उपकरण (कुदाल, ट्रॉली, आदि)	रु. 10,000
कुल प्रारंभिक निवेश	रु. 1,60,000

2. वार्षिक संचालन लागत: वर्मी कंपोस्ट यूनिट के संचालन के लिए प्रत्येक वर्ष कुछ सामान्य खर्चों का अनुमान लगाया जाता है, जिसमें श्रम, जैविक कचरे की लागत, और रखरखाव शामिल है:

प्रमुख खर्चे	लागत (रु. में)
जैविक कचरा (प्रति माह रु. 5,000)	रु. 60,000
श्रम लागत (प्रति माह रु. 6,000)	रु. 72,000
जल और बिजली खर्च	रु. 10,000
वर्मी बेड का रखरखाव	रु. 5,000
कुल वार्षिक संचालन लागत	रु. 1,47,000

3. उत्पादन क्षमता और आय: एक वर्मी कंपोस्ट यूनिट, जो 50 वर्मी बेड से चलती है, प्रति बेड प्रति माह औसतन 100-120 किग्रा. कंपोस्ट का उत्पादन कर सकती है। **एक वर्ष में, यह उत्पादन निम्नलिखित हो सकता है:**

- प्रति बेड मासिक उत्पादन = 100 किलोग्राम
- 50 वर्मी बेड से मासिक उत्पादन = 50 म 100 = 5,000 किलोग्राम
- वार्षिक उत्पादन = 5,000 किलोग्राम म 12 = 60,000 किलोग्राम

वर्मी कंपोस्ट की कीमत बाज़ार में रु. 5 से रु. 10 प्रति किग्रा. होती है। यदि हम न्यूनतम रु. 5/किग्रा. की दर से वर्मी कंपोस्ट की बिक्री का अनुमान लगाएँ:

- वार्षिक उत्पादन (60,000 किग्रा.) x रु. 5 = रु. 3,00,000 की वार्षिक आय

4. लाभ का आकलन: अब हम वर्मी कंपोस्ट यूनिट की वार्षिक आय और संचालन लागत का अंतर निकाल कर लाभ का आकलन करेंगे:

आइटम	राशि (रु. में)
वार्षिक आय	रु. 3,00,000
वार्षिक संचालन लागत	रु. 1,47,000
वार्षिक लाभ (Net Profit)	रु. 1,53,000

इस आर्थिक विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि एक छोटे स्तर की वर्मी कंपोस्ट यूनिट, जो 50 वर्मी बेड पर आधारित है, वार्षिक रूप से लगभग ?1.5 लाख का शुद्ध लाभ कमा सकती है। यह लाभ हरियाणा के किसानों के लिए महत्वपूर्ण आर्थिक प्रोत्साहन प्रदान करता है, साथ ही यह कृषि के लिए एक टिकाऊ समाधान भी है।

5. अन्य आर्थिक लाभ

1.रासायनिक उर्वरकों पर खर्च में कमी: वर्मी कंपोस्ट का नियमित उपयोग करने से रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता में 30% तक कमी आ सकती है, जिससे किसानों की उर्वरक लागत में सालाना रु. 20,000 से रु. 50,000 की बचत हो सकती है।

2.मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार: वर्मी कंपोस्ट के उपयोग से मिट्टी की उर्वरता और संरचना बेहतर होती है, जिससे जलधारण क्षमता बढ़ती है और सिंचाई की आवश्यकता घटती है। यह पानी और बिजली की लागत को भी कम करता है, जिससे अतिरिक्त बचत होती है।

3.स्थानीय बाजारों में मांग: हरियाणा में वर्मी कंपोस्ट की बढ़ती मांग को देखते हुए, स्थानीय किसान और व्यापारी इसे आसानी से बेच सकते हैं। जैविक खेती की बढ़ती रुचि के कारण वर्मी कंपोस्ट की मांग में तेजी आई है, जिससे इसका मूल्य बढ़ सकता है।

4.सरकारी प्रोत्साहन और सब्सिडी: हरियाणा सरकार और भारत सरकार दोनों ही जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए वर्मी कंपोस्ट यूनिट पर सब्सिडी प्रदान कर रहे हैं। किसान कृषि विज्ञान केंद्र (चक्कुय) और राज्य सरकार से वित्तीय सहायता प्राप्त कर सकते हैं।

6. लघु और मध्यम उद्यमों के लिए अवसर: वर्मी कंपोस्ट यूनिट छोटे और मध्यम उद्यमों (SMEs) के लिए भी एक शानदार अवसर है। हरियाणा में कई युवा उद्यमी वर्मी कंपोस्ट उत्पादन को एक व्यावसायिक अवसर के रूप में देख रहे हैं, जिससे न केवल वे अपने लिए रोजगार सृजन कर रहे हैं, बल्कि अन्य लोगों के लिए भी रोजगार के अवसर पैदा कर रहे हैं। वर्मी कंपोस्ट यूनिट का आर्थिक विश्लेषण केवल किसानों के अवलोकन तथा अंतरजाल से प्राप्त ज्ञान पर आधारित हैं, इसलिए यह विश्लेषण अलग जगह पर परिस्थितियों अनुसार कम या ज्यादा हो सकता हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

'पशु क्लोनिंग: भविष्य की कृषि और पशुपालन की दिशा'

गगन चावला MVSc. भाकृअनुप - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

मनीषा चौधरी PhD, भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

सचिन चौधरी MVSc. पशु पोषण विभाग, राजुवास, बीकानेर (राजस्थान)

परिचय: पशु जैव प्रौद्योगिकी एक उभरता हुआ क्षेत्र है, जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पशुओं के प्रजनन, विकास और उत्पादकता को बढ़ाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इस तकनीक ने हाल के वर्षों में कृषि और पशुधन उत्पादन के क्षेत्र में कई क्रांतिकारी बदलाव किए हैं। इनमें सबसे प्रमुख तकनीक है 'क्लोनिंग', जिसके द्वारा एक पशु की सटीक आनुवांशिक प्रतिकृति बनाई जा सकती है। क्लोनिंग ने पशुपालन के क्षेत्र में नई संभावनाओं को जन्म दिया है, जिससे किसान और पशु वैज्ञानिक उच्च गुणवत्ता वाले पशु उत्पादन और लुप्तप्राय प्रजातियों के संरक्षण की दिशा में बेहतर परिणाम प्राप्त कर रहे हैं।

क्लोनिंग, पशु जैव प्रौद्योगिकी के सबसे चर्चित पहलुओं में से एक है, जो एक जीवित प्राणी के डीएनए से उसका सटीक प्रतिरूप तैयार करने की प्रक्रिया है। पशु विज्ञान में क्लोनिंग का महत्व इसलिए भी बढ़ गया है क्योंकि इससे न केवल उत्पादकता में वृद्धि होती है, बल्कि पशुओं की गुणसूत्रीय बीमारियों को नियंत्रित करने और लुप्तप्राय प्रजातियों को संरक्षित करने के नए रास्ते खुलते हैं।

क्लोनिंग क्या है?: क्लोनिंग एक जटिल वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से किसी जीवित प्राणी के समान आनुवंशिक संरचना वाले नए प्राणी का निर्माण किया जाता है। इसे सबसे पहले 1996 में डॉली नामक भेड़ की सफल क्लोनिंग से व्यापक पहचान मिली। इस प्रक्रिया में किसी भी जानवर की एक कोशिका से उसके पूरे आनुवांशिक घटक को निकालकर नए प्राणी में प्रत्यारोपित किया जाता है। यह न केवल एक महत्वपूर्ण जैव प्रौद्योगिकी है, बल्कि एक नई दिशा है, जिससे पशुपालन और कृषि में सुधार की कई संभावनाएँ उजागर हो रही हैं।

क्लोनिंग के दो प्रमुख प्रकार हैं:

1. **प्रजनन क्लोनिंग:** इसका उद्देश्य किसी जीव का पूर्ण प्रतिरूप तैयार करना है।

2. **चिकित्सीय क्लोनिंग:** इसमें शरीर की किसी विशिष्ट कोशिका का निर्माण किया जाता है, जो कि शोध कार्यों और चिकित्सा में सहायक होती है।

पशु जैव प्रौद्योगिकी और क्लोनिंग की परिभाषा: पशु जैव प्रौद्योगिकी एक व्यापक क्षेत्र है, जिसमें पशुओं की आनुवंशिक संरचना को संशोधित करने के विभिन्न तरीकों का प्रयोग किया जाता है। इसमें आनुवंशिक इंजीनियरिंग, डीएनए संशोधन, जीन सिलेक्शन और क्लोनिंग जैसी उन्नत तकनीकें शामिल होती हैं। इन तकनीकों का प्रमुख उद्देश्य पशुओं की उत्पादकता, स्वास्थ्य और रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाना है। क्लोनिंग इस जैव प्रौद्योगिकी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिसके माध्यम से वैज्ञानिक किसी भी पशु की सटीक आनुवंशिक प्रतिकृति बना सकते हैं। इसका मतलब यह है कि मूल पशु के सभी आनुवंशिक गुण, जैसे उसकी उत्पादन क्षमता, स्वास्थ्य, और अन्य विशेषताएँ, नए क्लोन पशु में भी होती हैं। यह तकनीक विशेष रूप से उन पशुओं के लिए उपयोगी होती है, जो उच्च उत्पादकता वाले होते हैं या जिनमें विशेष आनुवंशिक गुण होते हैं।

क्लोनिंग के लाभ: पशु क्लोनिंग के कई लाभ हैं, जिनमें उत्पादकता बढ़ाने से लेकर रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार तक शामिल हैं। नीचे इसके कुछ प्रमुख लाभों पर प्रकाश डाला गया है:

1.उच्च गुणवत्ता वाले पशु उत्पादन: क्लोनिंग के माध्यम से वैज्ञानिक उच्च उत्पादकता वाले पशुओं का निर्माण कर सकते हैं, जैसे अधिक दूध देने वाली गायें या बेहतरीन मांस उत्पादन करने वाले पशु। इससे किसान और उद्योगों को सीधे आर्थिक लाभ होता है और उत्पादकता में बढ़ोतरी होती है।

2.लुप्तप्राय प्रजातियों का संरक्षण: कुछ प्रजातियाँ जो विलुप्त होने की कगार पर हैं, उन्हें क्लोनिंग के माध्यम से संरक्षित किया जा सकता है। यदि किसी प्रजाति के कुछ ही सदस्य बचे हैं, तो उनके आनुवांशिक सामग्री को संरक्षित करके नए जीवों का निर्माण किया जा सकता है, जिससे उनकी संख्या में वृद्धि हो सके।

3. रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि: क्लोनिंग के द्वारा रोग प्रतिरोधक क्षमता वाले पशुओं का निर्माण किया जा सकता है, जो गंभीर बीमारियों के प्रति अधिक प्रतिरोधी होते हैं। इससे पशुओं की स्वास्थ्य समस्याओं को नियंत्रित करने में सहायता मिलती है और पशुपालकों के लिए यह आर्थिक दृष्टि से भी फायदेमंद होता है।

4. अनुसंधान और चिकित्सा: क्लोनिंग के माध्यम से वैज्ञानिक विभिन्न चिकित्सा और जैविक अनुसंधान कर सकते हैं। यह शोध विशेष रूप से जीन से संबंधित बीमारियों के इलाज में महत्वपूर्ण हो सकते हैं। चिकित्सीय क्लोनिंग से दवाओं का परीक्षण, अंग प्रत्यारोपण और अन्य चिकित्सा सुविधाओं को और अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

क्लोनिंग की चुनौतियां: जहाँ क्लोनिंग के कई लाभ हैं, वहीं इसके साथ कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियाँ भी जुड़ी हुई हैं, जो इसके व्यापक उपयोग में बाधक बन रही हैं। **इनमें से कुछ प्रमुख चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं-**

1.कम सफलता दर: क्लोनिंग की प्रक्रिया बहुत ही जटिल होती है और वर्तमान में इसकी सफलता दर काफी कम है। क्लोन पशुओं में जन्मजात विकृतियाँ या स्वास्थ्य समस्याएँ उत्पन्न होने की संभावना अधिक होती है। इससे कई बार क्लोन पशु का जीवनकाल सामान्य पशुओं से कम हो जाता है।

2.नैतिक और सामाजिक चिंताएं: क्लोनिंग के प्रति समाज में कई नैतिक सवाल उठते हैं। कुछ लोग इसे प्रकृति के नियमों में हस्तक्षेप मानते हैं जो मानवता और पर्यावरण हेतु हानिकारक हो सकता है। इसके साथ ही, धार्मिक दृष्टिकोण से भी कुछ लोग क्लोनिंग के खिलाफ हैं।

3.उच्च लागत: क्लोनिंग की प्रक्रिया अत्यधिक महंगी होती है। इसके लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित वैज्ञानिकों, उन्नत प्रयोगशालाओं और महंगे उपकरणों की आवश्यकता होती है, जो इसे सामान्य किसान और पशुपालकों के लिए सुलभ नहीं बनाती।

4.अनिश्चित दीर्घकालिक प्रभाव: क्लोनिंग के दीर्घकालिक प्रभाव अभी पूरी तरह से समझे नहीं जा सके हैं। इससे उत्पन्न होने वाले आनुवंशिक परिवर्तन और उनके प्रभावों पर और अधिक शोध की आवश्यकता है, ताकि इस तकनीक का सुरक्षित और प्रभावी उपयोग सुनिश्चित किया जा सके।

भविष्य की संभावनाएं: क्लोनिंग और पशु जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में निरंतर हो रहे अनुसंधान से यह उम्मीद की जा रही है कि आने वाले वर्षों में इसकी सफलता दर में वृद्धि होगी और इसके लागत में भी कमी आएगी। जीन संशोधन और जीन एडिटिंग जैसी उन्नत तकनीकों के साथ मिलकर क्लोनिंग पशुपालन और कृषि क्षेत्र में एक नए युग की शुरुआत कर सकती है।

निष्कर्ष: क्लोनिंग, पशु जैव प्रौद्योगिकी का एक शक्तिशाली उपकरण है, जो पशुपालन और कृषि के क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव ला सकता है। इसके माध्यम से न केवल उच्च गुणवत्ता वाले पशुओं का उत्पादन किया जा सकता है, बल्कि लुप्तप्राय प्रजातियों के संरक्षण और बीमारियों के नियंत्रण में भी इसका महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। हालांकि, नैतिक और सामाजिक चिंताओं को ध्यान में रखते हुए, इस तकनीक का उपयोग जिम्मेदारी से किया जाना चाहिए। यदि इसका सही ढंग से विकास और उपयोग किया जाता है, तो क्लोनिंग भविष्य में कृषि और पशुधन उद्योग के लिए एक महत्वपूर्ण तकनीक साबित हो सकती है। इसलिए, क्लोनिंग और पशु जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में निरंतर अनुसंधान और विकास आवश्यक है, ताकि इसे और अधिक सुलभ, सुरक्षित और प्रभावी बनाया जा सके, जिससे मानवता और पर्यावरण दोनों को इसका लाभ मिल सके।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

एर्गोनोमिक्स से खेती में नवाचार: किसानों के लिए सरल औजार

एकता, ज्योति गुणवंत एवं संतोष
संसाधन प्रबंधन एवं उपभोक्ता विज्ञान विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि में छोटे औजार और उपकरणों का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि ये न केवल किसानों के श्रम को कम करते हैं बल्कि उनकी उत्पादकता भी बढ़ाते हैं। एर्गोनॉमिक्स, जिसे मानव-युक्ति विज्ञान भी कहा जाता है, एक ऐसा विज्ञान है जो काम को इस प्रकार से डिज़ाइन करता है कि उसे करते समय श्रमिकों को शारीरिक असुविधा का सामना न करना पड़े। कृषि में एर्गोनॉमिक्स का उपयोग कर ऐसे औजार और उपकरण विकसित किए जा रहे हैं, जो किसानों के लिए अधिक सुविधाजनक और प्रभावी हैं।

एर्गोनॉमिक्स से विकसित कुछ और महत्वपूर्ण औजार और उनकी विस्तृत जानकारी:

1. मल्टीपर्पज़ गार्डन टूल (बहुउद्देशीय बागवानी औजार): यह एक ऐसा औजार है जिसका उपयोग खेती और बागवानी में कई कार्यों के लिए किया जा सकता है। इसमें एर्गोनोमिक डिज़ाइन का ध्यान रखते हुए इसे हल्का और उपयोग में आसान बनाया गया है। इस औजार से किसान मिट्टी को खोद सकते हैं, छोटे पौधों की कटाई कर सकते हैं, और फसलों के बीच की निराई (वीडिंग) कर सकते हैं। इसका डिज़ाइन इस प्रकार होता है कि हाथों में ज्यादा तनाव न पड़े, जिससे किसान लंबे समय तक काम कर सकते हैं।

विशेषताएं

■ हल्का और मजबूत सामग्री का उपयोग ■ आरामदायक ग्रिप जिससे हाथों में दर्द न हो ■ बहुउद्देशीय उपयोग

2. एर्गोनोमिक व्हील हो (चक्रीदार कुदाल): व्हील हो एक प्रकार की कुदाल होती है जिसमें आगे एक पहिया लगा होता है। इसका उपयोग खेत की निराई (वीडिंग), जुताई और मिट्टी को ढीला करने के लिए किया जाता है। पहिए की मदद से किसान को कम ताकत लगानी पड़ती है और वे ज्यादा क्षेत्र को कम समय में तैयार कर सकते हैं। यह डिज़ाइन किसानों के शरीर पर कम दबाव डालता है और काम को सुचारू रूप से करने में मदद करता है।

विशेषताएं

■ पहिए का प्रयोग, जिससे जुताई और निराई में आसानी ■ कम ऊर्जा की खपत और समय की बचत ■ लंबाई और ऊंचाई को एडजस्ट किया जा सकता है, ताकि सभी प्रकार के किसान इसे उपयोग कर सकें

3. पैडल थ्रेशर (पैर चलित धान निकालने की मशीन): यह उपकरण मुख्यतः धान या अन्य अनाजों की फसल से बीज निकालने के लिए उपयोग किया जाता है। इसमें किसान अपने पैरों से पैडल घुमाकर मशीन को चलाते हैं, जिससे अनाज को निकालने का कार्य बहुत ही आसान हो जाता है। यह उपकरण एर्गोनोमिक तरीके से डिज़ाइन किया गया है ताकि किसान अपनी पीठ और हाथों पर ज्यादा जोर डाले बिना काम कर सकें।

विशेषताएं

■ पैर से चलने वाला डिज़ाइन जिससे हाथों को आराम मिलता है ■ अनाज निकालने की प्रक्रिया तेज और कुशल ■ सस्ता और छोटे किसानों के लिए उपयुक्त

4. एर्गोनोमिक सिकल (दरांती): सिकल एक परंपरागत कटाई का औजार है, जिसे एर्गोनोमिक डिज़ाइन के साथ फिर से बनाया गया है। नया एर्गोनोमिक सिकल हल्का होता है और इसका हैंडल इस प्रकार से बना होता है कि इसे पकड़ते समय हाथों में थकावट कम होती है। किसान इसका उपयोग फसल की कटाई के समय कर सकते हैं, जिससे उनका कार्य अधिक तेज़ी से और कम शारीरिक तनाव के साथ पूरा होता है।

विशेषताएं

■ हल्की और टिकाऊ सामग्री का उपयोग ■ पकड़ने के लिए विशेष ग्रिप जिससे हाथों में दर्द नहीं होता ■ फसल की कटाई के लिए उपयुक्त

5. हैंड ट्रॉली (हाथ ट्रॉली): एर्गोनोमिक हैंड ट्रॉली का उपयोग खेतों में फसल, खाद, या मिट्टी को एक जगह से दूसरी जगह ले जाने के लिए किया जाता है। इसका डिज़ाइन इस प्रकार है कि किसान इसे आसानी से खींच सकते हैं या धकेल सकते हैं, और इसका भार शरीर पर कम पड़ता है। इसमें बड़े पहिए लगे होते हैं जिससे इसे किसी भी प्रकार की जमीन पर चलाना आसान होता है।

विशेषताएं

■ बड़े और मजबूत पहिए ■ कम ऊर्जा में भारी सामान ढोने की क्षमता ■ हल्की और मजबूत संरचना, जिससे इसे उपयोग में लाना आसान होता है

6. फॉगिंग मशीन (धुआं छिड़कने वाली मशीन): फॉगिंग मशीन का उपयोग खेतों में कीट नियंत्रण के लिए किया जाता है। यह मशीन छोटे कणों के रूप में कीटनाशक या अन्य रसायनों को खेत में फैलाती है, जिससे कीटों को नष्ट करना आसान हो जाता है। एर्गोनोमिक डिज़ाइन से विकसित यह मशीन हल्की होती है और इसे पीठ पर टांगने की सुविधा होती है, जिससे किसान बिना थके लंबे समय तक इसका उपयोग कर सकते हैं।

विशेषताएं

■ हल्की और सुविधाजनक डिज़ाइन ■ बैक सपोर्ट और एर्गोनोमिक स्ट्रैप्स ■ तेज और प्रभावी छिड़काव

7. प्लांटिंग ट्रे (रोपाई ट्रे): यह एक प्लास्टिक की ट्रे होती है जिसमें छोटे-छोटे गड्ढे होते हैं, जहां किसान बीज बो सकते हैं। यह ट्रे एर्गोनोमिक डिज़ाइन के साथ बनाई जाती है, जिससे किसानों को छोटे पौधों को रोपने में आसानी होती है। इसका उपयोग विशेष रूप से नर्सरी में किया जाता है, जहां किसान पौधों की प्रारंभिक देखभाल कर सकते हैं।

विशेषताएं

■ हल्का और टिकाऊ प्लास्टिक ■ पौधों की जड़ों को नुकसान पहुंचाए बिना रोपाई में मदद ■ नर्सरी और छोटे किसानों के लिए उपयुक्त

8. एर्गोनोमिक रेक: रेक का उपयोग खेतों में फसल अवशेषों और घास को इकट्ठा करने के लिए किया जाता है। एर्गोनोमिक रेक में एक लम्बा और हल्का हैंडल होता है, जिससे किसान बिना ज्यादा झुके आसानी से काम कर सकते हैं। यह विशेष रूप से उन किसानों के लिए उपयोगी है जो खेतों की सफाई और घास को इकट्ठा करने में ज्यादा समय लगाते हैं।

विशेषताएं

■ हल्का और मजबूत डिज़ाइन ■ कमर और कंधों पर कम दबाव ■ खेत की सफाई के लिए उपयुक्त

एर्गोनोमिक्स से विकसित छोटे औजार और उपकरण किसानों के जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। ये औजार न केवल किसानों की शारीरिक मेहनत को कम करते हैं, बल्कि उनके कार्य को अधिक प्रभावी, सुरक्षित और आरामदायक बनाते हैं। एर्गोनोमिक डिज़ाइन के कारण, ये औजार किसानों के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए बनाए गए हैं, जिससे काम के दौरान शरीर पर कम तनाव पड़ता है और चोटों का खतरा कम होता है।

किसान इन औजारों का उपयोग करके अपनी उत्पादकता को बढ़ा सकते हैं और कम समय में अधिक बेहतर परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। इसके अलावा, ये उपकरण सस्ते, टिकाऊ और छोटे किसानों के लिए भी आसानी से उपलब्ध होते हैं। कृषि क्षेत्र में एर्गोनोमिक्स का उपयोग किसानों के लिए एक क्रांतिकारी बदलाव साबित हो रहा है, जिससे उनके काम की गुणवत्ता और उनकी जीवन शैली में सुधार हो रहा है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

बेर फ्रूट कैंडी : स्वास्थ्य और स्वाद का अनोखा मेल

कनिका पंवार, राकेश गेहलोत और रूही
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय,
क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, करनाल (हरियाणा)

बेर फल, जिसे भारतीय जूजूब के नाम से भी जाना जाता है, एक छोटा, गोल और स्वाद में खट्टा-मीठा फल है जो भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के कुछ हिस्सों में मिलता है। आमतौर पर इसे ताज़ा खाया जाता है, लेकिन बेर का उपयोग कई स्वादिष्ट उत्पाद बनाने में भी होता है, जिनमें से एक है बेर फ्रूट कैंडी।

बेर फ्रूट कैंडी बनाने की प्रक्रिया

बेर फ्रूट कैंडी ताजे फलों को संरक्षित करके और उन्हें एक मीठी ट्रीट में बदलकर बनाई जाती है। इस प्रक्रिया के चरण हैं:

1.चयन और सफाई: सबसे पहले, पके हुए और बिना किसी खराबी वाले बेर फलों का चयन किया जाता है। फिर इन्हें अच्छे से धोया जाता है ताकि सभी गंदगी और अशुद्धियाँ हटाई जा सकें।

2.बीज निकालना: फलों से उनके बीज निकाल दिए जाते हैं। इससे कैंडी का टेक्सचर स्मूथ होता है और शेल्फ लाइफ भी बढ़ती है।

3.ब्लांचिंग: फलों को कुछ मिनटों के लिए गर्म पानी में डाला जाता है। इससे बेर नर्म हो जाते हैं, जिससे स्वाद को अच्छी तरह से समाहित करना और कैंडी का टेक्सचर बेहतर होता है।

4.चीनी सिरप की तैयारी: चीनी को पानी में घोलकर गरम किया जाता है जब तक कि यह सिरप के रूप में तैयार न हो जाए। कभी-कभी, सिरप में नींबू का रस या अन्य प्राकृतिक फ्लेवर भी मिलाए जाते हैं।

5.कैंडी बनाना: ब्लांच किए हुए फलों को चीनी के सिरप में कुछ घंटों के लिए या पूरी रात के लिए डूबोया जाता है। यह प्रक्रिया फलों को मीठा बनाने के लिए होती है, जिससे उनका स्वाद संतुलित हो जाता है।

6.सुखाना: भिगोए हुए फलों को फिर धीरे-धीरे सुखाया जाता है। इसके लिए पारंपरिक धूप में सुखाने या आधुनिक डिहाइड्रेटर्स का उपयोग किया जा सकता है। सुखाने से अतिरिक्त नमी निकल जाती है, जो कैंडी को लंबे समय तक सुरक्षित रखता है।

7.कोटिंग (वैकल्पिक): कुछ प्रकार की बेर फ्रूट कैंडी में सूखे हुए टुकड़ों पर पतली चीनी या मसालों की परत लगाई जाती है ताकि उनका स्वाद ओर भी बढ़ जाए।

8.पैकेजिंग: अंतिम चरण में बेर फ्रूट कैंडी को पैक किया जाता है। उचित पैकेजिंग कैंडी की ताजगी बनाए रखती है और इसे नमी और दूषित पदार्थों से बचाती है।

बेर फ्रूट कैंडी के फायदे

1.पोषक तत्वों से भरपूर: बेर फल विटामिन सी, खनिज और एंटीऑक्सीडेंट का भंडार है। जब इसे कैंडी के रूप में बनाया जाता है, तो इसके कुछ पोषक तत्व बरकरार रहते हैं।

2.पाचन में सहायक: यह कैंडी अक्सर पाचन में मदद के लिए खाई जाती है क्योंकि इसमें प्राकृतिक फाइबर और हल्की खटास होती है, जो पाचन को बढ़ाती हैं।

3.त्वरित ऊर्जा स्रोत: कैंडी में मौजूद चीनी त्वरित ऊर्जा प्रदान करती है, जिसे बेहतरीन स्नैक के रूप मे इस्तेमाल कर सकते हैं।

लोकप्रिय प्रकार

1.मसालेदार बेर कैंडी: इसमें चीनी के साथ मसालों का मिश्रण, जैसे कि मिर्च पाउडर, नमक और काला नमक मिलाया जाता है, जो इसे एक अनोखा खट्टा-मीठा स्वाद देता है।

2.शहद कॉटेड बेर कैंडी: इसमें चीनी सिरप की जगह शहद का इस्तेमाल किया जाता है, जिससे यह सेहतमंद और सुगंधित बनती है।

3.नमकीन बेर कैंडी: इसमें नमक और थोड़ी मात्रा में नींबू का रस मिलाया जाता है, जो इसे एक नमकीन-खट्टा स्वाद देता है।

बेर फ्रूट कैंडी की लोकप्रियता के कारण

बेर फ्रूट कैंडी की लोकप्रियता का एक मुख्य कारण इसका प्राकृतिक और अद्वितीय स्वाद है। जबकि अन्य फलों की कैंडी में केवल मिठास होती है, बेर फ्रूट कैंडी खट्टे और मीठे स्वाद का एक बढ़िया संतुलन है, जो इसे बाजार में उपलब्ध कृत्रिम फ्लेवर वाली कैंडीज से अलग बनाता है।

घर पर बेर फ्रूट कैंडी बनाने के टिप्स

अगर आप घर पर बेर फ्रूट कैंडी बनाना चाहते हैं, तो सबसे पहले ताजे और पके हुए फलों का चयन करें। घर पर बनाने से आप अपने स्वादानुसार मिठास और मसालों की मात्रा को नियंत्रित कर सकते हैं। अगर आप कम मीठी और थोड़ी स्वस्थ विकल्प चाहते हैं, तो शहद या गुड़ का उपयोग कर सकते हैं। सुखाने के लिए फलों को धूप में 2-3 दिनों तक रखें, या फिर डिहाइड्रेटर का उपयोग करें, ताकि नमी पूरी तरह से निकल जाए और कैंडी लम्बे समय तक चल सके।

कैंडी की सांस्कृतिक और पारंपरिक महत्ता

भारत में, बेर और इससे बने उत्पादों का पारंपरिक रूप से महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कई क्षेत्रों में, बेर की कैंडी को विशेष अवसरों और त्योहारों पर खाया और बांटा जाता है। यह कैंडी बच्चों के साथ-साथ बड़ों में भी लोकप्रिय है। पुराने समय से लेकर आज तक, बेर फ्रूट कैंडी एक साधारण लेकिन प्रिय ट्रीट के रूप में जानी जाती है, जो समय के साथ अपने प्राकृतिक स्वाद और सेहतमंद गुणों के कारण काफी प्रसिद्ध हैं।

निष्कर्ष

बेर फ्रूट कैंडी पारंपरिक स्वादों और आधुनिक कैंडी बनाने की तकनीकों का एक बेहतरीन मिश्रण है। यह ताजे बेर फल के खट्टे-मीठे स्वाद को एक सुविधाजनक, लंबे समय तक टिकने वाले रूप में प्रस्तुत करता है। इसका अनोखा स्वाद और स्वास्थ्य लाभ इसे एशियाई बाजारों में खासतौर पर लोकप्रिय बनाता है। चाहे एक स्नैक के रूप में हो या भोजन के बाद की ट्रीट के रूप में, बेर फ्रूट कैंडी अपने अनोखे स्वाद और पोषण गुणों के कारण पसंद की जाती हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हिमाचल प्रदेश

केल : पोषण और स्वास्थ्य लाभ

अंजली कुमारी (एम.एस.सी) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

बलबीर सिंह डोगरा (प्रधान वैज्ञानिक) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि. प्र.)

शिवाली धीमान (पी.एच.डी. स्कॉलर) डॉ. वाइएस परमार औधानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौनी, सोलन (हि.प्र.)

अनुज सोही (पी.एच.डी.) डॉ. वाई एस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

केल एक अत्यधिक पौष्टिक हरी पत्तेदार सब्जी है, जो ब्रासिका परिवार का हिस्सा है, जिसमें ब्रोकोली, फूलगोभी और ब्रसेल्स स्प्राउट्स शामिल हैं। इसकी पत्तियाँ गहरे हरे रंग की होती हैं और इसमें कई प्रकार के पोषक तत्व मौजूद होते हैं। केल, जिसे अक्सर "सुपरफूड" के रूप में जाना जाता है, हाल के वर्षों में बहुत लोकप्रिय हो गया है। यह हरी पत्तेदार सब्जी स्वास्थ्यवर्धक रेस्टोरेंट के मेन्यू में और स्मूदी रेसिपीज़ में अक्सर देखी जाती है।

केल का पोषण मूल्य

केल क्रूसीफेरस सब्जियों के परिवार का सदस्य है, जिसमें ब्रोकोली, फूलगोभी और ब्रसेल्स स्प्राउट्स शामिल हैं। यह हरी पत्तेदार सब्जी कैलोरी में कम और आवश्यक पोषक तत्वों से भरी होती है। **यहां एक कप (कच्चा, कटा हुआ) केल का पोषण मूल्य है:**

- **कैलोरी:** 33
- **कार्बोहाइड्रेट:** 7 ग्राम
- **फाइबर:** 1 ग्राम
- **प्रोटीन:** 3 ग्राम
- **वसा:** 1 ग्राम

विटामिन:

- विटामिन K: 684% दैनिक मूल्य (DV)
- विटामिन A: 206% DV
- विटामिन C: 134% DV
- विटामिन B6: 9% DV

खनिज:

- **कैल्शियम:** 9% DV
- **पोटेशियम:** 9% DV
- **मैग्नीशियम:** 6% DV
- **एंटीऑक्सीडेंट:** केल में फ्लेवोनोइड्स और कैरोटेनॉइड्स की भरपूर मात्रा होती है, जो इसके स्वास्थ्य लाभों में योगदान करती है।

केल के स्वास्थ्य लाभ

1. **एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर:** केल एंटीऑक्सीडेंट से भरा हुआ है, जो शरीर में ऑक्सीडेटिव तनाव से लड़ने में मदद करता है। क्वरसेटिन और कैम्पफेरोल जैसे एंटीऑक्सीडेंट सूजन को कम करने और पुरानी बीमारियों के जोखिम को कम करने से जुड़े हैं।

2. दिल की सेहत के लिए फायदेमंद

केल में उच्च फाइबर, पोटेशियम और एंटीऑक्सीडेंट होते हैं, जो हृदय स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद हैं। इन पोषक तत्वों का समृद्ध आहार रक्तचाप को कम करने और कोलेस्ट्रॉल के स्तर को सुधारने में मदद कर सकता है।

3. हड्डियों की सेहत

केल में अत्यधिक मात्रा में विटामिन K होता है, जो हड्डियों की सेहत हेतु महत्वपूर्ण है। विटामिन K कैल्शियम के अवशोषण और हड्डियों के खनिजकरण में मदद करता है जिससे फ्रैक्चर का जोखिम कम होता है।

4. वजन प्रबंधन में सहायता

केल कम कैलोरी वाला और उच्च फाइबर से भरपूर होता है, जो वजन प्रबंधन के लिए आदर्श है। इसका फाइबर सामग्री भूख को कम करने में मदद करता है, जिससे कुल कैलोरी का सेवन कम होता है।

5. आंखों की सेहत के लिए

केल में ल्यूटिन और ज़ीक्सैंथिन होते हैं जो उम्र से संबंधित मैक्युलर डिजेनरेशन और मोतियाबिंद से सुरक्षा में मदद करते हैं। ये यौगिक हानिकारक नीली रोशनी को फिल्टर करने में मदद करते हैं।

6. पाचन में सहायता

केल में फाइबर होता है, जो स्वस्थ पाचन में योगदान करता है। फाइबर नियमित आंत्र आंदोलनों को बढ़ावा देता है और कब्ज से रोकता है।

7. प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा

केल में उच्च मात्रा में विटामिन C होता है, जो प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है। यह सफेद रक्त कोशिकाओं के उत्पादन को बढ़ावा देता है, जो संक्रमण से लड़ने में मदद करती हैं।

केल को अपने आहार में कैसे शामिल करें

केल को अपने भोजन में शामिल करना आसान और विविध है। यहाँ कुछ तरीके दिए गए हैं-

- **सलाद:** कच्चे केल को सलाद के रूप में इस्तेमाल करें और इसे जैतून के तेल और नींबू के रस के साथ मसाज करें।
- **स्मूदी:** केले, बोरोज और बेरीज़ के साथ मिलाकर एक पौष्टिक स्मूदी बनाएं।
- **सूप और स्ट्यू:** सूप या स्ट्यू में केल डालें।
- **साटेड:** लहसुन और जैतून के तेल के साथ हल्का सा सॉट करें।
- **केल चिप्स:** नमक छिड़ककर केल की पत्तियों को भूनें।

निष्कर्ष

केल वास्तव में एक पोषण से भरा हुआ खाद्य पदार्थ है, जो हर कौर में स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है। इसकी विविधता और पोषक तत्वों की घनत्व इसे किसी भी आहार में शामिल करने के लिए एक उत्कृष्ट विकल्प बनाते हैं। चाहे आप इसे सलाद में, स्मूदी में या साइड डिश के रूप में खाएं, अपने भोजन में केल को शामिल करना आपके स्वास्थ्य को मजबूत करने में मदद कर सकता है। अगली बार जब आप पोषण बढ़ाने का विचार करें, तो इस हरी पत्तेदार सब्जी का चयन करें।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता : पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हिमाचल प्रदेश

सब्जियों के उत्पादन पर जलवायु के प्रभाव

अंजली कुमारी (एम.एस.सी) डॉ. वाइ एस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

बलबीर सिंह डोगरा (प्रधान वैज्ञानिक) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी वि.वि. नौनी, सोलन (हि.प्र.)

शिवाली धीमान (पी.एच.डी. स्कॉलर) डॉ. वाइएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी वि.वि. नौनी, सोलन (हि.प्र.)

अनुज सोही (पी.एच.डी.) डॉ. वाईएस परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन (हि.प्र.)

परिचय: जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक समस्या है, जो आज की दुनिया के सामने अनेक चुनौतियों का सामना करवा रही है। इसके प्रभाव न केवल पर्यावरण पर पड़ते हैं, बल्कि कृषि, विशेष रूप से सब्जियों के उत्पादन पर भी गहरा असर डालते हैं। सब्जियाँ न केवल मानव आहार का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था और खाद्य सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस लेख में, हम जलवायु परिवर्तन के कारणों, उसके प्रभावों और इससे निपटने के उपायों पर चर्चा करेंगे।

जलवायु परिवर्तन के कारण: जलवायु परिवर्तन मुख्यतः मानव जनित गतिविधियों के कारण हो रहा है। औद्योगिक क्रांति के बाद से बढ़ते कार्बन उत्सर्जन, वनों की कटाई और कृषि में अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों का उपयोग इसके प्रमुख कारण हैं। ग्रीनहाउस गैसें, जैसे कि कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड, वायुमंडल में गर्मी को बंद कर देती हैं, जिससे वैश्विक तापमान बढ़ता है।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

तापमान में वृद्धि: जलवायु परिवर्तन के कारण औसत वैश्विक तापमान में वृद्धि हो रही है। कई सब्जियाँ, जैसे टमाटर, ककड़ी और भिंडी, विशेष तापमान की सीमाओं में उगती हैं। यदि तापमान उन सीमाओं को पार कर जाता है, तो न केवल उपज में कमी आएगी, बल्कि सब्जियों की गुणवत्ता भी प्रभावित होगी।

वृष्टि के पैटर्न में परिवर्तन: जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा के पैटर्न में भी बदलाव आ रहा है। कुछ क्षेत्रों में अत्यधिक बारिश और बाढ़ आ रही है, जबकि अन्य क्षेत्रों में सूखा पड़ रहा है। यह सब्जियों की सिंचाई और उत्पादन में असंतुलन उत्पन्न करता है, जिससे किसान कठिनाई में पड़ जाते हैं।

कीट और रोगों का बढ़ता प्रकोप: उच्च तापमान और आर्द्रता की स्थिति कीटों और रोगों के प्रकोप को बढ़ा सकती है। जैसे-जैसे जलवायु बदलती है, कीटों की गतिविधियाँ भी बढ़ जाती हैं, जिससे फसल का नुकसान होता है। यह किसानों के लिए एक बड़ी चिंता का विषय है, क्योंकि इससे उनकी आर्थिक स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

जल संसाधनों पर दबाव: जलवायु परिवर्तन के कारण जल स्तर में परिवर्तन हो रहा है। सूखा या अत्यधिक वर्षा से जल संसाधनों की उपलब्धता प्रभावित होती है, जिससे सब्जियों की सिंचाई में कठिनाई होती है। जल संकट का सामना कर रहे क्षेत्रों में सब्जी उत्पादन में कमी आ सकती है।

भूमि की उर्वरता में कमी: जलवायु परिवर्तन से मिट्टी की उर्वरता में कमी आ रही है। बढ़ती गर्मी और बाढ़ से मिट्टी का क्षरण होता है, जिससे पौधों की वृद्धि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इससे उत्पादन में गिरावट आ सकती है।

जलवायु परिवर्तन का विभिन्न सब्जियों पर प्रभाव

1. **तापमान में वृद्धि**

टमाटर: उच्च तापमान फल सेटिंग को कम कर सकता है और फल की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है। अत्यधिक गर्मी रोगों की संवेदनशीलता को भी बढ़ा सकती है।

पालक: गर्मियों में तापमान बढ़ने से पालक जल्दी फूलने (बोल्टिंग) लगता है, जिससे उत्पादन और गुणवत्ता में कमी आती है।

वर्षा के पैटर्न में बदलाव

ककड़ी: अधिक वर्षा से मिट्टी में पानी भर जाने के कारण जड़ सड़न और अन्य बीमारियाँ हो सकती हैं। वहीं, सूखे की स्थिति में पौधों पर तनाव पड़ता है जिससे उत्पादन में कमी आती है।

गाजर: असमान वर्षा मिट्टी की नमी स्तर को प्रभावित करती है, जिससे अंकुरण और वृद्धि पर असर पड़ता है।

3. कीट और रोगों का बढ़ता प्रकोप

सलाद: गर्म और नम परिस्थितियाँ फंगल बीमारियों जैसे डाउन मिल्ड्यू और एफिड के हमलों को बढ़ा सकती हैं।

शिमला मिर्च: उच्च तापमान की स्थिति में एफिड और सफेद मक्खियों जैसी कीटों की संख्या बढ़ जाती है, जो पौधों को नुकसान पहुँचाते हैं।

4. जल संसाधनों पर प्रभाव

हरी पत्तेदार सब्जियाँ (जैसे, काले, स्विस चार्ड): जल संकट से हरी पत्तेदार सब्जियों की वृद्धि प्रभावित होती है, जो लगातार नमी की आवश्यकता होती है।

आलू: पानी की कमी ट्यूबर विकास में समस्याएँ उत्पन्न कर सकती है और उपज को कम कर सकती है।

5. भूमि की उर्वरता और संरचना में परिवर्तन

फली (जैसे, सेम): जलवायु परिवर्तन से मिट्टी का तापमान और नमी प्रभावित हो सकती है, जिससे नाइट्रोजन-फिक्सिंग बैक्टीरिया पर असर पड़ता है।

प्याज: चरम मौसम की घटनाओं से मिट्टी की संरचना प्रभावित होती है, जिससे बल्ब निर्माण और उपज में कमी हो सकती है।

6. विकास चक्र में परिवर्तन

जुकीनी: गर्म तापमान से बुवाई का समय पहले हो सकता है, लेकिन फूल के दौरान गर्मी का तनाव फल सेटिंग को प्रभावित कर सकता है।

फूलगोभी: जलवायु में परिवर्तन विकास चक्र में अस्थिरता ला सकता है, जिससे कटाई का समय असंगत हो जाता है और गुणवत्ता प्रभावित होती है।

संकट से निपटने के उपाय: जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने के लिए कुछ उपाय किए जा सकते हैं:

1.सुधारात्मक कृषि तकनीकें: किसानों को जैविक खेती, जल संरक्षण तकनीकें और फसल चक्रीकरण अपनाने की आवश्यकता है। ये विधियाँ न केवल उत्पादन बढ़ाने में मदद करेंगी, बल्कि पर्यावरण को भी संरक्षित रखेंगी।

2.जलवायु-आधारित नीतियाँ: सरकारों को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को ध्यान में रखते हुए कृषि नीतियाँ बनानी चाहिए। इसमें कृषि बीमा, फसल सुरक्षा और जल प्रबंधन योजनाओं का समावेश होना चाहिए।

3.फसल विविधता: किसानों को फसल विविधता को अपनाना चाहिए। विभिन्न प्रकार की सब्जियों की खेती से उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है और कीटों के प्रकोप को भी कम किया जा सकता है।

4.शोध और विकास: वैज्ञानिक अनुसंधान के माध्यम से जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक सहनशील सब्जियों की किस्में विकसित की जा सकती हैं। इससे उत्पादन में स्थिरता बनी रहेगी।

5.जन जागरूकता: किसानों और आम जनता को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों और इसके निवारण के तरीकों के बारे में जागरूक करना आवश्यक है। इससे लोग अपनी कृषि पद्धतियों को बेहतर बना सकेंगे।

निष्कर्ष: जलवायु परिवर्तन का सब्जियों के उत्पादन पर गहरा प्रभाव है। इसके कारण किसानों को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, लेकिन उचित नीतियों, आधुनिक कृषि तकनीकों और सामूहिक प्रयासों से इन चुनौतियों का सामना किया जा सकता है। इस दिशा में जागरूकता और शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सभी किसान, वैज्ञानिक, सरकार और समाज–को मिलकर इस संकट का समाधान निकालना होगा, ताकि हम एक सुरक्षित और स्थायी खाद्य प्रणाली की ओर बढ़ सकें। जलवायु परिवर्तन से लड़ने के लिए सामूहिक प्रयास ही सबसे प्रभावी समाधान हो सकते हैं।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार

खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
महाराष्ट्र

संदूर संवेदन प्रौद्योगिकी का कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान

डॉ. मयूर अडावदकर (सहायक प्रोफेसर) सिंचाई एवं जल निकासी इंजीनियरिंग विभाग, कृषि अभियांत्रिकी एवं तकनीकी महाविद्यालय, कृषि विज्ञान संकुल, कष्टी, मालेगांव-423105 (महाराष्ट्र)

डॉ. विनायक पराडकर (सहायक प्रोफेसर) जल एवं मृदा संरक्षण इंजीनियरिंग विभाग, कृषि अभियांत्रिकी एवं तकनीकी महाविद्यालय, कृषि विज्ञान संकुल, कष्टी, मालेगांव

प्रियंका महाजन एमएस्सी छात्र, संगणक शास्त्र विभाग, झुलाल भिलाजीराव पाटील महाविद्यालय, धुळे

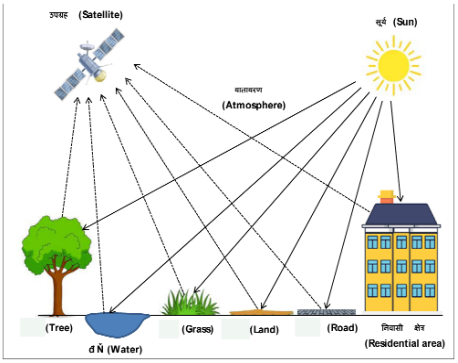

किसी पदार्थ, वस्तु या तत्व के साथ किसी भी प्रकार का संपर्क या स्पर्श किए बिना उसके बारे में जानकारी प्राप्त करना ही संदूर संवेदन (रिमोट सेंसिंग) है। रिमोट सेंसिंग का अर्थ है दूर से, विशेषकर विमान या उपग्रहों के माध्यम से वस्तु या क्षेत्र के बारे में जानकारी प्राप्त करने का विज्ञान।

रिमोट सेंसिंग का सिद्धांत विद्युत चुंबकीय विकिरण और पदार्थ, वस्तु या तत्व के बीच होने वाले आपसी क्रिया-प्रतिक्रिया पर आधारित होता है। संदूर संवेदन प्रक्रिया में सूर्य एक महत्वपूर्ण घटक है। सूर्य से निकलने वाली किरणें जब किसी वस्तु या तत्व पर पड़ती हैं, तो उनमें से कुछ किरणें उस वस्तु या तत्व द्वारा अवशोषित हो जाती हैं, जबकि कुछ परावर्तित हो जाती हैं। हर वस्तु या तत्व की किरणों को परावर्तित करने की क्षमता अलग-अलग होती है। इन परावर्तित किरणों की जानकारी अंतरिक्ष में स्थित उपग्रहों के माध्यम से संग्रहीत की जाती है, और हम इस जानकारी का उपयोग करके कृषि क्षेत्र में बहुत उन्नति कर सकते हैं। (चित्र. 1)

संदूर संवेदन (रिमोट सेंसिंग) प्रौद्योगिकी का कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान: संदूर संवेदन (रिमोट सेंसिंग) तकनीक का कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य है। इस प्रणाली की मदद से कृषि क्षेत्र के विभिन्न कार्यों को अधिक दक्षता और प्रभावी ढंग से संपन्न किया जा सकता है। संदूर संवेदन तकनीक के कृषि क्षेत्र में योगदान की जानकारी निम्नलिखित है-

फसल पहचान और फसल रोपण क्षेत्र का अनुमान: संदूर संवेदन प्रणाली के माध्यम से हम स्थान के अनुसार विभिन्न फसलों की पहचान कर सकते हैं। इसके साथ ही किस फसल की कितनी क्षेत्र में बुवाई की गई है, इसका अनुमान भी इस तकनीक के माध्यम से लगाया जा सकता है।

फसल स्वास्थ्य निरीक्षण: संदूर संवेदन प्रणाली के द्वारा किसानों को उनकी फसलों के स्वास्थ्य के बारे में तुरंत जानकारी मिल सकती है। उपग्रह चित्रों और ड्रोन द्वारा खींची गई तस्वीरों का उपयोग कर फसलों के स्वास्थ्य पर नज़र रखी जाती है। इससे किसी भी समस्या का जल्दी पता लगाया जा सकता है और आवश्यक उपाय किए जा सकते हैं।

फसल उत्पादन का अनुमान : उपग्रह चित्रों की मदद से फसल उत्पादन की पूर्व जानकारी मिलती है, जिससे किसान इसके अनुसार योजना बना सकते हैं।

सिंचाई प्रबंधन: संदूर संवेदन प्रौद्योगिकी की मदद से सिंचाई प्रबंधन को बेहतर ढंग से किया जा सकता है। पानी की आवश्यकता वाले क्षेत्रों की पहचान की जा सकती है और उसके अनुसार सिंचाई योजना बनाई जा सकती है। हर फसल की पानी की जरूरत उसकी बढ़त के अनुसार बदलती रहती है। संदूर संवेदन तकनीक की मदद से हम हर फसल को उसकी बढ़त के अनुसार पानी दे सकते हैं।

मिट्टी की उत्पादकता: संदूर संवेदन प्रणाली के द्वारा हम मिट्टी की उत्पादकता का आकलन कर सकते हैं। इस तकनीक के माध्यम से मिट्टी में पोषक तत्वों के स्तर की जाँच कर किसानों को सही खाद के उपयोग का मार्गदर्शन किया जा सकता है।

मृदा की आर्द्रता: संदूर संवेदन तकनीक द्वारा हम मृदा की आर्द्रता माप सकते हैं और इस तकनीक के माध्यम से मिट्टी में जल स्तर की जाँच भी कर सकते हैं, जिससे जल का उचित मात्रा में वितरण संभव हो जाता है और फसलों को आवश्यकतानुसार ही पानी दिया जा सकता है।

मौसम पूर्वानुमान: संदूर संवेदन तकनीक के माध्यम से मौसम का सटीक अनुमान लगाया जा सकता है। यह तकनीक वर्षा की मात्रा, तापमान और मौसम में होने वाले परिवर्तनों की जानकारी देकर किसानों को सही समय पर सही फसलों की बुवाई करने में मदद करती है।

मिट्टी का मानचित्रण: हम संदूर संवेदन प्रणाली द्वारा स्थान के अनुसार मिट्टी के विभिन्न प्रकारों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और उसके अनुसार मिट्टी का नक्शा बना सकते हैं।

रोग और कीट प्रबंधन: संदूर संवेदन की सहायता से फसलों पर होने वाले रोगों और कीटों का अनुमान लगाया जा सकता है। इससे कीटनाशक और रासायनिक खाद का सही समय पर और उचित मात्रा में उपयोग किया जा सकता है, जिससे उत्पादन में वृद्धि होती है। इस प्रकार, रोग और कीट प्रबंधन में संदूर संवेदन प्रणाली महत्वपूर्ण है।

सूखा निरीक्षण: तालाब, नदी और अन्य जलस्रोतों के स्तर की निगरानी के लिए संदूर संवेदन प्रणाली का उपयोग होता है। जलस्रोतों के स्तर में कमी सूखे के संकेत देती है। साथ ही, इस तकनीक द्वारा वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन दर का भी मापन किया जा सकता है। ये दर मृदा की आर्द्रता पर निर्भर करते हैं और इनसे सूखे का अनुमान लगाया जा सकता है। रिमोट सेंसिंग प्रणाली ने कृषि क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन किए हैं और किसानों को अधिक उत्पादक और लाभकारी खेती करने में मदद की है। रिमोट सेंसिंग तकनीक द्वारा कृषि क्षेत्र में लाई गई इन सुविधाओं के कारण, किसानों को बेहतर तरीके से खेती करने और अपनी आय बढ़ाने का अवसर मिलता है। इससे कृषि का विकास और स्थिरता बढ़ती है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

बिहार के वन: जैव विविधता और आजीविका के लिए एक महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र

डॉ. जयश्री बेहरा (एसआरएफ)
डॉ. अरविन्द कुमार सिंह (एसआरएफ)
केवीके प्रमुख, कृषि विज्ञान केंद्र पीपराकोठी (बिहार)

डॉ. सौरभ शर्मा, संकाय, पं. दीनदयाल उपाध्याय बागवानी एवं वानिकी महाविद्यालय, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि वि.वि., पीपराकोठी, ई. चंपारण, बिहार

कोमल ठाकुर, करीना डोगरा पी.एच.डी विद्वान), डॉ. वाईएस परमार यूएचएफ, नौणी

परिचय: भारत के पूर्वी भाग में स्थित बिहार अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और ऐतिहासिक महत्व के लिए जाना जाता है। हालाँकि, इसमें विविध वन पारिस्थितिकी तंत्र भी हैं जो राज्य के पर्यावरणीय स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिरता और इसके समुदायों की भलाई में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राज्य के भौगोलिक क्षेत्र के लगभग 8.3% हिस्से को कवर करते हुए, बिहार के जंगल न केवल जैव विविधता के लिए महत्वपूर्ण हैं, बल्कि कई निवासियों के लिए आजीविका के स्रोत के रूप में भी काम करते हैं।

बिहार में वनों के प्रकार

बिहार के वनों को तीन मुख्य प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वन: मुख्य रूप से राज्य के दक्षिणी और मध्य भागों में पाए जाते हैं, इन वनों की विशेषता पर्णपाती पेड़ों का मिश्रण है जो शुष्क मौसम के दौरान अपने पत्ते गिरा देते हैं। प्रमुख प्रजातियों में सागौन, साल और बांस शामिल हैं। ये वन मिट्टी की गुणवत्ता बनाए रखने और कटाव को रोकने के लिए आवश्यक हैं।

बांस के जंगल: बांस बिहार में बहुतायत से उगता है, खासकर गया और जमुई जिलों में। ये जंगल स्थानीय अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि बांस एक बहुमुखी सामग्री है जिसका उपयोग निर्माण, शिल्प और विभिन्न घरेलू वस्तुओं के लिए किया जाता है। बांस की टिकाऊ कटाई ग्रामीण आजीविका में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है।

मैंग्रोव वन: हालांकि अन्य प्रकारों की तरह प्रचलित नहीं, मैंग्रोव वन बिहार के पूर्वी हिस्से में पाए जाते हैं, खासकर नदियों के किनारे। ये पारिस्थितिकी तंत्र पानी की गुणवत्ता बनाए रखने, विभिन्न प्रजातियों के लिए आवास प्रदान करने और तटीय क्षेत्रों को कटाव से बचाने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

जैव विविधता और संरक्षण: बिहार के जंगल वनस्पतियों और जीवों की समृद्ध विविधता का घर हैं। भारतीय हाथी, बंगाल टाइगर और विभिन्न हिरण प्रजातियाँ जैसी प्रजातियाँ राज्य के जंगलों में पाई जा सकती हैं। जंगल कई पक्षी प्रजातियों का भी समर्थन करते हैं, जिससे वे वन्यजीवों के लिए एक महत्वपूर्ण आवास बन जाते हैं।

हालाँकि, जंगलों को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें वनों की कटाई, अतिक्रमण और अवैध कटाई शामिल है। तेजी से शहरीकरण और कृषि विस्तार के कारण वन भूमि का क्षरण हुआ है। इन मुद्दों से निपटने के लिए, बिहार सरकार और विभिन्न गैर-सरकारी संगठन (एनजीओ) पुनर्वनीकरण और संरक्षित क्षेत्रों की स्थापना सहित संरक्षण प्रयासों की दिशा में काम कर रहे हैं।

आर्थिक महत्व: बिहार में वन स्थानीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे लकड़ी, ईंधन लकड़ी और गैर-लकड़ी वन उत्पाद (एनटीएफपी) जैसे औषधीय पौधे, फल और मेवे जैसे आवश्यक संसाधन प्रदान करते हैं। कई ग्रामीण समुदाय अपनी आजीविका के लिए इन संसाधनों पर निर्भर हैं, एनटीएफपी घरेलू आय में महत्वपूर्ण योगदान देता है। बांस उद्योग ने, विशेष रूप से, हाल के वर्षों में प्रमुखता प्राप्त की है। टिकाऊ प्रथाओं के बारे में बढ़ती जागरूकता के साथ, स्थानीय कारीगर ऐसे उत्पाद बना रहे हैं जो घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय दोनों बाजारों की जरूरतों को पूरा करते हैं। यह न केवल स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं का समर्थन करता है बल्कि बांस के जंगलों के संरक्षण को भी प्रोत्साहित करता है।

सांस्कृतिक महत्व: अपने पारिस्थितिक और आर्थिक महत्व के अलावा, बिहार के जंगल कई समुदायों के लिए सांस्कृतिक महत्व रखते हैं। वे अक्सर स्थानीय परंपराओं, रीति-रिवाजों और लोककथाओं से जुड़े होते हैं। उदाहरण के लिए, कुछ पेड़ों को पवित्र माना जाता है और स्थानीय समुदायों द्वारा उनकी पूजा की जाती है। जंगल कला, साहित्य और संगीत के लिए प्रेरणा स्रोत के रूप में काम करते हैं, जो लोगों और उनके पर्यावरण के बीच गहरे संबंध को दर्शाते हैं।

जलवायु परिवर्तन शमन: वन कार्बन सिंक के रूप में कार्य करके जलवायु परिवर्तन शमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं, जिससे ग्लोबल वार्मिंग से निपटने में मदद मिलती है। बिहार में, वनों की कार्बन पृथक्करण क्षमता को बढ़ाने के लिए वनीकरण और पुनर्वनीकरण पहल आवश्यक है। ये प्रयास न केवल जलवायु परिवर्तन शमन में योगदान करते हैं बल्कि मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार, कटाव को कम करने और परिदृश्य में जल प्रतिधारण को बढ़ाने में भी योगदान देते हैं।

चुनौतियां और भविष्य की दिशाएं: अपने महत्व के बावजूद, बिहार के जंगलों को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। वनों की कटाई, कृषि के लिए भूमि रूपांतरण और अवैध कटाई से वन पारिस्थितिकी तंत्र को खतरा बना हुआ है। इन मुद्दों के समाधान के लिए, स्थायी वन प्रबंधन प्रथाओं को बढ़ावा देना और वन क्षेत्रों की रक्षा करने वाली नीतियों को मजबूत करना महत्वपूर्ण है। शिक्षा और जागरूकता कार्यक्रम भी स्थानीय समुदायों के बीच नेतृत्व की भावना को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। संरक्षण प्रयासों और टिकाऊ कटाई प्रथाओं में स्थानीय आबादी को शामिल करने से यह सुनिश्चित होगा कि वनों के लाभ भविष्य की पीढ़ियों के लिए संरक्षित रहेंगे।

निष्कर्ष: बिहार के जंगल अमूल्य संपत्ति हैं जो राज्य की जैव विविधता, अर्थव्यवस्था और सांस्कृतिक विरासत में योगदान करते हैं। स्थानीय समुदायों और पर्यावरण की भलाई सुनिश्चित करने के लिए इन वनों की सुरक्षा और स्थायी प्रबंधन आवश्यक है। सरकार, गैर सरकारी संगठनों और समुदायों के ठोस प्रयासों से, बिहार एक स्थायी भविष्य की दिशा में काम कर सकता है जो अपने समृद्ध वन पारिस्थितिकी तंत्र का सम्मान करता है।

जैन बीज भण्डार
एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510
04/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

गर्भवती गायों और भैंसों का वैज्ञानिक आहार

डॉ. अनुज सिंह (सहायक प्राध्यापक) पशु पोषण विभाग, COVAS, किशनगंज (बिहार)
डॉ. किरण कुमारी (सह प्राध्यापक) पशु पोषण विभाग, COVAS, किशनगंज (बिहार)
डॉ. वंदना सिंह (सहायक प्रोफेसर) VPT, COVAS, किशनगंज (बिहार)

भारत में पशुपालन एक महत्वपूर्ण कृषि गतिविधि है, जो न केवल किसानों की आय का स्रोत है, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत दुनिया में दूध उत्पादन में पहले स्थान पर है, और यहां की अधिकांश ग्रामीण आबादी अपने जीवन यापन के लिए दूध और दूध से बने उत्पादों पर निर्भर है। हालांकि, गर्भवती गायों और भैंसों की देखभाल और पोषण के मामले में भारत में कई चुनौतियाँ हैं।

विकसित देशों की तुलना में, जहां वैज्ञानिक प्रबंधन और उच्च तकनीक का इस्तेमाल करके पशुपालन को एक व्यवस्थित उद्योग बनाया गया है, भारत में कई पारंपरिक तरीके अपनाए जाते हैं। विकसित देशों में, जैसे कि अमेरिका और नीदरलैंड, पशुओं के लिए विशेष आहार योजनाएं और तकनीकी सहायता प्रदान की जाती है, जिससे उनकी उत्पादकता और स्वास्थ्य में वृद्धि होती है। वहीं, भारत में, अक्सर पशुपालक पुराने तरीकों पर निर्भर रहते हैं, जिससे उत्पादकता में कमी आती है और पशुओं के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह स्थिति तब और भी गंभीर हो जाती है जब गर्भवती गायों और भैंसों की बात आती है, क्योंकि इस दौरान उन्हें विशेष पोषण की आवश्यकता होती है। वैज्ञानिक आहार प्रबंधन अपनाने से न केवल मां और उसके नवजात के स्वास्थ्य में सुधार होगा, बल्कि दूध उत्पादन और कृषि उत्पादकता में भी वृद्धि हो सकेगी। इसलिए, इस लेख में हम गर्भवती गायों और भैंसों के लिए एक वैज्ञानिक आहार योजना पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

गर्भावस्था के चरण: गर्भावस्था को तीन मुख्य चरणों में विभाजित किया जा सकता है, जिनमें प्रत्येक चरण की पोषण संबंधी आवश्यकताएं भिन्न होती हैं:

1.प्रारंभिक गर्भावस्था (0-3 महीने)

- **विशेषताएं:** इस चरण में गर्भाधारण के बाद का समय होता है। मां का शरीर नवजात के विकास के लिए आवश्यक पोषक तत्वों को संचित करना शुरू करता है।
- **पोषण:** उच्च गुणवत्ता वाला चारा, जैसे कि हरी चारा और सूखी घास, विशेष रूप से फायदेमंद है।
- **प्रोटीन की आवश्यकता:** 14-16% प्रोटीन का सेवन सुनिश्चित करना चाहिए।

2.मध्य गर्भावस्था (3-6 महीने)

- **विशेषताएं:** इस चरण में बछड़े या बकरी का विकास तेजी से होता है, और मां को अधिक पोषण की आवश्यकता होती है।
- **पोषण:** चारे में अधिक कार्बोहाइड्रेट, जैसे जौ और चोकर, शामिल करना चाहिए।
- **खनिज:** विशेष रूप से कैल्शियम और फास्फोरस की मात्रा बढ़ाना चाहिए, जो नवजात के विकास के लिए आवश्यक होते हैं।

3.अंतिम गर्भावस्था (6-9 महीने)

- **विशेषताएं:** इस समय नवजात तेजी से विकसित होता है, और मां को उच्च ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

पोषण: उच्च कैलोरी वाला आहार, जैसे कि तेल, अनाज, और पत्तेदार सब्जियाँ, शामिल करें।

विटामिन्स और मिनरल्स: विशेष ध्यान दें कि विटामिन ए, डी, और ई की पर्याप्त मात्रा मिले।

आवश्यक पोषक तत्व

1.प्रोटीन

- प्रोटीन का सेवन मां के मांसपेशियों और ऊतकों के विकास के लिए महत्वपूर्ण है।

अच्छे स्रोत: सोया बीन, मूँगफली का खल, और खाद्य उत्पाद जैसे खल।

कार्बोहाइड्रेट

- यह ऊर्जा का मुख्य स्रोत होता है और मां की कार्यशीलता को बनाए रखने में मदद करता है।
- **अच्छे स्रोत:** अनाज, जैसे जौ, गेहूँ, और चोकर।

3.वसा:

- वसा ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्रोत है और गर्भावस्था के अंतिम चरण में इसकी अधिक आवश्यकता होती है।
- **अच्छे स्रोत:** वनस्पति तेल और पशु वसा।

4.खनिज और विटामिन:

- **कैल्शियम:** हड्डियों के विकास के लिए महत्वपूर्ण।
- **फास्फोरस:** कोशिकाओं और ऊतकों के लिए आवश्यक।
- **विटामिन ए:** दृष्टि और प्रतिरक्षा के लिए आवश्यक।
- **विटामिन डी:** कैल्शियम के अवशोषण में मदद करता है।

पानी की आवश्यकता: गर्भवती गायों और भैंसों को हमेशा ताजा और स्वच्छ पानी मिलना चाहिए। पानी की कमी से उनकी स्वास्थ्य स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। सामान्यतः, एक गर्भवती गाय को प्रतिदिन लगभग 50-70 लीटर पानी की आवश्यकता होती है।

सही आहार की योजना

गुणवत्ता वाला चारा: हरी चारा, सूखी घास और सायलाज का संतुलित मिश्रण प्रदान करें। यह न केवल पोषण में मदद करता है, बल्कि पशु के पेट को भी संतुलित रखता है।

कस्टम मिश्रण: पशु की उम्र, वजन और गर्भावस्था के चरण के अनुसार आहार में परिवर्तन करें। यह महत्वपूर्ण है कि पशु को उसके विशेष आवश्यकताओं के अनुसार पोषण मिले।

संवर्धक आहार: जैसे कि सोया बीन, खल, और अन्य प्रोटीन स्रोत शामिल करें। इनसे आहार की गुणवत्ता में सुधार होगा और मां के दूध उत्पादन में वृद्धि होगी।

सप्ताह में एक बार: खनिज मिश्रण का सेवन कराना न भूलें, जो कैल्शियम, फास्फोरस और अन्य आवश्यक तत्वों का समृद्ध स्रोत हो।

प्रबंधन तकनीक

नियमित स्वास्थ्य जांच: गर्भवती गायों और भैंसों की नियमित रूप से स्वास्थ्य जांच करानी चाहिए, जिससे किसी भी बीमारी या पोषण की कमी का पता चल सके।

साफ-सुथरा वातावरण: एक स्वच्छ और हवादार स्थान पर रखने से तनाव कम होता है और रोगों का जोखिम भी घटता है।

विश्राम का स्थान: गर्भवती पशुओं हेतु आरामदायक स्थान उपलब्ध कराना चाहिए जहां वे बिना किसी बाधा के आराम कर सकें।

निष्कर्ष: गर्भवती गायों और भैंसों के वैज्ञानिक आहार प्रबंधन से न केवल उनकी स्वास्थ्य स्थिति में सुधार होता है, बल्कि यह उनके नवजात के विकास में भी सहायक होता है। सही पोषण और देखभाल से दूध उत्पादन और कृषि उत्पादकता में वृद्धि की जा सकती है। किसानों को चाहिए कि वे वैज्ञानिक तरीकों को अपनाकर अपने पशुओं की देखभाल करें, जिससे उनकी आय और उत्पादकता दोनों में वृद्धि हो सके। इससे न केवल उनके व्यवसाय में लाभ होगा, बल्कि पशुपालन के क्षेत्र में समग्र सुधार भी होगा।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

खेत में कुशलता से काम करने के लिए बेलर की देखभाल: एवं रख-रखाव के प्रमुख सुझाव

डॉ. विवेकानंद सिंह एस.आर.एफ., फार्म मशीनरी और पावर इंजीनियरिंग विभाग, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि वि.वि., पूसा, समस्तीपुर (बिहार)

ई. शैलेश कुमार सहायक प्राध्यापक, फार्म मशीनरी और पावर इंजीनियरिंग विभाग, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर

डॉ. पी.के. प्रणव प्राध्यापक सह प्रमुख, फार्म मशीनरी और पावर इंजीनियरिंग विभाग, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर

फसल के यांत्रिक कटाई हेतु हार्वेस्टर एक लोकप्रिय मशीन के रूप में प्रयोग में लाया जा रहा है। इस मशीन द्वारा फसल समय कटाई एवं मड़ाई एक साथ हो जाने के कारण समय, पैसे एवं श्रम की बचत होती है। इस मशीन द्वारा दाने को अलग करने के बाद बचे हुए फसल अवशेष खेतों में ही गिरा दी जाती है। फसलस्वरूप अगले फसल लगाने की तैयारी में यह बाधक होता जा रहा है। ट्रैक्टर चालित बेलर इन अवशेषों के प्रबंध हेतु एक महत्वपूर्ण यंत्र है जिसके द्वारा खेती में बिखरे हुए फसल अवशेषों को अपने आवश्यकतानुसार गठरी के रूप में बांध दिया जाता हैं। बेलर का संचालन एक व्यवसायिक रूप लेता जा रहा है। अतः इसके परिचालन एवं रखरखाव की जानकारी महत्वपूर्ण है।

बेलर क्या है? बेलर, किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण कृषि औजार है जो फसलों को सहारा देने का कार्य करता है। यह एक मशीन है जो फसलों की कटाई को सुरक्षित रूप से बाँधकर उन्हें बेलों में परिणामित रूप से पैक करने में मदद करती है। बेलर ने खेती में फसलों की प्रबंधन प्रक्रिया को सुगम और व्यावसायिक बना दिया है। बेलर की मशीनें लगभग एक दशक से हैं, और वर्तमान में उनमें से लगभग 2,000 पंजाब में काम करती हैं। इनमें से 1,268 को केंद्र की फसल अवशेष प्रबंधन (सीआरएम) योजना के तहत अत्यधिक सब्सिडी (50-80%) दी जाती है।

बेलर का कामकाज: बेलर का प्रमुख कार्य है कटी हुई फसल को बंडलों में बाँधना या पैक करना। इसमें फसल को बाँधने हेतु विभिन्न प्रकार के सिलेंडर और चाकों का संयोजन होता है जो फसल को एक सुरक्षित और समृद्धि भरा पैकेट में बदल देता है।

महत्व:

1.समय की बचत: बेलर का उपयोग किसानों को कई घंटों की कड़ी मेहनत से बचाता है जो उन्हें अन्य कृषि कार्यों में लगाया जा सकता है।

2.फसल सुरक्षा: बेलर फसलों को सुरक्षित रूप से बाँधकर उन्हें विभिन्न परिस्थितियों से बचाता है, जैसे कि बर्फबारी और बारिश।

3.बाजार में अच्छी मूल्य: बेले जाने वाली फसलें बाजार में अधिक मूल्य प्राप्त करती हैं, क्योंकि वे उच्च गुणवत्ता और सुरक्षित रूप से पैक की जाती हैं।

4.कामकाजी मशीन: बेलर किसानों के लिए एक कामकाजी मशीन है जो उन्हें फसलों की प्रबंधन प्रक्रिया को सहज और दक्षता से करने में मदद करती है।

इस प्रकार, बेलर का कामकाज और महत्व हमारे कृषि तंत्र को और भी सुदृढ़ और प्रभावी बनाता है, जिससे किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्त हो सकता है और उनका काम सुरक्षित और सरल हो सकता है।

विभिन्न प्रकार के बेलरों का अध्ययन: बेलर खेती में फसलों को सही समय पर बेलने में सहायक होने वाली मशीन है, और इसका अध्ययन करके हम विभिन्न प्रकारों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। स्टैंडर्ड बेलर, जिसमें गुणवत्ता और प्रदर्शन की उच्चता है, छोटे से बड़े खेतों के लिए उपयुक्त है और राउंड बेलर, जो बारिशील खेतों के लिए उपयुक्त होता है, इन्हीं में से कुछ मुख्य प्रकार हैं। स्मॉल स्केल बेलर छोटे से मध्यम आकार के खेतों के लिए है और इसकी सामग्री की खपत में बचत होती है, जबकि लार्ज स्केल बेलर बड़े खेतों के लिए उपयुक्त है और इसमें अधिक क्षमता और तेजी होती है। इस प्रकार, अलग-अलग बेलरों का अध्ययन करना किसानों को उनकी खेती की आवश्यकताओं के अनुसार सही मॉडल का चयन करने में मदद करता है।

विभिन्न प्रकार के बेलर

बेलर का सही चयन: बेलर का सही चयन करना किसान के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह न केवल कृषि कार्यों को सरल बनाता है, बल्कि उसके उत्पन्न की गई फसलों की सुरक्षा और मूल्य को भी प्रभावित करता है। निम्नलिखित हैं कुछ महत्वपूर्ण प्रक्रियाएं जो बेलर का सही चयन करने में मदद करती हैं:

खेतों के आधार पर बेलर का चयन: • खेत का आकार और प्रकृति बहुत महत्वपूर्ण हैं। छोटे खेतों के लिए स्मॉल स्केल बेलर अधिक उपयुक्त हो सकता है, जबकि बड़े खेतों के लिए लार्ज स्केल बेलर आवश्यक हो सकता है।

ट्रैक्टर की क्षमता और अन्य परिस्थितियों का मूल्यांकन: • ट्रैक्टर की क्षमता को ध्यान में रखकर बेलर का चयन करना महत्वपूर्ण है। एक उच्च क्षमता वाले ट्रैक्टर के साथ संगत बेलर का चयन करना सुनिश्चित करेगा कि खेती के कार्य को सही समय पर सही तरीके से किया जा सकता है। • ट्रैक्टर की उच्चतम स्पीड और ताकत की आवश्यकता को ध्यान में रखकर बेलर का चयन करना आवश्यक है। • अन्य परिस्थितियों जैसे कि बजट, उपलब्धता, और बेलर के फीचर्स का मूल्यांकन करना भी महत्वपूर्ण है।

बेलर का सही उपयोग: बेलर का सही उपयोग करना किसान के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह न केवल फसलों को सुरक्षित बनाए रखता है, बल्कि सुनिश्चित करता है कि खेती की उत्पन्नता में वृद्धि हो। निम्नलिखित हैं बेलर का सही उपयोग के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय:

सही समय पर बेलना की प्रक्रिया: • फसल को बेलने का सही समय बहुत महत्वपूर्ण है। अगर बेलना बहुत जल्दी हो जाए तो फसल की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है और अगर बहुत देर से होता है तो फसल की चोटी जल सकती है। • विभिन्न प्रकार की फसलों के लिए सही समय का चयन करना अवश्यक है, जो न केवल फसल की गुणवत्ता को बनाए रखता है, बल्कि उसकी मार्जिन को भी बनाए रखता है।

2.बेलर का सही तरीके से सेटअप: • बेलर को सही से सेटअप करना महत्वपूर्ण है ताकि फसल सही तरीके से बाँधी जा सके। • सही सेटअप से सुनिश्चित होता है कि बेलर सही मात्रा में फसल लेता है और बेलों को सुरक्षित रूप से बाँधता है। •

सही समय पर बेलना और बेलर का सही तरीके से सेटअप करना सुनिश्चित करता है कि फसल सुरक्षित रूप से और उच्च गुणवत्ता में बाँधी जा सकती है, जिससे किसान अधिक मूल्य प्राप्त कर सकता है ।

बेलर रखरखाव के मूल तथ्य:

1.ऑपरेटरों को प्रशिक्षित करें: बेलर प्रदर्शन की सही चालने के लिए ऑपरेटरों को उचित प्रशिक्षण देना महत्वपूर्ण है।

2.निर्माता की चेकलिस्ट देखें: निर्माता की चेकलिस्ट के अनुसार निरीक्षण करना और नियमित रूप से बेलर की देखभाल करना आवश्यक है।

3.सामान्य गृह व्यवस्था: बेलर के आसपास की सफाई, रैम, सेंसर, और तेल कूलर के पीछे विशेष ध्यान देना चाहिए।

4.तेल रखरखाव कार्यक्रम: तेल की गुणवत्ता की निगरानी रखने के लिए नियमित तेल नमूने लेना और विशेषज्ञ कंपनी से विश्लेषण करना चाहिए।

5.कतरनी ब्लेड निकासी का निरीक्षण: कतरनी ब्लेड की निकासी को चमकाना और यह सुनिश्चित करना कि वे ठीक से काम कर रहे हैं, इस पर ध्यान देना चाहिए।

6.सभी घिसे-पिटे हिस्सों की जाँच: बेलर के घिसे-पिटे हिस्सों की निगरानी रखना और नियमित मरम्मत करना, विशेषकर लाइनर और ऑटो टियर की जाँच, आवश्यक है।

करो और ना करो: बेलर संचालन और रखरखाव के संबंध में यहां कुछ बुनियादी क्या करें और क्या न करें के बारे में

ये करें:

बेलर का निरीक्षण और सफाई • रोजाना निरीक्षण करें और साफ़ रखें, खासकर गर्मी के दिनों में। • कीटाणुओं और धूल से मुक्त रखने के लिए गर्म बेलर की विशेष ध्यान दें। • कूलर और मोटर की नियमित सफाई को बढ़ावा दें।

स्पेयर पार्ट्स की सबसे करीबी सौंदर्यशास्त्री से खरीदारी • सूची बनाएं और नियमित अंतराल से स्पेयर पार्ट्स की खरीदारी करें।

3.निवारक रखरखाव की योजना • नियमित निवारक रखरखाव कार्यक्रम बनाएं और विभिन्न घटकों की निगरानी रखें।

वायर टायर की सुरक्षित रखरखाव: वायर टायर को सुरक्षित स्थान पर रखें ताकि उनमें खराबी न हो।

निवारक और प्रत्याशित प्रमुख रखरखाव की योजना: योजना बनाएं ताकि बेलर को अच्छे स्वास्थ्य में रखा जा सके।

न करें:

चक्कर और फ्लो रेट समस्याएं: • नियमित चक्करों और फ्लो रेट सेंसर्स की साफ़-सफाई न न करें। • चक्करों की सही स्थिति में न होने की नजरबंदी न करें।

बेलने की समस्याएं: • बेलने में तकनीकी समस्याओं को नजरअंदाज न करें।

सुरक्षा मामले

बेलर का सुरक्षित उपयोग के लिए बेहतरीन अनुसंधान: बेलर का सुरक्षित उपयोग सुनिश्चित करने के लिए बेहतरीन अनुसंधान एक महत्वपूर्ण पहलु है। यह अनुसंधान नवीनतम तकनीकी विकासों का परीक्षण करता है और बेलर को सुरक्षित बनाए रखने के लिए उन्नत सुरक्षा तंत्रों का अनुसरण करता है। किसानों को नए सुरक्षा उपायों और तकनीकों के बारे में शिक्षित करना भी शामिल है ताकि उन्हें बेलर का सही तरह से संचालन करने में आसानी हो।

यातायात नियमों का पालन करने का महत्व: बेलर का सुरक्षित उपयोग हेतु यातायात नियमों का पूरा करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। खेती क्षेत्रों में बेलर का संचालन करते समय यातायात नियमों का पूरा करना सुरक्षितता को बनाए रखने में मदद करता है। किसानों को सड़कों पर सुरक्षित रूप से चलने और अन्य यातायात के साथीयों के साथ सही साझा करने के लिए शिक्षित किया जाना चाहिए। इससे अनचाही घटनाओं से बचा जा सकता है और खेती क्षेत्रों में सुरक्षितता का एक माहौल बनाए रखा जा सकता है। इसके अलावा, किसानों को बेलर के संचालन से जुड़ी सुरक्षा सूचनाओं को ध्यानपूर्वक पढ़ने और समझने हेतु प्रेरित किया जाना चाहिए।

बेलर में नई तकनीकों का अध्ययन: आधुनिक कृषि में तेजी से बदलती तकनीकों का सार्थक अध्ययन करना बेलर के क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण है। नई तकनीकें किसानों को सुरक्षित, दक्ष और उत्कृष्टता से भरी खेती की दिशा में आगे बढ़ने में सहायक हो सकती हैं। इस अध्ययन में, हम नवीनतम सेंसिंग तकनीक, आटोमेटेड सिस्टम्स, और इंटेलिजेंट कंट्रोल्स जैसी तकनीकों का विशेष ध्यान देंगे जो बेलर को और भी सुरक्षित और उत्कृष्ट कृषि कार्यों के लिए बना सकती हैं।

सुधारित तकनीकी क्षमता के साथ नए मॉडल्स की जानकारी: नए मॉडल्स और तकनीकी विकास के साथ, बेलर की क्षमता में सुधार हो रही है जो किसानों को और भी उत्कृष्टता और सुरक्षा प्रदान कर सकती है। इस अध्ययन में, हम विभिन्न नए मॉडल्स की जानकारी प्रदान करेंगे जो उन्नत तकनीकी और बेहतरीन कार्यान्वयन के साथ आ रहे हैं। यह शामिल करेगा कृषि उत्पादकता को बढ़ाने हेतु नई और विशेष तकनीकी सुविधाएं जो किसानों को समझदार और उत्कृष्ट तरीके से कृषि करने में सहायक हो सकती हैं।

समापन: बेलर रखरखाव का सही से पालन करना खेती में उपयोगीता और लाभ को महसूस कराता है। एक अच्छे बेलर की सही देखभाल और निरीक्षण से किसान न केवल समय और ऊर्जा की बचत करता है, बल्कि उन्हें अधिक उत्पादकता और अच्छी गुणवत्ता के साथ फसलों को तैयार करने का भी मौका मिलता है। यह एक सुरक्षित और सही तरीके से चलाया गया बेलर किसान को उन्नत खेती तक पहुंचने में मदद कर सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

बछड़ों में हाइपोमैग्नेसिमिया

बिपिन कुमार, मृत्युंजय कुमार
सह-प्राध्यापक, पशु औषधि विभाग
आशीष त्रिपाठी, सुन्दिता कुमारी
सुधांषु कुमार (स्नातकोत्तर छात्र),
बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय (बिहार पशु विज्ञान विश्वविद्यालय) पटना

हाइपोमैग्नेसिमिया, जिसे अक्सर "घास टेटनी" या "घास चक्कर" के रूप में जाना जाता है, गाय और भैंस के बछड़ों को प्रभावित करने वाला एक चयापचय विकार है। यह रक्त में मैग्नीशियम के निम्न स्तर के कारण होता है और यदि इसे समय पर संबोधित नहीं किया गया तो इसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं। किसानों के लिए हाइपोमैग्नेसिमिया के कारणों, लक्षणों और उपचार विकल्पों को समझना बहुत महत्वपूर्ण है ताकि वे अपने पशुओं के स्वास्थ्य और उत्पादकता को सुनिश्चित कर सकें।

रोग का कारण

हाइपोमैग्नेसिमिया तब होता है जब आहार में मैग्नीशियम का सेवन पशु की शारीरिक जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं होता है। कई कारक इस कमी में योगदान कर सकते हैं:

1.हरी-भरी चरागाह पर चरना: युवा, तेजी से बढ़ती घास में अक्सर मैग्नीशियम की कम मात्रा और पोटेशियम व नाइट्रोजन की उच्च मात्रा होती है, जो मैग्नीशियम के अवशोषण में बाधा डाल सकती है।

2.मौसम की स्थिति: ठंड और शरद ऋतु में चरागाह में मैग्नीशियम की मात्रा कम हो सकती है, जिससे हाइपोमैग्नेसिमिया का जोखिम बढ़ जाता है।

3.मिट्टी: जो मिट्टी अम्लीय या मैग्नीशियम में कम होती है, वह अपर्याप्त मैग्नीशियम स्तर वाली चारा पैदा कर सकती है।

4.उच्च मांग: दुग्धपान कर रहे पशुओं की मैग्नीशियम की उच्च आवश्यकता होती है, जिससे वे कमी के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं।

लक्षण

हाइपोमैग्नेसिमिया के नैदानिक लक्षण तेजी से विकसित हो सकते हैं जैसे:

1.बेचैनी: प्रभावित पशु बेचैन या उत्तेजित दिखाई दे सकते हैं।

2.मांसपेशियों में कंपकंपी और झटके: विशेष रूप से सिर और गर्दन के आसपास मांसपेशियों में कंपकंपी आम है।

3.लड़खड़ाहट और अनियंत्रित चाल: बछड़ों में समन्वय की कमी हो सकती है, जो एक लड़खड़ाते चलने के रूप में बढ़ सकती है।

4.दौरे: गंभीर मामलों में, पशु को मिर्गी के दौरे पड़ सकते हैं।

5.तेजी से सांस लेना और बढ़ी हुई हृदय गति हाइपोमैग्नेसिमिया के उन्नत संकेत हैं।

6.मूर्छा और मृत्यु: बिना उपयुक्त उपचार के, यह स्थिति

जल्दी मूर्छा और मृत्यु की ओर ले जा सकती है।

निदान: हाइपोमैग्नेसिमिया का निदान लक्षणों और प्रयोगशाला परीक्षणों के संयोजन से किया जाता है:

1.रक्त परीक्षण: रक्त में मैग्नीशियम स्तर को मापना निदान का सबसे प्रत्यक्ष तरीका है। सामान्य सीमा से नीचे के स्तर हाइपोमैग्नेसिमिया की पुष्टि करते हैं।

2.शव परिक्षण : जिन मामलों में पशु मर गए हैं, उनमें ऊतक के नमूने (जैसे कि मस्तिष्कमेरु द्रव या आंख का जलीय हास्य) मैग्नीशियम सामग्री के लिए परीक्षण किए जा सकते हैं।

रोकथाम

बछड़ों के आहार और पर्यावरण का प्रबंधन करके हाइपोमैग्नेसिमिया के रोकथाम की जा सकती है:

1.आहार पूरक: मैग्नीशियम ऑक्साइड या मैग्नीशियम सल्फेट जैसे मैग्नीशियम पूरक प्रदान करना पशुओं की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने में मदद कर सकता है।

2.चरागाह प्रबंधन: ऐसे चरागाहों पर पशु चराने से बचें जो हरे-भरे और तेजी से बढ़ रहे हैं। जोखिम को कम करने के लिए पुराने, अधिक परिपक्व चारा प्रदान करना उचित है।

3.मिट्टी परीक्षण और उर्वरीकरण: नियमित मिट्टी परीक्षण और मैग्नीशियम उर्वरकों का अनुप्रयोग चारे में मैग्नीशियम की मात्रा में सुधार होता है।

4.चारे में योजक: चारे या खनिज नमक में मैग्नीशियम मिलाना इस आवश्यक खनिज के अतिरिक्त स्रोत प्रदान करता है।

5.मौसम की स्थिति की निगरानी करें: ठंडे, गीले मौसम की अवधि के दौरान सतर्क रहें जब हाइपोमैग्नेसिमिया का जोखिम बढ़ जाता है।

उपचार

हाइपोमैग्नेसिमिया के लक्षण दिखाने वाले पशुओं के लिए तत्काल उपचार आवश्यक है:

1.मैग्नीशियम सल्फेट को शिरा में देने से रक्त मैग्नीशियम स्तर को बहाल करने का सबसे तेज़ तरीका है।

2.इंजेक्शन: कम गंभीर मामलों में, त्वचा में मैग्नीशियम के इंजेक्शन प्रभावी हो सकते हैं।

3.खाद्य पूरक: मैग्नीशियम पूरक का उपयोग तीव्र उपचार और चल रहे प्रबंधन के साथ किया जा सकता है।

4.उपयुक्त निदान और उपचार प्रोटोकॉल के लिए हमेशा एक पशु चिकित्सक से परामर्श करें।

निष्कर्ष

हाइपोमैग्नेसिमिया एक गंभीर स्थिति है जिसे गाय और भैंस के बछड़ों में गंभीर स्वास्थ्य प्रभावों को रोकने के लिए शीघ्र ध्यान देने की आवश्यकता होती है। कारणों और लक्षणों को समझकर और प्रभावी रोकथाम और उपचार रणनीतियों को लागू करके, किसान इस संभावित जानलेवा विकार से अपने पशुधन की रक्षा कर सकते हैं। नियमित निगरानी और अच्छा चरागाह प्रबंधन गाय और भैंस के झुंडों के स्वास्थ्य और उत्पादकता को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
बिहार

हे: दुधारू पशुओं के लिए वर्ष भर हरे चारे का उत्तम विकल्प

डॉ. अंजली कुमारी सहायक प्राध्यापक, सह कनीय वैज्ञानिक, पशुधन उत्पादन एवं प्रबंधन, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर (बिहार)

मनीष कुमार, डॉ. श्वेता कुमारी सहायक प्राध्यापक सह कनीय वैज्ञानिक मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर

डॉ. रीना रॉय सहायक प्राध्यापक सह कनीय वैज्ञानिक सस्यविज्ञान, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर

डॉ. कुमारी चंद्रकला सहायक प्राध्यापक सह कनीय वैज्ञानिक, बिहार पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, पटना

भारत एक कृषि प्रधान देश है। हमारा देश दुग्ध उत्पादन में वर्षों से प्रथम स्थान पर है। दुग्ध उत्पादन व्यवसाय को महत्व देते हुए हमारे किसान भाईओं का रुझान अधिक दूध देने वाली शंकर एवं फ्रिसियन गायों की ओर तेजी से बढ़ रहा है। इन गायों में अधिक दूध देने एवं पर्यावरणीय तनाव के कारण पोषक तत्वों की आवश्यकता बहुतायत मात्रा में होती है। हरा चारा गायों के लिए पोषक तत्वों का सस्ता और आसानी से उपलब्ध स्रोत है। जो खेतों में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहता है। अधिक दूध देने वाली गायों के प्रबंधन एवं दुग्ध उत्पादन में वर्ष भर चारे की उपलब्धता एक प्रमुख चुनौती है। एक पशु को प्रतिदिन 30.65 किलोग्राम चारा मिलता है जो पशु की आवश्यकता की दृष्टिकोण से पर्याप्त नहीं है। यदि एक बड़े पशुधन में प्रतिदिन 40 किलोग्राम हरे चारे की आवश्यकता होती है तो ऐसी परिस्थिति में भारत मे 9110 मिलियन टन हरे चारे की वार्षिक आवश्यकता होती है। प्रायः हमारे खेत में हरा चारा भारी मात्रा में होता है लेकिन हमारे पशुपालन में बड़ी समस्या यह है कि हरे चारे की आपूर्ति पूरे वर्ष नियमित रूप से नहीं होती है। वर्ष भर हरे चारे की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए पोषक तत्वों से भरपूर साइलेज एवं हे को उत्तम विकल्प के रूप में उपयोग किया जाता है। हे तथा साइलेज में हे आसानी से बनाया जाने वाला हर मौसम में उपलब्ध हरा चारा है। यह लेख इसी के प्रबंधन को ध्यान में रख कर लिखा गया है।

हे बनाने की प्रक्रिया

हे एक ऐसी प्रक्रिया से बनता है जिसमे चारा लम्बे समय तक संरक्षित रहता है। साथ ही साथ इस प्रक्रिया में शुष्क पदार्थ एवं पोषक तत्वों की न्यूनतम हानि होती है। इस प्रक्रिया में चारे को इस हद तक सुखाया जाता है कि उसमें नमी की मात्रा 70-90 प्रतिशत से घटकर 10-15 प्रतिशत या उससे भी कम हो जाती है। कम नमी होने के कारण चारे के खराब होने की संभावना न्यूनतम होती है। हे प्रायः फलीदार फसलों से बनाई जाती है जो प्रोटीन और खनिजों से भरपूर होती हैं। हे बनाने के लिए बरसीम, लूसर्न, ग्वार, राई और लोबिया जैसी फलीदार फसलें बहुत अच्छी होती हैं। सूखे फलीदार चारे की फसल में खनिज और विटामिन के अलावा प्रोटीन भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है। सूखने के पश्यात यह खनिज लवण के साथ साथ प्रोटीन के भी अच्छे स्त्रोत के रूप में पशुओं के लिए उपलब्ध होता है। विभिन्न चारे की फसलों

को काटने और भंडारण करने का एक विशेष तरीका है। हरा चारा जब नरम होता है तभी हे बनाने के लिए उपयुक्त होता है। आमतौर पर हरे चारे में नमी की मात्रा 80-90 प्रतिशत होती है लेकिन इनका भंडारण करने के लिए नमी 15 प्रतिशत से कम होनी चाहिए। कम नमी फसलों मे बैक्टीरिया और कवक से नुकसान पहुंचने नहीं देता है।

हे बनाने के लिए फसलों का चुनाव: हे फलीदार और गैर फलीदार दोनों प्रकार की फसलों से बनाया जा सकता है। हे बनाने के लिए ल्यूसर्न (अल्फाल्फा), रोडे घास, बरसीम, जइ और सूडान चारा सबसे उपयुक्त मानी जाती हैं। अल्फाल्फा चारा को हे बनाने के लिए सर्वोत्तम चारा माना जाता है।

हे बनाने के लिए महत्वपूर्ण बिंदु

1. हे बनाने के लिए तने तथा अधिक पत्तियों वाली फसलों का चयन करना चाहिए क्योंकि पत्तियां अधिक पौष्टिक होती हैं।
2. फसल की कटाई फूल आने के समय (जब फूल आना शुरू हो) करनी चाहिए क्योंकि जब फसल पकती है तो उसमें लिग्निन की मात्रा बढ़ जाती है और पोषक तत्व कम हो जाते हैं।
3. जहां तक समय की बात है तो फसल की कटाई सुबह जल्दी करनी चाहिए क्योंकि इस समय ओस सूख चुकी होती है। चारे को फूल आने से पहले ही काट देना चाहिए।
4. सुखाने की प्रक्रिया के दौरान हरे रंग के पदार्थ का न्यूनतम नुकसान होना चाहिए।
5. चारे को यथाशीघ्र सुखा लेना चाहिए तीव्र गति से सूखने से पोषक तत्वों के संरक्षण में मदद मिलती है।
6. उचित उपचार के लिए फसल को कभी-कभी झुका देना चाहिए।
7. भंडारण के लिए चारे में 15% से अधिक नमी नहीं होनी चाहिए।
8. चारे का सुखना चारे को हिलाने की आवृत्ति, सूरज की रोशनी की तीव्रता और हवा की गति पर निर्भर करता है।
9. आमतौर पर चारे को बार-बार हिलाने से यह 3-4 दिन में सूख जाता है।

चारा जब 3-4 दिनों के बाद पूरी तरह से सूख जाए तब सूखे तनों और पत्तियों के मिश्रण को इकट्ठा करके संरक्षित कर लेते है। नमी की मात्रा के परिक्षण के लिए तने को तोड़ कर देखते है यदि सूखा चारा आसानी से टूट जाता है, तो नमी की मात्रा सही है और यह भंडारण के लिए तैयार है। सूखे चारे को एक चौप या भूसे वाले कमरे में संग्रहित किया जा सकता है। सामान्यतः हरे चारे को सुखाने से वजन 15-20 प्रतिशत तथा गुणवत्ता 10-12 प्रतिशत तक कम हो जाती है,। प्रायः चारे में उपलब्ध 85 प्रतिशत शुष्क पदार्थ के आधार पर 10 किलोग्राम सूखा चारा खिलाना 35-40 किलोग्राम हरा चारा खिलाने के बराबर है। पशुओं को गैर फलीदार हरा चारा खिलाने एवं फलीदार सूखा हे खिलाने से भोजन में पोषक तत्वों का सामान्य वितरण होता है।

अच्छी हे का परीक्षण: अच्छी हे का रंग हरा रहता है तथा पत्तियाँ एवं शाखाएँ जुड़ी रहती हैं। इसका आकलन सूखे हे को हाथ में लेकर किया जा सकता है। यदि यह पूर्णतः सूखा लगे तो हे संरक्षण एवं भण्डारण के लिए तैयार है और हे में उच्च पोषक तत्व उपलब्ध हैं। लेकिन कुछ मामलों में पत्तियों और शाखाओं में नमी की मात्रा बहुत अधिक होती है तो अच्छी गुणवत्ता वाली हे पैदा करने के लिए अधिक सुखाने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार हरे चारे की कमी के दौरान पशुओं के राशन में हरे चारे का उपयोग किया जा सकता है।

निष्कर्ष: पशुपालन में लागत का मुख्य भाग लगभग 70-75 प्रतिशत भोजन पर खर्च होता है। आर्थिक रूप से पशुपालन को सतत बनाने में हरे चारे का महत्वपूर्ण योगदान होता है। हरे चारे की कमी के दौरान दाने का अत्यधिक उपयोग होता है। जिससे दूध की लागत बढ़ जाती है। हे बनाना हरे चारे के संरक्षण की दिशा में एक बड़ा कदम है। जो डेयरी व्यवसाय की सफलता में योगदान देता है। आशा है कि यह लेख डेयरी उद्यमियों को फलीदार फसल को हे के रूप में संरक्षित करने और हरे चारे की कमी के मौसम में पौष्टिक उत्पाद का उपयोग करने का एक विचार देगा। इससे दूध उत्पादन की लागत कम हो सकती है और डेयरी फार्मिंग का शुद्ध लाभ बढ़ सकता है। हे बनाने से कटाई और कटाई की दैनिक श्रम लागत भी कम हो जाती है जो कि कम लागत में पशुपालन को सुनिश्चित करने की दिशा में एक प्रयास है।

जय शीतला खाद बीज भण्डार
उच्च क्वालिटी के बीज, कीटनाशक दवाईयां एवं खाद के थोक व खेरीज विक्रेता
विवेक सिंह (लोहगढ़ वाले)
मोबाइल: 9425116760, 7000820097
आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के पास, जवाहरगंज, डबरा, जिला-ग्वालियर
03/2023-24

मध्य भारत में राष्ट्रीय कृषि व उद्यानिकी तकनीकी प्रदर्शनी
G20
Azadi Ka Amrit Mahotsav
आत्मनिर्भर कृषि
आत्मनिर्भर मध्यप्रदेश
विकसित भारत अभियान
1947 TO 2047
9th INTERNATIONAL AGRI & HORTI TECHNOLOGY EXPO
20-21-22 DECEMBER 2024
CIAE Ground, Nabi Bagh, Berasia Road, Bhopal, Madhya Pradesh
India's Leading Exhibition on
Agriculture, Horticulture, Floriculture, Organic Farming, Dairy & Food Technology
ORGANIZE BY:
BME
Bharti Media & Events Pvt. Ltd.
SUPPORTED BY:
CIDF
MEDIA PARTNERS:
मध्य भारत कृषक भारती
KRISHI JAGRAN
कृषि तहलका
कृषक जगत
कृषक दूत
KhetiGaadi
Kisaan Helpline
कृषि परिवर्तन
www.iahtexpo.com
www.bhartimedia.co.in
For Stall Booking: 011-47321635, 9212271729, 9873609092
E-mail: iahtbhopal@gmail.com

Announcing

International Exhibition & Conference on

Agriculture, Horticulture & Dairy Technology

India Farm-Tech

AN EXHIBITION ON FARMING TECHNOLOGY

21-22-23-24 February 2025

Rajmata Vijayaraje Scindia Krishi Vishwavidyalaya (RVSKVV) Campus, Gwalior, Madhya Pradesh, India

LARGEST AND MOST SUCCESSFUL International Agriculture Exhibition of Madhya Pradesh

BOOK YOUR STALL NOW

Our Milestones

Event Organized : 90

Exhibitors : 6500

Exhibition Organizing Expertise : 5+ Countries

Industry Cluster : 10

SCAN ME

For Stall Booking

+91 75677 02022

+91 75677 02023

Organizers: Radeecal communications, Colossal Communications

Jointly Organized By: RVSKVV

Media Partner : मध्य भारत कृषक भारती, कृषक आराधना

agri@farmtechindia.in / www.farmtechindia.in

|| समृद्ध किसान, समृद्ध भारत ||

मा. नरेन्द्र जी मोदी
प्रधानमंत्री

मा. शिवराज सिंह जी चौहान
किसान कल्याण एवं कृषि विकास मंत्री (भारत सरकार)

Organiser
युवा udaan
EDUCATIONAL AND SOCIAL WELFARE SOCIETY
Yuva Udaan Foundation

मा. एदल सिंह जी कंषाना
किसान कल्याण एवं कृषि विकास मंत्री

मा. डॉ. मोहन जी यादव
मुख्यमंत्री
म.प्र.शासन

Yuva Udaan Present
भारत AgriTech
Conference Exhibition Shopping

Central India's Leading Exhibition On
ADVANCED AGRI TECHNOLOGY,
HORTICULTURE, DAIRY &
ORGANIC PRODUCTS

6th EDITION

18-19-20 JANUARY 2025

COLLEGE OF AGRICULTURE GROUND,
INDORE

300+ EXHIBITORS | 5000+ DEALERS | 1,00,000+ PROGRESSIVE FARMERS
20 + WORKSHOP & CONFERENCE | 10 + Gov. Pavilion

In Association With
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS WELFARE
NABARD

BOOK YOUR SPACE NOW
+91-9926111130 ; 9074674426
info@bharatagritech.org
www.bharatagritech.org

शिवा कृषि केन्द्र एण्ड ट्रेडर्स

श्री एन.के. वर्मा

मोबाइल : 9425525951, 9340972086

हमारे यहां उन्नत किस्म के खाद, बीज, कीटनाशक कृषि दवाईयां एवं स्पेयर्स पार्ट्स उपलब्ध हैं

हमारे यहां सभी प्रकार के इलेक्ट्रीकल्स, इलेक्ट्रॉनिक सामान उपलब्ध हैं

तिरंगा चौक, बालाजी जनरल के आगे, नरेन्द्र बैटरी के बगल में, जिला–गरियाबंद (छत्तीसगढ़)

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2022-2024

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

नवम्बर-2024

एक-एक दाना मोती जैसा क्वालिटी के धागे में पिरोया हुआ

एच.आई.-1650

वसुन्धरा™ सीड्स

प्रस्तुत करते हैं प्रमाणित (आधार-F/S)
बीजों की विशाल श्रृंखला

गेहूँ की सबसे नवीनतम किस्म

एच.आई.-1650 (पूसा ओजस्वी)

विशेषताएँ

- कम से अधिक सिंचाई में आने वाली किस्म (3 से 5 सिंचाई)।
- बीज दर काफी कम (लगभग 40 किलो/एकड़)
- 115-120 दिन में जल्दी आने वाली किस्म।
- कलर अच्छा होने से अधिक बाजार भाव। चपाती के लिए सर्वश्रेष्ठ किस्म।
- उत्पादन क्षमता अधिकतम (32-34 क्विंटल/एकड़) या 85 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक बम्पर उत्पादन देने वाली किस्म।

अधिक जानकारी के लिए
9301606161 पर hi मैसेज
करें और सम्पूर्ण जानकारी का लिंक प्राप्त करें।

गेहूँ की शरबती एवं शरबती जैसी किस्में

कम सिंचाई में उच्च उत्पादन क्षमता के साथ

सी.-306, एच.आई.-1655 (हर्षा),
राज-4037, एच.आई.-1544 (पूर्णा),
एच.आई.-1605 (पूसा उजाला),
एच.आई.-1634 (पूसा अहिल्या), एच.आई.-1636 (पूसा बकुला)

गेहूँ की कठिया (ड्यूरम) या मालव राज किस्में

नवीनतम चमत्कारी किस्म एचआई.-8830 (पूसा कीर्ति)
एच.आई.-8759 (पूसा तेजस)
एच.आई.-8713 (पूसा मंगल)
एच.आई.-8777
एच.आई.-8663 (पोषण),
एच.डी.-4728 (पूसा मालवी)

गेहूँ की उच्च उत्पादन देने वाली किस्में

(चपाती एवं बिस्किट के लिए उपयुक्त)
नवीनतम चमत्कारी किस्म-एच.आई.-1650 (पूसा ओजस्वी)
लोक-1, जी.डब्ल्यू.-322, जी.डब्ल्यू.-513

गेहूँ की रिसर्च किस्में

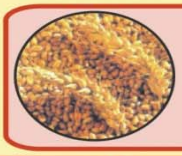

वेस्टन-11, वेस्टन सोना, महाराजा-711,
गौरव-721, प्रधान-1457, नगीना-712

रायडा (सरसों) मटर, मैथी, बरसीम, रजका, जीरा, प्याज बीज (फुरसुंगी), तथा सुरजना (ड्रम स्टीक) के उत्तम किस्मों के बीज उपलब्ध

सम्पर्क

वसुन्धरा™ सीड्स

एक नाम एक संकल्प
वसुन्धरा बायो-आर्गेनिक्स

52, राजस्व कालोनी, टंकी पथ,
उज्जैन-456010 (म.प्र.) फोन : (0734) 2530547
फैक्स : (0734) 2530547
मो. 93016-06161, 94253-32517
ई मेल- vasundharabio@yahoo.co.in

गोदाम एवं डिलेवरी का पता: बड़ी उद्योगपुरी, मक्सी रोड, महावीर तोल कांटे के पास, गोल्डन टाइम्स के सामने, उज्जैन (म.प्र.)

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान संपादक राजू गुर्जर द्वारा सर्वोदय प्रिंटिंग प्रेस, महाडिक की गोठ, जनक हॉस्पिटल के पीछे कम्पू रोड, लश्कर-ग्वालियर से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास दीनदयाल नगर ग्वालियर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: राजू गुर्जर. मोबा. 9425101132, 94245-22090